ISSN 0972-1746

विषविज्ञान संदेश

राजभाषा पत्रिका

अंक 29
अप्रैल-सितम्बर 2018-19

सीएसआईआर-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान
लखनऊ

Jh ;ksxh vkfnR;ukFk] ekuuh; eq[;ea=h] mÙkj çns'k] laLFkku dh Nekgh jktHkk"kk if=dk Þfo"kfoKku lans'kß dk vad 28 Þi;kZoj.k çnw"k.k fo'ks"kkadß dk foekspu djrs gq,] lkFk esa lh,lvkbZvkj&vkbZvkbZVhvkj ds funs'kd] çksQslj vkyksd /kou

सीएसआईआर–आईआईटीआर राजभाषा पत्रिका

विषविज्ञान संदेश

2018–19

सीएसआईआर–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

राजभाषा कार्यान्वयन समिति

प्रोफेसर आलोक धावन, निदेशक	अध्यक्ष
डॉ. पूनम कक्कड़, मुख्य वैज्ञानिक	राजभाषा अधिकारी
डॉ. देब प्रतिम कार चौधरी, मुख्य वैज्ञानिक	सदस्य
डॉ. योगेश्वर शुक्ला, मुख्य वैज्ञानिक	सदस्य
डॉ. देवेन्द्र परमार, मुख्य वैज्ञानिक	सदस्य
डॉ. कैलाश चन्द्र खुल्बे, वरिष्ठ प्रधान वैज्ञानिक	सदस्य
श्री निखिल गर्ग, वरिष्ठ प्रधान वैज्ञानिक	सदस्य
डॉ. नटेसन मणिक्कम, वरिष्ठ प्रधान वैज्ञानिक	सदस्य
श्री अनिल कुमार, प्रशासन नियंत्रक	सदस्य
श्री प्रदीप कुमार, प्रशासनिक अधिकारी	सदस्य
श्री बिष्णु कान्त मिश्रा, वित्त एवं लेखा अधिकारी	सदस्य
श्री सत्येन्द्र कुमार सिंह, भंडार एवं क्रय अधिकारी	सदस्य
श्री योगेन्द्र सिंह, वरिष्ठ अधीक्षक अभियन्ता (विद्युत)	सदस्य
श्री राज कुमार उपाध्याय, अधीक्षक अभियन्ता	सदस्य
श्री शीतला शंकर शुक्ला, अनुभाग अधिकारी (स्थापना–I)	सदस्य
श्री देवेश चन्द्र सक्सेना, अनुभाग अधिकारी, (स्थापना–II)	सदस्य
श्रीमती कुसुम लता, अनुभाग अधिकारी (सामान्य)	सदस्य
श्री विवेक श्रीवास्तव, सुरक्षा अधिकारी	सदस्य
श्री राकेश सिंह बिसेन, वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी (III)	सदस्य
श्री चन्द्र मोहन तिवारी, हिंदी अधिकारी	सचिव

संपादक मण्डल

प्रोफेसर आलोक धावन	संरक्षक
डॉ. आलोक कुमार पाण्डेय	संपादक
डॉ. (श्रीमती) ज्योत्स्ना सिंह	उप संपादक
डॉ. महेन्द्र प्रताप सिंह	सदस्य
डॉ. (श्रीमती) चेतना सिंह	सदस्य
डॉ. विकास श्रीवास्तव	सदस्य
डॉ. नीरज सतीजा	सदस्य
डॉ. मनोज कुमार	सदस्य
श्रीमती सुमिता दीक्षित	सदस्य
श्री राम नारायण	सदस्य
सुश्री निधि अरजरिया	सदस्य
श्री चन्द्र मोहन तिवारी	सदस्य

i dk'kd

lh,lvkbZvkj&Hkkjrh; fo"kfoKku vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ

विषविज्ञान भवन, 31, महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ–226001, उत्तर प्रदेश, भारत

i= 0;ogkj dk irk %&
funs'kd
lh,lvkbZvkj&Hkkjrh; fo"kfoKku vuqla/kku laLFkku
विषविज्ञान भवन, 31, महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ–226001, उत्तर प्रदेश, भारत
दूरभाष : (+91 522) 2613357, 2621856
फैक्स : (+91 522) 2628227
ई–मेल : director@iitrindia.org ; rpbd@iitrindia.org
वेबसाइट : www.iitrindia.org

if=dk ds lnHkZ esa leLr tkudkjh ds fy, Ñi;k laidZ djsa %&
MkW- vkyksd dqekj ik.Ms;
laiknd
राजभाषा पत्रिका ''विषविज्ञान संदेश'' एवं
वरिष्ठ वैज्ञानिक, नैनो मैटीरियल विषविज्ञान समूह
सीएसआईआर–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान
विषविज्ञान भवन, 31, महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ–226001, उत्तर प्रदेश, भारत
दूरभाष : +91–0522–2620107, 2620106, 2231172 एक्सटेंशन 672
फैक्स : +91–0522–2628227

eq[k i"B :Ik js[kk& Jh vyh dkSlj

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	विषय	पृष्ठ सं.
1	lh,lvkbZvkj&Hkkjrh; fo"kfoKku vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ esa jktHkk"kk dk;kZUo;u dh çxfr dk u, vk;ke कलीम उद्दीन	1
2	vuqikyu vkSj lqj{kk gsrq Docpls fof/k }kjk dhVuk'kdksa ds vo'ks"kksa dh [kk| inkFkksZ esa fuxjkuh अंशुमान श्रीवास्तव, मीनू सिंह, आदित्य पंकज, हर्षिता पांडेय एवं शीलेन्द्र प्रताप सिंह	5
3	ekbdkV,fDlu% tSfod çnw"k.k esa mifLFkfr अनुराग त्रिपाठी एवं अंकिता राय	10
4	fclfQu,y&, ¼chih,½ dk ekuo efLr"d ij nq"çHkko अंकित टंडन एवं रजनीश कुमार चतुर्वेदी	15
5	eVkckfyd fMlv,MZl ls mRiUu gkfudkjd chekfj;ksa dh jkdFkke esa [kk| inkFkksZ esa miyC/k okuLifrd&jlk;uksa dh çHkkoh Hkwfedk विवेक कुमार पाण्डेय, अल्पना माथुर एवं पूनम कक्कड़	22
6	dSalj ds f[kykQ U;wVªkL;qfVdYl ds lHkkfor mi;ksx% ,d c<+rk çfreku ईशु सिंह एवं योगेश्वर शुक्ला	27
7	xHkkZoLFkk ds nkSjku vklsfud fo"kkDrrk ds dkj.k tUe ysus okys cPpksa esa Ropk dSlj dh c<+rh lEHkkouk सिद्धार्थ गंगोपाध्याय, शगुन शुक्ला एवं विकास श्रीवास्तव	31
8	HkkjT; inkFkksZ esa vklsfud fo"kkärk rFkk ekbdkjkbtk dodksa }kjk bldk fujkdj.k जागृती शुक्ला, शायान मो, अपर्णा सिंह कुशवाहा एवं मनोज कुमार	35
9	uuksa d.kksa }kjk ikuh ls Hkkjh /kkrq fu"dklu फैमी फातिमा, अमृता सिंह, आदित्य कर एवं सत्यकाम पटनायक	40
10	tSoi"BlfØ;d ¼ck;kslQsZDVsUV½ % i;kZoj.k mipkj esa mi;ksfxrk विवेक कुमार गौड़, राज कुमार रेगर, संगम रजक एवं नटेसन मणिक्कम	45
11	fgeky; ds ikfjfLFkfrdh rU= ij tyok;q ifjorZu dk nq"çHkko मनोज कुमार	51
12	cpsa ruko ls ज्ञानेन्द्र मिश्र	56
13	i;kZoj.k esa c<+rs xShu gkml xSlksa dk mRltZu de djus esa ck;ks&bFksu,y bZaku dk ç;ksx % ,d ldkjkRed lksp वरुचा मिश्रा, आशुतोष कुमार मल्ल, अश्विनी दत्त पाठक व अभिषेक सिंह	62
14	miyfC/k;k¡ ,oa vk;kstu	67
15	laLFkku lf[k;ksa esa	70
16	ikBdksa ds Ik=	74
17	oSKkfud 'kCnkoyh	77

श्री राम नाईक, माननीय राज्यपाल, उत्तर प्रदेश को संस्थान की राजभाषा पत्रिका ''विषविज्ञान संदेश'' के ''पर्यावरण प्रदूषण विशेषांक'' को भेंट करते हुए सीएसआईआर-आईआईटीआर के निदेशक, प्रोफेसर आलोक धावन

श्री प्रभास कुमार झा, सचिव, राजभाषा विभाग को संस्थान की राजभाषा पत्रिका ''विषविज्ञान संदेश'' के ''पर्यावरण प्रदूषण विशेषांक'' भेंट करती हुई डॉ. (श्रीमती) पूनम कक्कड़, मुख्य वैज्ञानिक एवं श्री चन्द्र मोहन तिवारी, हिंदी अधिकारी

सीएसआईआर-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान
CSIR-INDIAN INSTITUTE OF TOXICOLOGY RESEARCH

वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद
COUNCIL OF SCIENTIFIC & INDUSTRIAL RESEARCH

izksQslj vkyksd /kkou
,Q ,u ,,l lh] ,Vh ,l] ,Q ,bZ ch] ,Q vkbZ ,u ,l

Professor Alok Dhawan
FNASc, ATS, FAEB, FINS
Director

lEiknd dh dye ls----

प्रिय पाठकों, हमारे संस्थान सीएसआईआर–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान की छमाही राजभाषा पत्रिका "विषविज्ञान संदेश" का यह अंक आपके समक्ष प्रस्तुत करते हुए मुझे अपार हर्ष की अनुभूति हो रही है।

इस पत्रिका के प्रकाशन का मुख्य उद्देश्य जैव एवं सूचना प्रौद्योगिकी के इस युग से संबंधित वैज्ञानिक अनुसंधान, औद्योगिक विकास, जैव विविधता, स्वास्थ्य सुरक्षा, जलवायु परिवर्तन, खाद्य एवं नैनोमैटीरियल विषाक्तता जैसे अध्ययनों की जानकारी को जन–जन तक पहुंचाना है। इन्हीं तथ्यों को ध्यान में रखते हुए इस अंक में अनुभवी वैज्ञानिकों और शोधकर्ताओं के लेख राजभाषा हिंदी में प्रस्तुत किए गए हैं, जिससे जनसामान्य विज्ञान के क्षेत्र की नवीनतम उपलब्धियों के प्रति जागृत व लाभान्वित हों ।

हमें आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है कि "विषविज्ञान संदेश" पत्रिका का प्रस्तुत अंक पाठकों को विज्ञान के क्षेत्र में किए जा रहे नवीनतम वैज्ञानिक अनुसंधानों से अवगत कराएगा। हमारा प्रयास है कि इस पत्रिका में प्रकाशित लेख वैज्ञानिक दृष्टिकोण से सूचनापरक, उपयोगी, ज्ञानवर्धक और उद्देश्यपूर्ण हों।

मैं इस पत्रिका के उज्ज्वल एवं सफल भविष्य की कामना करता हूँ।

¼vkyksd /kkou½

विषविज्ञान भवन, 31, महात्मा गाँधी मार्ग
पोस्ट बाक्स नं० 80, लखनऊ, उ.प्र., भारत
VISHVIGYAN BHAWAN, 31, MAHATMA GANDHI MARG
POST BOX NO 80, LUCKNOW-226001, U.P. INDIA
Phone:+91-522-2627586, 2614118, 2628228 Fax:+91-522-2628227, 2611547
director@iitrindia.org www.iitrindia.org

एनएबीएल द्वारा रासायनिक एवं जैविक परीक्षण हेतु प्रमाणित
Accredited by NABL for chemical and biological testing

विषाक्तता परीक्षण: जीएलपी अनुरूप सुविधा
Toxicity Testing: GLP Test Facility

l ikndh;

विज्ञान के क्षेत्र में नित्य नए बहुप्रौद्योगिकी एवं शोध के नए आयामों के फलस्वरूप सामयिक परिवर्तनों को राजभाषा हिंदी में प्रकट करना अपने आप में चुनौती है। हमारा संस्थान इस चुनौती का विगत कई वर्षों से निर्वहन कर रहा है और विज्ञान के क्षेत्र में तथा पर्यावरण के मानव जीवन पर पड़ने वाले प्रभावों की जानकारी हिंदी में प्रदान कर रहा है। इसी क्रम में छमाही राजभाषा पत्रिका "विषविज्ञान संदेश" के प्रकाशन का मुख्य उद्देश्य पाठकों को विषविज्ञान के क्षेत्र में नित्य हो रहे वैज्ञानिक अनुसंधान, प्रायोगिक विकास, जैव विविधता, स्वास्थ्य संबंधी जानकारियाँ, जलवायु परिवर्तन एवं इनके प्रभाव के साथ–साथ खाद्य पदार्थों एवं नैनो मटीरियल विषाक्तता तथा पर्यावारिक स्वास्थ्य संबंधी जानकारियाँ उपलब्ध कराना है।

वैज्ञानिक अनुसंधानों, उपलब्धियों और नवीनतम खोजों से जनसामान्य को राजभाषा हिन्दी के माध्यम से अवगत कराया जा रहा है। विगत कई वर्षों से यह पत्रिका अपने उत्कृष्ट लेखन, विषय सामग्री एवं सरल भाषा के माध्यम से आम जनता को बहुमूल्य जानकारी उपलब्ध करा रही है। इसके लिए भारत सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग के अधीन नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, लखनऊ (कार्यालय–3) द्वारा विगत कई वर्षों से विषविज्ञान संदेश पत्रिका को पुरस्कृत किया जा रहा है जो अपने आप में बड़ी उपलब्धि है। शोध कार्यों के व्यापक प्रचार–प्रसार में राजभाषा की सहभागिता तथा जनमानस की भागीदारी ही देश के विकास का मार्ग प्रशस्त कर सकती है।

पत्रिका में प्रस्तुत लेख, बीपीए का मस्तिष्क पर दुष्प्रभाव, जैवपृष्ठसक्रियकारक की पर्यावरण उपचार में उपयोगिता, नैनोपार्टिकल्स द्वारा पानी से भारी धातु निष्कासन, माइकोराइज़ा कवकों द्वारा आर्सेनिक का निराकरण, कैंसर के खिलाफ न्यूट्रास्युटिकल्स के संभावित उपयोग, मोटापे से उत्पन्न बीमारियों की रोकथाम में वानस्पतिक रसायनों की भूमिका आदि अत्यंत सरल एवं सुगम भाषा में प्रस्तुत किया गया है एवं हम आशा करते हैं कि ये लेख पाठकों के लिए अत्यंत रुचिकर एवं ज्ञानवर्धक होंगे।

हम इस संस्थान के निदेशक के बहुत आभारी हैं जिनके संरक्षण, मार्गदर्शन एवं कुशल नेतृत्व में इस पत्रिका का प्रकाशन संभव हो पाया है। इस पत्रिका से जुड़े प्रत्येक व्यक्ति एवं उन सभी सहयोगियों, वैज्ञानिकों, कर्मचारियों, लेखकों के प्रति मैं आभार व्यक्त करता हूँ, जिन्होंने अपने अथक परिश्रम से इस पत्रिका के प्रकाशन में सहयोग किया।

सद्भावनाओं सहित।

¼vkykd dekj ik.M;½

lh, lvkbvkj&Hkkjrh; fo"kfoKku vuqla/kku lLFkku] y[kuÅ esa jkt Hkk"kk dk;kZUo;u dh çxfr dk u, vk;ke

dyhe míhu

सीएसआईआर–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, विषविज्ञान भवन, 31, महात्मा गांधी मार्ग
लखनऊ–226001, उत्तर प्रदेश, भारत

निरंतर अथक प्रयास ही सफलता की ओर ले जाते हैं, यह कथन सीएसआईआर–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान में राजभाषा कार्यान्वयन की दिशा में प्राप्त सफलताओं के संबंध में सत्य सिद्ध हुआ है। राजभाषा के क्षेत्र में निरंतर किए गए प्रयासों से संस्थान ने राजभाषा कार्यान्वयन में अनेक सफलताएँ प्राप्त की हैं, कार्यालयी कार्यों में बेहतर प्रदर्शन, छमाही राजभाषा पत्रिका का प्रकाशन, हिंदी/द्विभाषी पत्राचार, हिंदी में वैज्ञानिक व्याख्यानों का आयोजन एवं कई राष्ट्रीय तथा अंर्तराष्ट्रीय वैज्ञानिक संगोष्ठियों का हिंदी माध्यम में सफलता पूर्वक आयोजन, संस्थान द्वारा जनसाधारण तक को वैज्ञानिक जानकारी पहुँचाने हेतु अधिक से अधिक सामग्री का हिंदी में प्रकाशन, संस्थान के वैज्ञानिकों द्वारा नियमित रूप से हिंदी समाचार पत्रों में वैज्ञानिक ज्ञानप्रद लेखों का प्रकाशन, दूरदर्शन, दूरदर्शन किसान चैनल एवं निजी टेलीविजन चैनलों पर स्वास्थ्य, जल, वायु एवं पर्यावरण एवं अन्य वैज्ञानिक विषयों से संबंधित हिंदी भाषा में प्रसारित होने वाले कार्यक्रमों में संस्थान की ओर से प्रतिभागिता करना जैसे अनेक कार्यों द्वारा संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन में निरंतर प्रगति कर रहा है। संस्थान में न केवल प्रशासनिक कार्यों में बल्कि वैज्ञानिक कार्यों में भी हिंदी का भरपूर प्रयोग किया जाता है। कई उल्लेखनीय कार्यों में से संस्थान की द्विभाषी वेबसाइट इसका एक उत्तम उदाहरण है। प्रशासनिक बैठकों के साथ–साथ वैज्ञानिक बैठकों में सरल हिंदी में चर्चा की जाती है। विज्ञान, प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हिंदी भाषा का प्रयोग एक चुनौतीपूर्ण कार्य है परंतु असंभव नहीं है, संस्थान ने उपर्युक्त कार्य द्वारा इसे संभव कर दिखाया है। संस्थान की हिंदी पत्रिका "विषविज्ञान संदेश" के निरंतर तीन अंकों 23–24, 25 एवं 26 को क्रमशः दिनांक 28–06–2016, 23–06–2017 एवं 25–11–2017 को प्रथम पुरस्कार प्राप्त हुए हैं। भारत सरकार, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (कार्यालय – 3), लखनऊ की भाकृअनुप – भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ में आयोजित बैठक के दौरान 61 सदस्य कार्यालयों में से कार्य के मूल्यांकन के आधार पर यह पुरस्कार प्रदान किए गए ।

श्री योगी आदित्यनाथ, माननीय मुख्यमंत्री, उत्तर प्रदेश सरकार (दाएँ) "विषविज्ञान संदेश" का विमोचन करते हुए तथा साथ में प्रोफेसर आलोक धावन, निदेशक, सीएसआईआर–आईआईटीआर।

इस पत्रिका में मुख्यतः संस्थान के कार्यकलापों को प्रकाशित किया जाता है। इसमें 90% से अधिक शोधपत्र एवं वैज्ञानिक लेख होते हैं, जो कि सरल, सहज एवं सुबोध हिंदी भाषा में होते हैं, जिससे जनसाधारण आसानी से इसका लाभ उठा सकते हैं। इस पत्रिका की अंतर्वस्तु विशेष रूप से उल्लेखनीय है। श्री योगी आदित्यनाथ, माननीय मुख्यमंत्री, उत्तर प्रदेश सरकार, ने संस्थान की छमाही राजभाषा पत्रिका "विषविज्ञान संदेश" के नवीनतम अंक 28, अक्टूबर – मार्च, वर्ष 2017–18 का विमोचन किया। इस अवसर पर माननीय मुख्यमंत्री जी ने कहा कि संस्थान द्वारा वैज्ञानिक उपलब्धियों को सरल हिंदी में प्रस्तुत करना एक उल्लेखनीय प्रयास है। इससे जनसाधारण को विज्ञान के क्षेत्र में नवीन अनुसंधानों की जानकारी मिल सकेगी ।

संस्थान को वार्षिक प्रतिवेदन वर्ष 2016–17 विशेष रूप से उल्लेखनीय है, इसका हिंदी और अंग्रेजी भाषा में अलग – अलग प्रकाशन किया गया। इसमें पर्यावरण विषविज्ञान, खाद्य, औषधि एवं रसायन विषविज्ञान, नैनोमैटीरियल विषविज्ञान, नियामक विषविज्ञान एवं प्रणाली विषविज्ञान

तथा स्वास्थ्य जोखिम मूल्यांकन क्षेत्र में इस अवधि में संस्थान द्वारा किए गए कार्यों की ज्ञानप्रद जानकारी के साथ–साथ संस्थान के कार्यकलापों की विस्तृत रूप से चर्चा की गई है ।

इनके अतिरिक्त प्रदर्शनी, मेलों आदि में ज्ञानवर्धक जानकारी प्रदान करने हेतु अनेक हिंदी / द्विभाषी पोस्टर, लघु पुस्तकें आदि भी प्रकाशित की जा चुकी हैं ।

oKkfud 'kCndks'k & संस्थान द्वारा विषविज्ञान एवं संबद्ध विज्ञान से संबंधित शब्दों पर एक अंग्रेजी–हिंदी वैज्ञानिक शब्दकोश का भी प्रकाशन किया गया है। इसमें विषविज्ञान एवं संबद्ध विज्ञान तथा संस्थान में होने वाले वैज्ञानिक कार्यों से संबंधित शब्दों के हिंदी पर्याय दिए गए हैं। Þçk;kfxd fof/k;k d rduhdh Kkuß पर भी एक पुस्तक प्रकाशित की गई है ।

हिंदी में कार्य करने हेतु डिजिटल टूल की उपलब्धता तथा नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (नराकास) के माध्यम से सरकारी प्रयासों एवं संस्थान के स्टाफ का हिंदी भाषा के प्रति लगाव के कारण राजभाषा कार्यान्वयन में महत्वपूर्ण प्रगति हुई है ।

यदि वर्ष 2018–19 की प्रथम तिमाही (01–04–2018 से 30–06–2018) के पत्राचार के आँकड़ों पर विचार करें तो उल्लेखनीय वृद्धि हुई है, जो कि निम्नवत हैं –

vof/k 01&04&2018 ls 30&06&2018			
{k=	fganh@f}Hkk"kh	vaxzsth	dqy i=ksa dh la[;k
d	**2147**	**13**	**2160**
[k	**173**	**07**	**180**
x	**282**	**14**	**296**
;ksx	**2602**	**34**	**2636**

इस अवधि में क,ख एवं ग क्षेत्र में हिंदी / द्विभाषी पत्राचार का प्रतिशत – 'क' क्षेत्र में 99.40 प्रतिशत एवं 'ख' क्षेत्र में 96.11 प्रतिशत तथा ग क्षेत्रों में 95.27 प्रतिशत रहा

vof/k 01&04&2018 ls 30&06&2018	
d {k= esa fganh i=kpkj	**99.40 %**
[k {k= esa fganh i=kpkj	**96.11 %**
x {k= esa fganh i=kpkj	**95.27%**
rhuksa {k= dk vkSlr	**98.71 %**

है तथा तीनों क्षेत्र का औसत प्रतिशत 98.71% रहा है। यह दर्शाता है कि निकट भविष्य में राजभाषा कार्यान्वयन में शत – प्रतिशत का लक्ष्य प्राप्त करना अब दूर नहीं है।

उपर्युक्त आंकड़ों से स्पष्ट है कि संस्थान में हिंदी/द्विभाषी पत्राचार की स्थिति काफी बेहतर है, लक्ष्य प्राप्ति के बिल्कुल निकट है, यह दर्शाता है कि राजभाषा कार्यान्वयन हेतु गंभीर प्रयास किए जा रहे हैं। साथ ही यह भी सिद्ध होता है कि वैज्ञानिक संस्थान में हिंदी पत्राचार में कोई कठिनाई नहीं है ।

वर्ष 2018–19 की प्रथम तिमाही (01–04–2018 से 30–06–2018) में धारा 3(3) के अंतर्गत 173 कागजात जारी हुए हैं जो कि सभी हिंदी/द्विभाषी हैं ।

फाइलों पर 488 टिप्पणी हिंदी में लिखी गई हैं, जबकि मात्र 32 टिप्पणी अंग्रेजी में लिखी गई हैं ।

vof/k 01&04&2018 ls 30&06&2018			
	fganh@f}Hkk"kh	vaxzsth	dqy
/kkjk **3(3)**	**199**	**0**	**199**
fVIi.kh	**488**	**32**	**520**

यदि प्रतिशत के रूप में देखें तो 93.85% हिंदी में लिखी गई हैं जबकि हिंदी टिप्पणियों का लक्ष्य 75% है। मात्र 6.15% टिप्पणियाँ ही अंग्रेजी में लिखी गई हैं। एक वैज्ञानिक संस्थान में हिंदी कार्यान्वयन की दिशा में यह प्रगति उल्लेखनीय है ।

सीएसआईआर – भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ को कार्यालयी कार्य राजभाषा हिंदी में उत्कृष्ट रूप से करने हेतु क्रमशः दिनांक 16–12–2016 को प्रथम, 23–06–2017 को द्वितीय एवं 25– 11–2017 को द्वितीय पुरस्कार प्राप्त हुआ है । भाकृअनुप – भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ के निदेशक एवं अध्यक्ष, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति कार्यालय – 3 , लखनऊ ने पुरस्कार प्रदान करते हुए कहा था कि वैज्ञानिक संस्थान होने के बावजूद कम समय में भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ ने हिंदी में जो कार्य किया वह अन्य सभी कार्यालयों हेतु अनुकरणीय उदाहरण है।

संस्थान में समृद्ध पुस्तकालय है जिसमें विज्ञान सहित विभिन्न विषयों से संबंधित लगभग 866 हिंदी की पुस्तकें उपलब्ध हैं। पर्यावरण एवं धर्म पर विशेष संग्रह उपलब्ध

है। पुस्तकालय में हिंदी भाषा की पुस्तकों के लिए विशेष व्यवस्था की गई है। हिंदी पुस्तकों के अध्ययन हेतु एक विशेष पटल है। इस पर विभिन्न प्रमुख पुस्तकें प्रतिदिन रखी जाती हैं। अनेक स्टाफ सदस्य एवं शोध छात्र प्रतिदिन इस हिंदी पटल पर पुस्तकों का अध्ययन कर लाभ उठाते हैं।

वैज्ञानिक कार्यों को राजभाषा में करने हेतु प्रोत्साहन देने एवं ज्ञानवर्धन हेतु संस्थान में समय–समय पर वैज्ञानिक व्याख्यान आयोजित किए जाते हैं, इसी क्रम में ''हिंदी में डिजिटल टूल्स के प्रयोग'' पर व्याख्यान का आयोजन किया गया। इस अवसर पर श्री आशीष कुमार अग्रवाल, वरिष्ठ तकनीकी निदेशक, राष्ट्रीय सूचना विज्ञान केंद्र, लखनऊ ने ''हिंदी में डिजिटल टूल्स के प्रयोग'' पर व्याख्यान दिया। उन्होंने कहा कि कम्प्यूटर की आधार भाषा अंग्रेजी है, परंतु हिंदी में कार्य करने के लिए अनेक टूल्स उपलब्ध हैं, जिनका उपयोग कर हम हिंदी में आसानी से कार्य कर सकते हैं। व्याख्यान में यूनीकोड टाइपिंग टूल, गूगल वाइस टाइपिंग, ऑनलाइन फांट परिवर्तन, मंत्रा, ई महाशब्दकोश, डेटा बेस, मशीन ट्रांसलेशन, वैज्ञानिक लेखों का अनुवाद सहित विभिन्न डिजिटल टूल्स के प्रयोग के संबंध में विस्तृत जानकारी दी गई ।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (कार्यालय–3), लखनऊ की बैठकों में निदेशक, प्रशासन नियंत्रक एवं हिंदी अधिकारी नियमित रूप से भाग लेते हैं। संस्थान में राजभाषा कार्यान्वयन समिति की तिमाही बैठकों का नियमित रूप से आयोजन किया जाता है। संस्थान के सभी कम्प्यूटरों पर यूनीकोड में हिंदी में कार्य करने की सुविधा है। राजभाषा कार्यान्वयन में डिजिटल टूल्स का भरपूर प्रयोग किया जाता है। वैज्ञानिक, तकनीकी एवं प्रशासनिक स्टाफ हेतु हिंदी डिजिटल टूल्स के बारे में नियमित कार्यशालाओं का आयोजन किया जाता है ।

jktHkk"kk foHkkx dh rduhdh laxks"Bh esa çLrqrhdj.k gsrq vkea=.k & सीएसआईआर – भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ को 26 अगस्त, 2016 को अमृतसर में उत्तर क्षेत्र I एवं II की तकनीकी संगोष्ठी में हिंदी में किए गए कार्यों पर प्रस्तुति देने हेतु आमंत्रित किया गया। प्रस्तुति के उपरांत सीएसआईआर – आईआईटीआर के राजभाषा कार्यान्वयन कार्य की सराहना की गई ।

varjjk"Vªh; oSKkfud laxks"Bh Þi;kZoj.k çnw"k.k % pqukSfr;kWa ,oa j.kuhfr;kWaß 11&13 vDVwcj] 2017 dks lEiUu foooj.k : सीएसआईआर – भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ एवं नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, कार्यालय – 3, लखनऊ के संयुक्त तत्त्वावधान में अंतर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक संगोष्ठी "पर्यावरण प्रदूषण : चुनौतियाँ एवं रणनीतियाँ" 11–13 अक्टूबर, 2017 को हिंदी माध्यम में आयोजित की गई। संगोष्ठी में संपूर्ण कार्यवाही हिंदी में हुई। संगोष्ठी में वैज्ञानिकों ने सरल, सुबोध एवं सुग्राह्य हिंदी में विभिन्न विषयों पर चर्चा किया। इस अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठी में यह विचार किया गया कि प्रदूषण न हो यह अच्छी बात है, यदि प्रदूषण है तो उसे कैसे दूर करें यह चिंता की बात है। पर्यावरण प्रदूषित हो रहा है, इसकी जानकारी लगभग सभी को है, परंतु प्रदूषण को कैसे दूर किया जाए, यही विचार करना है। शहरों में वाहन कम कर दिए जाएं या बंद कर दिए जाएं, कारखाने बंद कर दिए जाएं, इससे काम नहीं होगा, ऐसे समाधानों से कार्य नहीं होगा, प्रदूषण दूर करने हेतु वैज्ञानिक समाधान ढूँढना होगा। पर्यावरण प्रबंधन की चुनौती का वैज्ञानिक समाधान खोजना होगा। अमरीका में कचरे से ऊर्जा बनाई जा रही है, ऐसे ही समाधान खोजने होंगे। इस संगोष्ठी के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण की जानकारी हिंदी भाषा में आम आदमी तक पहुंचाने के लिए एक सशक्त प्रयास किया गया। इस संगोष्ठी में सीएसआईआर की प्रयोगशालाओं, अनुसंधान एवं विकास संस्थानों, विश्वविद्यालयों एवं विदेशों से 100 से अधिक वैज्ञानिकों, शोध छात्रों ने प्रतिभागिता कर अपने लेख तथा शोधपत्र प्रस्तुत किए। इसके अतिरिक्त हिंदी में पोस्टर प्रस्तुति सत्र भी आयोजित किया गया ।

lh,lvkbZvkj&vkbZvkbZVhvkj dh osclkbV

संस्थान की वेबसाइट पूर्णतया द्विभाषी है जो कि समय–समय पर नियमित रूप से अद्यतन होती रहती है।

संस्थान के प्रकाशनों में अधिक से अधिक हिंदी का प्रयोग किया जाता है ताकि भाषा सरल एवं सहज रूप में हो और आम जनता को हमारे वैज्ञानिक तथा तकनीकी विषयों के बारे में पर्याप्त रूप से जानकारी प्राप्त हो सके। संस्थान में अद्यतन सूचना प्रौद्योगिकी सुविधाएं, हिंदी में कार्य करने हेतु उपलब्ध डिजिटल टूल : यूनीकोड टाइपिंग टूल, गूगल वाइस टाइपिंग, ऑनलाइन फांट परिवर्तन, मंत्रा, ई महाशब्दकोश, डेटा बेस, मशीन

lh,lvkbvkj&vkbvkbVhvkj dh oc lkbV

ट्रांसलेशन, वैज्ञानिक लेखों का अनुवाद आदि से वैज्ञानिक तथा तकनीकी विषयों में हिंदी का प्रयोग करना और भी आसान हो गया है।

हर्ष की बात है कि सीएसआईआर–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ ने आम जनता को वैज्ञानिक तथा तकनीकी विषयों के बारे में हिंदी में जानकारी देने हेतु काफी कार्य किया है और निकट भविष्य में संस्थान के कार्यकलापों से संबंधित और पुस्तकों का हिंदी भाषा में प्रकाशन प्रस्तावित है। उच्च अधिकारियों द्वारा हिंदी कार्यान्वयन कार्य की निरंतर निगरानी, आवश्यक दिशा–निर्देश जारी करना एवं इससे संबंधित सुविधाएं उपलब्ध कराने तथा स्टाफ के सहयोग से संस्थान में राजभाषा हिंदी कार्यान्वयन में अच्छी प्रगति हुई है परंतु इस हेतु निरंतर प्रयास करते रहना है जिससे कि राजभाषा कार्यान्वयन के शत–प्रतिशत लक्ष्य को यथाशीघ्र प्राप्त किया जा सके।

vxj fgUnLrku dk lpep vkxs c<uk g] rk pkg dkbZ eku ;k u eku] jk"VHkk"kk rk fgUnh gh cu ldrh g] D;kfd tks LFkku fgUnh dk çkIr g] og fdlh vkj Hkk"kk dk ugh fey ldrk--

&jk"Vfirk egkRek xk/kh

vuqikyu vkSj lqj{kk gsrq Dopsp lZ fof/k }kjk dhVuk'kdksa ds vo'ks"kksa dh [kk| inkFkksZa esa fuxjkuh

v'kqeku JhokLro] ehuw flag] vkfnR; iadt] gf"kZrk ik.Ms; ,oa 'khyUæ çrki flag

खाद्य, औषधि एवं रसायन विषविज्ञान समूह

सीएसआईआर–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, विषविज्ञान भवन, 31, महात्मा गांधी मार्ग,

लखनऊ–226001, उत्तर प्रदेश, भारत

विश्व में बढ़ते खाद्य पदार्थों की मांग को पूरा करने के लिए एवं गुणवत्ता और कृषि उत्पादकता को बढ़ाने के लिए कीटनाशकों का प्रयोग निरंतर बढ़ता जा रहा है। कृषि क्षेत्र में कीटनाशकों के व्यापक और अनियमित उपयोग से खाद्य वस्तुओं में कीटनाशक अवशेषों की संभावना बढ़ जाती है, जो मानव स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हो सकता है। इसलिए उपभोक्ताओं की सुरक्षा का मूल्यांकन करने और मानव एक्सपोजर का उचित आंकलन करने के लिए कीटनाशकों के अवशेषों का विश्लेषण अनिवार्य है। वर्तमान अध्ययन में, संशोधित क्वेचर्स विधि का प्रयोग करके सब्जी, अनाज और फलों जैसे विभिन्न खाद्य पदार्थों में विभिन्न कीटनाशकों के अवशेषों का विश्लेषण गैस क्रोमैटोग्राफी और गैस क्रोमैटोग्राफी मास स्पेक्ट्रोमेट्री द्वारा किया गया है। संशोधित क्वेचर्स विधि में हमने एसिटोनाइट्रिल के स्थान पर इथाईल एसीटेट का प्रयोग किया है जो कि नमूना तैयार करने तथा गैस क्रोमैटोग्राफी विश्लेषण के लिए ज्यादा उपयुक्त है। इस विधि में 10 ग्राम नमूने के निष्कर्षण के लिए 1 ग्राम सोडियम क्लोराइड, 4 ग्राम मैग्नीशियम सल्फेट का प्रयोग किया गया है तथा नमूने के क्लीनअप के लिए 150 मिली ग्राम मैग्नीशियम सल्फेट (नमी की मात्रा को दूर करने के लिए), 100 मिली ग्राम प्राथमिक माध्यमिक अमीन्स (शर्करा, फैटी एसिड, कार्बनिक अम्ल को हटाने के लिए) तथा 10 मिली ग्राम सक्रिय चारकोल (पिगमेंट्स को हटाने के लिए) प्रयोग किया गया है। यह विधि विभिन्न प्रकार की सब्जियां, अनाज और फलों में कीटनाशक के सफल परीक्षण हेतु उपयुक्त है। परिणाम दर्शाते हैं कि इस विधि से आर.एस.डी <20% के साथ 70–120% की स्वीकार्य मात्रात्मक रिकवरी हासिल हुई है जो रेगुलेटरी दिशा निर्देशों के अनुरूप है। वर्तमान समय में सीएसआईआर–आईआईटीआर में विभिन्न सब्जियों, अनाज और फलों के नमूनों में विभिन्न कीटनाशकों (ऑर्गेनोक्लोरीन, ऑर्गेनोफॉस्फेट, सिंथेटिक पायरेथ्रॉइड और हर्बीसाईड) के अवशेषों का विश्लेषण प्रस्तावित विधि द्वारा सफलता पूर्वक किया जा रहा है।

कीटनाशकों को आधुनिक खेती का एक महत्वपूर्ण घटक माना जाता है, खाद्य पदार्थों के भण्डारण, उच्च कृषि उत्पादकता, खाद्य पदार्थों की बढ़ती मांग को पूरा करने तथा कीटों के रोकथाम के लिए कीटनाशकों का व्यापक उपयोग किया जाता है। सब्जियों तथा फलों की खेती के दौरान फसलों की सुरक्षा के लिए कीटनाशकों की एक विस्तृत श्रृंखला का विश्व स्तर पर इस्तेमाल किया जाता है। उपलब्ध तथ्यों तथा विभिन्न अनुसंधान से पता चलता है कि कुछ खाद्य पदार्थों में कीटनाशकों के अवशेष अपने संबंधित अधिकतम अवशेष सीमा (एम.आर.एल.) से ऊपर होते हैं जो कि मानव स्वास्थ्य संबंधी विभिन्न विषाक्त प्रभाव के मुख्य कारक हैं। पारम्परिक कृषि में कीटनाशकों के उपयोग को कम करने के लिए वर्तमान में कई देशों में शोध कार्य प्रारम्भ किये गये हैं। कीटनाशकों के जहरीले प्रभाव के कारण अब कई प्रमुख खाद्य उत्पादक, निर्यातक, आयातक और खुदरा विक्रेता भोजन की अच्छी गुणवत्ता पर ध्यान केंद्रित कर रहे हैं। वर्तमान में खाद्य पदार्थो को लेकर बढ़ती जागरूकता तथा लोगो की बढ़ती उम्मीदों को पूरा करने के लिए, कई सरकारी और निजी प्रयोगशालाएं कीटनाशक अवशेषों के विश्लेषण हेतु आधुनिक और वैज्ञानिक तरीकों का प्रयोग कर रही हैं। उपभोक्ताओं के लिए खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने और मानव स्वास्थ्य की रक्षा के लिए, कई संगठनों और दुनिया भर के देशों ने खाद्य पदार्थो में कीटनाशकों के लिए एम.आर.एल. की स्थापना की है। एम.आर.एल. एक कीटनाशक अवशेष का अधिकतम स्तर है जिसे कानूनी रूप से खाद्य पदार्थो पर अनुमति दी जाती है। इसलिए उपभोक्ताओं की सुरक्षा तथा खाद्य पदार्थो की गुणवत्ता का मूल्यांकन करने और मानव एक्सपोजर का उचित आंकलन करने के लिए कीटनाशक के अवशेषों का विश्लेषण जरूरी है। क्वेचर्स विधि खाद्य पदार्थों में कीटनाशकों के विश्लेषण के लिये अत्यंत ही उपयुक्त विधि है। इस विधि द्वारा कीटनाशकों के विश्लेषण हेतु नमूनों को तैयार करने में कम समय लगता है और

प्रभावशाली परिणाम प्राप्त होते हैं। इस विधि को विश्व भर में विभिन्न कीटनाशक विश्लेषकों ने स्वीकार किया है।

dhVuk'kd vkj mudk oxhdj.k

कीटनाशक प्राकृतिक या सिंथेटिक एजेंट हैं जिनका उपयोग अवांछित कीटों या खरपतवार को मारने के लिए किया जाता है। कीटनाशक, कीट द्वारा की जाने वाली क्षति को रोकने, तथा कीटों को नष्ट करने, दूर भगाने अथवा कम करने वाला पदार्थ अथवा पदार्थों का मिश्रण होता है।

बहुत से कीटनाशक मानव के लिए जहरीले होते हैं। सरकार ने कुछ कीटनाशकों पर प्रतिबंध लगा दिया है जबकि अन्य के इस्तेमाल को विनियमित (रेगुलेट) किया गया है। कीटनाशक की उपयोगिता के आधार पर उन्हें कई प्रकार से बांटा गया है, जिसमें यह निर्भर करता है कि कौन सा कीटनाशक किस कीट से फसलों में क्षति होने से रोकने में सक्षम है।

- ऑर्गेनोफॉस्फेट कीटनाशी (फोरेट, क्लोरपैरिफॉस, एथिऑन, आदि)
- कार्बामेट कीटनाशी (कार्बारिल, एसीटामिप्रिड, थिआक्लोप्रिड, आदि)
- ऑर्गेनोक्लोरीन कीटनाशी (डाइकोफॉल, एंडोसल्फान, एंडोसल्फान सलफेट, आदि)
- पायरेथ्रोइड कीटनाशी (बाईफेन्थ्रिन, डेल्टामैथ्रिन, फेनप्रोपैथ्रिन, आदि)
- हर्बिसाइड्स (एलाक्लोर, ब्यूटाक्लोर , फ्लूक्लोरिलीन, आदि)

dhVuk'kd d; ykHk

आमतौर पर यह माना जाता है कि उपयुक्त मात्रा में रसायनिक खाद एवं कीटनाशक इस्तेमाल करने से उत्पादन बढ़ाया जा सकता है और उत्पादन बढ़ने से किसान का मुनाफा बढ़ सकता है। सरकार भी किसानों को वैज्ञानिक ढंग से खेती करने की सलाह देती है, लेकिन इस वैज्ञानिक विधि का अर्थ सिर्फ और सिर्फ रसायनिक खाद और कीटनाशकों के इस्तेमाल तक ही सीमित होता है। कीटनाशक कीटों द्वारा फसल को होने वाले नुकसान से बचाता है, जिससे खाद्य पदार्थों की पैदावार बढ़ जाती है और फसलों का नुकसान कम होता है।

i;koj.k rFkk ekuo LokLF; ij dhVuk'kd dk çHkko

आधुनिक कृषि में कीटनाशक का प्रयोग व्यापक रूप से किया जाता हैं। अधिक मात्रा में कीटनाशक के प्रयोग से वायु, जल तथा मृदा में प्रदुषण की मात्रा बढ़ जाती हैं। कीटनाशक जल तथा मृदा प्रदूषण के संभावित कारणों में से एक हैं। इसके अलावा, कीटनाशकों का उपयोग जैव विविधता को कम करता है और परागण के गिरावट में इसका मुख्य योगदान है। कीटनाशकों के साथ काम करने वाले लोगों में तीव्र और देरी से स्वास्थ्य प्रभाव हो सकता है। स्वास्थ्य समस्याओं का खतरा न केवल कीटनाशक पर निर्भर करता है, बल्कि कीटनाशक के अनावरण की मात्रा पर भी निर्भर करता है। इसके अलावा, बच्चे, गर्भवती महिलायें और बीमार या बूढ़े लोग सामान्य की तुलना में कीटनाशक के प्रभावों के प्रति अधिक संवेदनशील हो सकते हैं (चित्र 1)।

चित्र 1: मानव शरीर पर कीटनाशक का प्रभाव

(i) कीटनाशकों के एक्सपोजर का तीव्र (एक्यूट) प्रभावः– कीटनाशकों को नियंत्रित करने वाले श्रमिकों में गंभीर स्वास्थ्य समस्याएं हो सकती हैं, जैसे पेट दर्द, चक्कर आना, सिरदर्द, उल्टी, गले में संक्रमण साथ ही त्वचा और आंख की समस्याएं। आमतौर पर कीट प्रबंधन में बिना किसी सुरक्षा संयंत्रों के कीटनाशकों का उपयोग करने से ये समस्याएं बढ़ जाती हैं।

(ii) लंबे समय तक कीटनाशकों के एक्सपोजर का प्रभावः– कीटनाशकों के अनियमित इस्तेमाल तथा इनके संपर्क में ज्यादा रहने से स्वास्थ्य पर कई प्रकार के गंभीर और विपरीत प्रभाव देखने को मिलते हैं जिनमे कैंसर, प्रजनन सम्बंधित समस्या, गुर्दे तथा यकृत का खराब होना तथा तंत्रिका तंत्र पर दुष्प्रभाव शामिल हैं।

Dokp lZ fof/k }kjk dhVuk'kdksa dk fo'ys"k.k

खाद्य पदार्थो में कीटनाशक अवशेषों के जोखिम के निर्धारण के लिए एक संवेदनशील, अपरिवर्तनीय, और मजबूत विधि के विकास में नमूनों को तैयार करना/क्लीनअप करना बहुत महत्वपूर्ण है। क्वेचर्स निष्कर्षण विधि पहली बार 2003 में एस लोहोटे और एम अनास्तासिएड्स द्वारा विकसित की गई थी। मूल क्वेचर्स, फलों और सब्जियों में कीटनाशकों के लिए एक निष्कर्षण विधि के रूप में विकसित किया गया था, जिसमें एक फैलाव ठोस चरण निष्कर्षण (डीएसपीई) सफाई विधि है, जो शर्करा, लिपिड, कार्बनिक अम्ल, स्टेरोल, प्रोटीन, पानी और वर्णक को नमूनों से हटाने में मदद करता है। कई कीटनाशक अवशेष विश्लेषकों द्वारा क्वेचर्स विधि स्वीकार कर लिया गया है। मूल विधि में विभिन्न प्रकार के संशोधन किये गये है जिससे क्रोमैटोग्राफी प्रतिक्रिया में और विस्तार हुआ है तथा पीएच–आश्रित यौगिकों और एसिड–बेस कीटनाशकों के कुशल निष्कर्षण में सरलता हुई है।

वर्तमान अध्ययन में, क्वेचर्स (त्वरित, आसान, सस्ता, प्रभावी, मजबूत और सुरक्षित) विधि द्वारा विभिन्न खाद्य पदार्थों में मल्टीक्लास (ऑर्गेनोफॉस्फेट्स, ऑर्गेनोक्लोरीन और सिंथेटिक पायथ्रोइड्स) कीटनाशक अवशेषों के एक साथ विश्लेषण के लिए एक सरल, प्रभावी, और धुतगामी गैस क्रोमैटोग्राफी–टैन्डम मास स्पेक्ट्रोमेट्री विधि को विकसित किया गया है। क्वेचर्स विधि को दो आसान चरण में विभाजित किया गया है

çFke & नमूने के निष्कर्षण के लिए 1 ग्राम सोडियम क्लोराइड, 4 ग्राम मैग्नीशियम सल्फेट का प्रयोग किया गया है।

f}rh; & नमूने के क्लीनअप के लिए 150 मिली ग्राम मैग्नीशियम सल्फेट , 100 मिली ग्राम प्राथमिक माध्यमिक अमीन्स तथा 10 मिलीग्राम सक्रिय चारकोल प्रयोग किया गया है (चित्र 2)।

क्रम स°	Dokp lZ विधि में iz;qDr होने वाले तत्त्व	कार्य
1.	मैग्नीशियम सल्फेट	नमी की मात्रा को दूर करने के लिए
2.	सोडियम क्लोराइड	इमल्शन तोड़ने के लिए
3.	प्राथमिक माध्यमिक अमीन्स	शर्करा, फैटी एसिड, कार्बनिक एसिड को हटाने के लिए
4.	सी-18	वसा हटाने के लिए
5.	सक्रिय चारकोल	पिगमेंट्स को हटाने के लिए

चित्र 2: कीटनाशक विश्लेषण हेतु क्वेचर्स प्रक्रिया

dhVuk’kd mi;kx d rjhd

कीटों के प्रबंधन में कीटनाशकों का सही प्रयोग एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। कीटनाशकों के प्रयोग से पहले उनकी सही जानकारी अत्यंत आवश्यक है तथा इन बातों का भी ध्यान रखना जरूरी है कि कौन सा कीटनाशक किस कीट के लिए ज्यादा प्रभावशाली है और किस विधि द्वारा कीटनाशक के छिड़काव से हमें कम से कम कीटनाशक इस्तेमाल से अधिकतम प्रभाव प्राप्त होते हैं। सभी कीटनाशक जहरीले पदार्थ हैं जो कार्यरत व्यक्ति के स्वास्थ्य पर सीधे प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं। कीटनाशकों के छिड़काव में इस्तेमाल होने वाले संयंत्रों का सही प्रयोग कर हम कीटनाशक से होने वाले दुष्प्रभावों से बच सकते हैं। अतः ये आवश्यक हैं कि कीटनाशकों का फसलों पर सही समय और सही मात्रा में छिड़काव किया जाये ताकि उनके प्रतिकूल प्रभावों से बचा जा सके।

xyr rjhdk   lgh rjhdk

चित्र 3: कीटनाशक प्रयोग के गलत और सही तरीके

dhVuk’kdk d ljf{kr :i l feJ.k vkj bLreky dju d fn’kkfun’k

- कीटनाशक के सुरक्षित मिश्रण में पहला अहम कदम हमेशा कीटनाशक के लेबल को सही तरीके से पढ़ना और दिए गये निर्देशों का पालन करना है।
- केवल अधिकृत कीटनाशक संचालक या पर्यवेक्षक को मिश्रण और लोडिंग क्षेत्र में होना चाहिए। सभी संचालक उचित व्यक्तिगत सुरक्षा उपकरण (पीपीई) पहने होने चाहिए। कोई अन्य व्यक्ति और कोई जानवर नहीं होना चाहिए। कभी भी अपने हाथों से कीटनाशकों को नहीं मिलायें।
- कीटनाशकों के छिड़काव के समय आँख, नाक, और त्वचा को ढक के रखना चाहिए और उचित उपकरणों का प्रयोग करना चाहिए, जिससे कीटनाशक के कम इस्तेमाल से ही उचित परिणाम मिले।
- यदि कीटनाशक आपके ऊपर गलती से गिर जाये तो तुरंत अपने कपड़ों को हटा दें और जल्द ही उसे पूरी तरह धो लें।
- हमेशा सुरक्षात्मक चश्मों और दस्तानों का उपयोग करें।
- कीटनाशक को मिश्रित और छिड़काव करने के बाद उपकरणों और इस्तेमाल किये गए बर्तनों को डिटर्जेंट से अच्छी तरह धो लेना चाहिए फिर इसे हवा मे सुखा दें और इसे स्टोर करें।

dhVuk'kd fo'ys"k.k e lh,l vkbZvkj&vkbZvkbZVhvkj dk ;kxnku

वैश्विक खाद्य मांग को पूरा करने के लिए गुणवत्ता और कृषि उत्पादकता में वृद्धि के लिए आजकल कृषि क्षेत्र में कीटनाशक का उपयोग आवश्यक हो गया है। आवश्यक इनपुट हैं। कृषि क्षेत्र में कीटनाशकों का व्यापक उपयोग, उनके हानिकारक उपयोग और प्रतीक्षा अवधि के खराब अनुपालन में खाद्य वस्तुओं में कीटनाशकों के अवशेषों की संभावना बढ़ जाती है, जो कि मानव स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हो सकती हैं। इसलिए कीटनाशक अवशेषों का विश्लेषण उपभोक्ताओं की सुरक्षा और मानव जोखिम के उचित मूल्यांकन के बारे में उपभोक्ताओं की सुरक्षा का मूल्यांकन करना महत्वपूर्ण है।

स्थापना के बाद से, सीएसआईआर–आईआईटीआर अलग–अलग खाद्य वस्तुओं में कीटनाशक अवशेष विश्लेषण के क्षेत्र में सक्रिय रूप से शामिल है। इसके अलावा, संस्थान राष्ट्रीय परियोजना 'राष्ट्रीय स्तर पर कीटनाशक अवशेषों की निगरानी' (एम.पी.आर.एन.एल.) में सक्रिय रूप से 2006 से शामिल है। इस परियोजना के तहत, विभिन्न खाद्य वस्तुओं, सब्जियां, फल, अनाज और दालें भारत के उत्तरी क्षेत्र से एकत्रित किये जाते हैं तथा एन.ए.बी.एल. / एन.ए.बी.एल. अनुपालन मोड के अनुसार उनमे कीटनाशक अवशेष विश्लेषण किया जाता है। इस संस्थान द्वारा सम्मिलित किए गए क्षेत्र लखनऊ, फैजाबाद, गोरखपुर, इलाहाबाद, कानपुर, सीतापुर, वाराणसी, बाराबंकी, कन्नौज, उन्नाव, और मोरादाबाद हैं। एम.पी.आर.एन.एल. योजना के तहत, विभिन्न वर्गों से संबंधित कीटनाशक जैसे ऑर्गेनोक्लोरीन (ओसी), ऑर्गनोफॉस्फेट (ओपीएस), कृत्रिम पायरेथ्रोइड (एसपी) और हर्बीसाइड्स का विश्लेषण नमूना तैयार करने की तकनीक के रूप में क्वेचर्स विधि का उपयोग करके लगभग 8000 से अधिक नमूनों का विश्लेषण किया गया है और लगभग 3–4% नमूनों में कीटनाशकों की मात्रा मानकों से अधिक पायी गयी है। इन अध्ययनों से कीटनाशकों के अवशेषों पर उत्पन्न जानकारी पर्यावरण और उपभोक्ता स्वास्थ्य की रक्षा के लिए देश में विभिन्न खाद्य वस्तुओं के लिए अधिकतम अवशेष स्तर (एम.आर.एल.) तैयार करने में सहायक है। इसके अलावा, विभिन्न खाद्य फसलों के लिए क्षेत्र में कीटनाशकों के न्यायिक उपयोग के लिए किसानों और राज्य प्राधिकरणों को सलाह जारी करने के लिए भी उपयोगी है।

कृषि कार्यो को और बेहतर बनाने तथा मानव स्वास्थ्य पर कीटनाशकों के विपरीत प्रभाव को रोकने के लिये यह आवश्यक है कि खाद्य पदार्थो में कीटनाशकों की नियमित निगरानी की जाये। इस अध्ययन में, खाद्य पदार्थो में कीटनाशकों के अवशेषों के स्तर की जांच की गई हैं। क्वेचर्स विधि एक सरल, सस्ती और प्रभावशाली नमूना तैयार करने की विधि हैं। इस विधि द्वारा तैयार नमूने क्रोमैटोग्राफी एनालिसिस तथा कीटनाशकों के प्रभावशाली विश्लेषण के लिये उपयुक्त हैं। सीएसआईआर–आईआईटीआर इस दिशा में लगातार वर्ष 2006 से कार्य कर रहा है। अभी तक हमारे द्वारा किये गये अध्ययन में लगभग 3–4% खाद्य पदार्थ नमूनों में कीटनाशक की मात्रा मानकों से अधिक पायी गयी है।

ekbdkV,fDlu% tfod ç.kkyh e mifLFkfr

vujkx f=ikBh ,o vfdrk jk;

खाद्य, औषधि एवं रसायन विषविज्ञान समूह,
सीएसआईआर–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, विषविज्ञान भवन, 31, महात्मा गांधी मार्ग,
लखनऊ–226001, उत्तर प्रदेश, भारत

फसल और संग्रहित अनाजों में कवक संक्रमण के फलस्वरूप माध्यमिक (सेकेण्डरी) विषैले मेटाबोलाइट्स बनते है, जिन्हें आमतौर पर माइकोटॉक्सिन के रूप मे संदर्भित किया जाता है। माइकोटॉक्सिन मानव और पशु स्वास्थ्य पर अपने दुष्प्रभावों के कारण खाद्य सुरक्षा के मुददों में मुख्य चिंता का विषय है। खाद्य तथा कृषि संगठन (एफएओ) के अनुसार यह अनुमान लगाया गया है कि विश्व की लगभग 25% खाद्य फसलें माइकोटॉक्सिन से दूषित होती हैं (एफएओ, 2013)।

माइकोटॉक्सिन शब्द ग्रीक शब्द "मायकेस'' अर्थात ''कवक'' और लैटिन शब्द ''टॉक्सिन'' मतलब 'जहर' से बना है। आमतौर पर ये सैप्रोफिटिक कवक, विशेष रूप से एस्परजिलस, पेनिसिलियम और फ्यूजारियम, द्वारा निर्मित होते हैं। माइकोटॉक्सिन व इससे संबन्धित मानव व पशु स्वास्थ्य विकारों को एक प्रमुख स्वास्थ्य और आर्थिक समस्या के रूप में मान्यता दी गई है। माइकोटॉक्सिन अगर खा लिए जाएँ तो कार्सिनोजनिक, उत्परिवर्तक, टिरेटोजेनिक, एस्ट्रोजेनिक, रक्तस्रावी, नेफ्रोटॉक्सिक, हिपैटोटॉक्सिक, न्यूरोटॉक्सिक और इम्यूनोंसप्रेसिव प्रभावों के साथ कई पुरानी और विकट बीमारियां उत्पन्न कर सकते हैं। उदाहरण के लिए मध्य युग में केंद्रीय व उत्तर यूरोप की अत्यधिक आबादी की मृत्यु का कारण बना "एरगोटिस्म" अथवा "सेंट एंथनीज फायर" जो कि क्लेविसेप्स परप्यूरा नामक कवक से उत्पन्न एल्केलॉयडस से संक्रमित राई व अन्य दूसरे अनाजों के सेवन से फैला था, इसको माइकोटॉक्सिन से संबंधित प्रथम मान्यता प्राप्त बीमारी का दर्जा दिया जा सकता है। 1960 में इंग्लैंड में कई टर्की पक्षी एक बीमारी से मर गए जिसे वहाँ पर 'टर्की एक्स रोग' कहा जाता था, जिसमे पक्षियों को दिया जाने वाला भोजन एक कवक के टॉक्सिन से संक्रमित था। बाद में उसे "एफलाटॉक्सिन" के रूप मे पहचाना गया।

कवकों की सर्वव्यापी प्रकृति खाद्य फसलों को खेती के दौरान व उसके बाद भंडारण में भी नुकसान पहुंचाती हैं। प्रौद्योगिकीय प्रसंस्करण की वजह से कवकों के नष्ट हो जाने अथवा इनके जीवन चक्र के समाप्त होने की स्थिति में यदि कवक संक्रमण दिखाई न दे, फिर भी खाद्य पदार्थों में माइकोटॉक्सिन उपस्थित हो सकते हैं। इसके अलावा, एक माइकोटॉक्सिन विभिन्न कवकों की अलग अलग प्रजातियों से पैदा हो सकता है और एक कवक कई माइकोटॉक्सिन्स का उत्पादन कर सकता है। भोजन में मौजूद माइकोटॉक्सिन के लिए निर्धारित विभिन्न नियामक सीमाएं बनाई गयी हैं।

ekbdkV,fDlu dk çdkj

कवकों की विविध प्रजातियों निर्मित माइकोटॉक्सिन विभेदित रसायनिक संरचनाओं के आधार पर चिन्हित किए गए हैं। उदाहरण के लिए एफलाटॉक्सिन अत्यधिक ऑक्सीजन युक्त हेटरोसिलिक संरचना प्रदर्शित करता है, जबकि ट्राइकोथीसीन लगभग समान संरचना दिखाते हुए सी9 और सी10 के बीच डबल बॉन्ड और सी12 और सी13 पर इपोक्सिडिक ग्रुप क्रियात्मक अल्कोहलिक और एस्टर समूह प्रदर्शित करते हैं जोकि उनके विषाक्तता के लिए उत्तरदायी है। मानव और जानवर, मौखिक, त्वचीय संपर्क और साँस द्वारा माइकोटॉक्सिन के संपर्क में आ सकते हैं। वर्तमान में 300 से ज्यादा माइकोटॉक्सीन ज्ञात हैं, किन्तु उनमें से कुछ खाद्य सुरक्षा की दृष्टि से अत्यधिक महत्वपूर्ण माने जाते हैं। सबसे सामान्य माइकोटॉक्सिन, एफलाटॉक्सिन्स, ओकराटॉक्सिन्स, फ्यूमिनोसिन्स, ट्राइकोथीसीन्स और जीरेलिनोन हैं।

,¶ykV,fDlu

एफ्लाटॉक्सिन समूह में बड़ी संख्या में "एसपरजिलस" वंश के ऐरोबिक माइक्रोस्कोपिक कवकों द्वारा निर्मित लिपोफिलिक माइकोटॉक्सिन शामिल हैं। एफलाटॉक्सिन एक महत्वपूर्ण जोखिम कारक माना जाता है क्योंकि फिलीपींस, चीन, थाईलैंड और कई अफ्रीकी देशों के महामारियों के अध्ययन में आहार में एफ्लाटॉक्सिन की उपस्थित व लिवर कैंसर की घटनाओं का सीधा संबंध

पाया गया है। प्रमुख एफ्लाटॉक्सिन में बी 1, बी 2, जी 1 और जी 2, एम 1 और एम 2 शामिल हैं, जिसमे कि एम 1 और एम 2 एफ्लाटॉक्सिन बी 1 की चयापचय से और दूध में स्रावित होता है। एफ्लाटॉक्सिन बी 2 और जी 2 क्रमशः बी 1 और जी 1 के डायहाइड्रोक्सी डेरिवेटिव हैं, जबकि एफ्लाटॉक्सिन एम 1 4–हाइड्रॉक्सी एफ्लाटॉक्सिन बी 1 (एएफबी 1) और एफ्लाटॉक्सिन एम 2 4–डायहाइड्रोक्सी एफ्लाटॉक्सिन बी 2 है। एफ्लाटॉक्सिन एम 1 और एम 2 को मूल रूप से गायों के दूध में पाया गया जिन्हे कवक संक्रमित अनाजों को खिलाया गया था। हालांकि भारत और अन्य कई देशों में एफ्लाटॉक्सिन एम 1 दूध और दही से बनने वाले पदार्थों मे भी निर्धारित सीमा से अधिक मात्रा में पाया गया है।

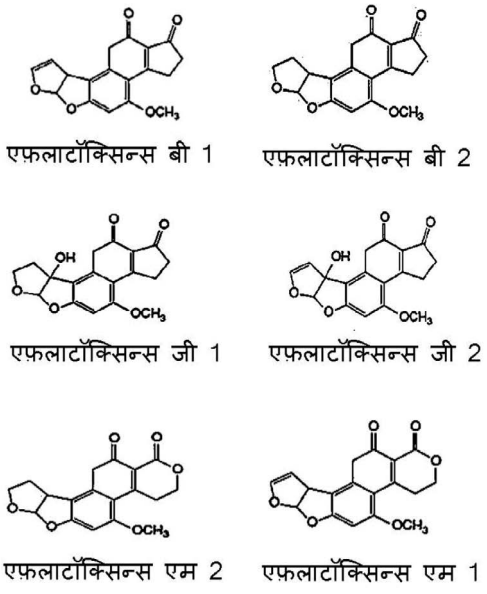

चित्र1: एफ्लाटॉक्सिन्स की आणविक संरचना

एफलाटॉक्सिन बी 1 (एएफबी 1) कवक "एसपरजिलस फ्लेवस" द्वारा निर्मित एक माइकोटॉक्सिन है। एएफबी 1 व्यापक रूप से गेहूं, मक्का, चावल, सेम, तेल बीज, सूखे फल, नट, और अंगूर जैसे पौधों में पाया जाता है । दूध, मांस और अंडे में भी इसकी उपस्थिति पाई गई है। एफ्लाटॉक्सिन जी 1 व जी 2 "एस्परजिलस पैरासिटिकस" द्वारा उत्पादित किए जाते हैं। एफ्लाटॉक्सिन बी 2 व एफ्लाटॉक्सिन जी 2 जब तक कि मेटाबोलिक रूप से आक्सीकृत होकर एफ्लाटॉक्सिन बी 1 और जी 1 मे परिवर्तित ना हो जाए अपेक्षाकृत कम विषाक्त होते हैं। एफ्लाटॉक्सिन बी 1, जी 1, और एम 1, की कैंसर कारक और उत्परिवर्तक क्षमता इनके टेरमीनल फ्यूरान रिंग के 8–और 9– स्थिति पर क्रियाशील इपोक्साइड समूह व इसके आगे रक्त सीरम में अलब्यूमिन और न्यूक्लिक एसिड के सहसयोजक बॉन्ड के कारण होती है।

कम से कम 12 विभिन्न जानवरों में एफ्लाटॉक्सिन की कार्सिनोजेसिटी के बारे में अध्ययन किया गया है (जे जे वोंग और डी पी हसीह, 1976)। महामारी संबंधी सबूत ये दर्शाते हैं कि एएफबी 1 मनुष्यों में हीपेटोसेल्यूलर कार्सिनोमा उत्पन्न करता है और अपने एक्जो –8 9– इपोक्साईड में चयापचय रूपांतरण के बाद पशु और मानव कोशिकाओं में क्रोमोसोमल अपवर्तन का कारण बनता है जो डीएनए को नुकसान पहुंचाता है। एफबी 1 के जीनोटॉक्सिकिटी का अध्ययन प्रोकेरियोटिक और यूकेरियोटिक प्रणालियों में किया गया है, जिसमें मानव कोशिकाएं, मानव और विभिन्न प्रकार की पशु प्रजातियां शामिल हैं।

यह जीन उत्परिवर्तन और माइक्रोन्यूकलीय,सिस्टर क्रोमेटिड एक्सचेंज और माइटोटिक पुनर्संयोजन सहित क्रोमोसोमल बदलाव लाती है। यहाँ तक कि इसकी त्वचीय ट्यूमर शुरू करने की क्षमता भी देखी गयी है।

vkdjkV,fDlu

ओकराटॉक्सिन अलग–अलग ऐस्परजिलस और पेनिसीलियम प्रजातियों के माध्यमिक चयापचयी उत्पाद होते हैं, जो कि अनाज, मसालों, कॉफी बीन्स और विभिन्न प्रकार के अनाज उत्पादों में पाए जाते हैं। ओकराटॉक्सिन डाइहाइड्रो–आइसोक्यूमरीन से बने हुए पेंटाकेटाइड्स होते हैं जो कि बीटा–फेनिलएलनाइन से जुड़े होते हैं। रसायनिक संरचनाओं के आधार पर हम ओकराटॉक्सिन को ए, बी और सी तीन प्रकारो में विभाजित कर सकते हैं जिनमे ओकराटॉक्सिन बी (ओ.टी. बी) ओकराटॉक्सिन ए (ओ.टी. ए) का एक गैर–क्लोरीनयुक्त रूप है और ओकराटॉक्सिन सी (ओ.टी.सी) ओ.टी. ए का एथिल एस्टर है।

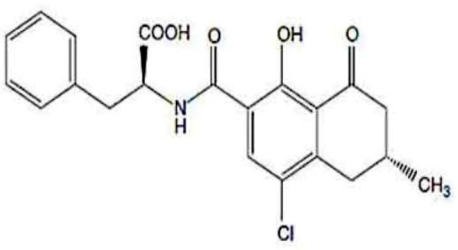

चित्र 2: ओकराटॉक्सिन (ओ टी ए) की आणविक संरचना

ओ.टी. ए इस समूह का सबसे प्रचलित और प्रासंगिक माइकोटॉक्सिन है। ओ.टी. ए मुख्य रूप से बाल्कन क्षेत्र में पाया जाता है, हालांकि, यह वर्तमान में अनाज, फलों, बेकरी, मांस और डेयरी उत्पादों, शराब, बीयर, कॉफी और यहां तक कि अंडे में भी मिलता है। दुनिया के विभिन्न हिस्सों में गेहूं, मक्का, अंगूर और उनके उप–उत्पाद जैसे बीयर, शराब में ओ.टी. ए की अत्यधिक स्तर पर संक्रमण की सूचना मिली है। ओ.टी. ए की कई पशु प्रजातियों में कार्सिनोजेनिक, इम्युनोसप्रेसिव, हीपोटोटॉक्सिक,और टीरेटोजेनिक क्षमता पाई गयी है, इसके अलावा ओ.टी. ए को आई.ए. आर. सी. द्वारा संभावित मानव कार्सिनोजन (समूह 2 बी) के रूप में वर्गीकृत किया गया है। बाल्कन और उत्तरी अफ्रीकी देशों में नेफ्रोपैथी और यूरोथेलियल ट्रैक्ट ट्यूमर ओ.टी. ए की विषाक्तता से जुड़े हुए हैं, साथ ही ओ.टी. ए में त्वचीय ट्यूमर की शुरुआत और इसे आगे बढ़ाने की भी क्षमता देखी गयी है ओ.टी. ए को युवा पुरुषों में वृषण (Testicular) कैंसर के कारण के रूप में पाया गया है। सिंथेटिक ओकराटॉक्सिन हाइड्रोक्योनोन, एक ओ.टी. ए मेटाबोलाइट जो सहसंयोजक डीएनए जोडों को जोड़ता है, को भी उत्परिवर्तनीय बताया जा सकता है। इसके साथ ही ओ.टी. ए सभी महत्वपूर्ण अंगों में रक्तस्राव तथा यकृत व लसीकाय ऊतकों नेफ्रैटिस और नेक्रोसिस का कारक है।

¶;ekfuf l u

फ्यूमोनिसिन माइकोटॉक्सिन का एक समूह है, जिनमें फ्लोरोसेंट क्षमता नहीं होती है। यह पानी में घुलनशील और ध्रुवीय होते हैं और अब तक कम से कम 15 संबंधित फ्यूमोनिसिन यौगिकों की पहचान की गई है। फ्यूमोनिसिन माइकोटॉक्सिन जिसमें एफ.बी 1, एफ.बी 2, एफ.बी 3 और अन्य संरचनात्मक रूप से संबंधित एनालॉग शामिल हैं, फ्यूसेरियम वेर्टिसिलिओएड्स

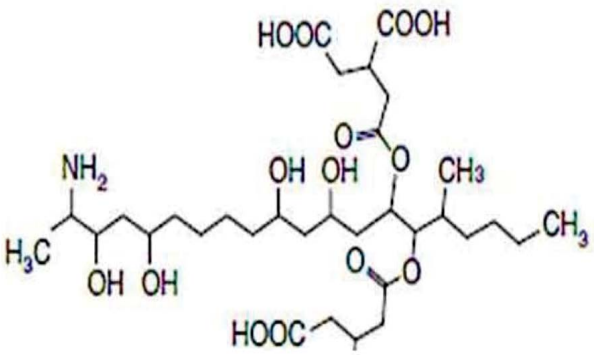

चित्र 3: फ्यूमोनिसिन बी 1 (एफबी 1) की आणविक संरचना

या फ्यूसेरियम मोनिलीफॉर्मि और संबंधित प्रजातियों द्वारा निर्मित होते हैं। सर्वेक्षणों से पता चला है कि एफबी 1 और, कुछ हद तक, फ्यूमोनिसिन्स बी 2 (एफबी 2) और बी 3 (एफबी 3) मक्का, मक्का आधारित खाद्य पदार्थ और पशु खाद्य के व्यापक प्राकृतिक प्रदूषक हैं। 1980 में, मार्सस ने फ्यूमोनिसिन्स को दक्षिण अफ्रीका के कई लोगों में ओईसोफैगल कैंसर के कारण के रूप में प्रदर्शित किया।

एफबी 1 न केवल मकई (मक्का) और मकई आधारित खाद्य पदार्थों में, बल्कि बियर, चावल, चारा, ट्रीटिकेल, लोबिया के बीज, सेम, सोयाबीन और शतावरी में सबसे अधिक पाया जाता है। एफबी 1 कृषि पशुओं के दो रोगोंः घोड़ों में ल्यूकोइनसिफैलोमलेसिया और सूअरों में पलमोनरी एडेमा का कारण हो सकता है। ये कार्सिनोजेनिक, हिपैटोटॉक्सिक और नेफ्रोटॉक्सिक होने के साथ–साथ जानवरों में भ्रूण–संबंधी बीमारियाँ भी उत्पन्न करता है। एफबी 1 प्राकृतिक रूप से होने वाले अनालॉग्स में से सबसे प्रचुर मात्रा में पाया जाने वाला फ्यूमोनिसिन है और यह अंतर्राष्ट्रीय एजेंसी फॉर कैंसर रिसर्च द्वारा मनुष्यों के लिए संभावी कैंसरजनक के रूप में वर्गीकृत किया गया है। एफबी 1 तथा अन्य फ्यूमोनिसिन के सी–1 पर मुक्त अमीनो ग्रुप के होने के कारण ये सेरामाइड सिंथसेस को बाधित करके अपनी जैविक गतिविधि को क्रियान्वित करते हैं। हालांकि हस्तक्षेपित स्फिंगोंलिपिड सिग्नलिंग ऐसे असामान्य व आक्रामक फेनोटाइप के साथ किडनी ट्यूमर को किस प्रकार बढ़ावा देता है यह स्पष्ट नहीं हुआ है।

Vkbd kfFk l hU l

ट्राइकोथिसीन्स फ्यूसेरियम स्टेकीबोट्रिस, माइकोथिशियम, सीफेलोस्पोरियम, वर्टिसिमोनोस्पोरियम, ट्राइकोडर्मा और ट्राइकोथीशियम जेनेरा के कवकों द्वारा मेजबान पौधों, भोजन और अन्य कार्बनिक वातावरण में वृद्धि के दौरान उत्पन्न माध्यमिक उत्पाद हैं। इन माइकोटॉक्सिन में 200 से अधिक संरचनात्मक रूप से संबंधित सेस्कीटरपेनॉयड परिवार शामिल हैं जिनमें से कुछ सामान्यतः विशेष रूप से गेहूं, जौ, जई और मक्का जैसे अनाज में पाए जाते हैं विशिष्ट कार्य समूहों के प्रतिस्थापन पद्धति के आधार पर ट्राइकोथिसीन्स को चार समूहों ए, बी, सी और डी में विभाजित किया जाता है जो कि विभिन्न विषाक्तता के साथ उनकी संरचना से संबंधित है।

टाइप 'ए' ट्राइकोथिसीन्स में टी–टू टॉक्सिन (टी–2)

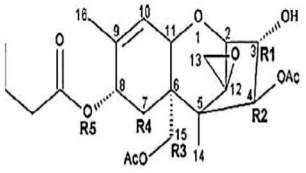

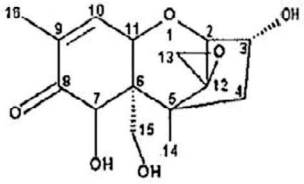

चित्र 4: ट्राइकोथिसीन्स की आणविक संरचना

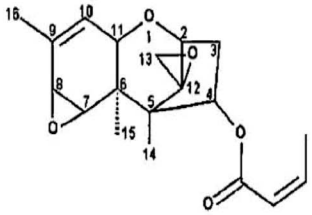

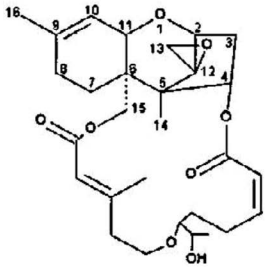

और डायएटेसिऑक्सिर्पेनोल (डी.ए.एस) जिनमे हाइड्रॉक्सिल ग्रुप होता है तथा इनके पास एस्टर समूह या सी 8 पर कोई साइड चेन नहीं होता जबकि टाइप 'बी' ट्राइकोथिसीन्स (डीऑक्सीनिवैलिनोल (डॉन), निवैलिनोल ट्रायकोडर्मिन, ट्राइकोथेसीन) के पास एक किटो समूह होता है। टाइप सी ट्राइकोथिसीन्स के जैसे कि क्रोटोकिन और बाक्क्रीन के सी –7 और सी –8 या सी –9 और सी –10 के बीच दूसरी एपॉक्सी रिंग सी –10 होती है। डी टाइप के ट्राइकोथिसीन्स में सी –4 और सी –1 के बीच एक मैक्रोसाइटिकल रिंग होती है जैसे कि सैट्राटॉक्सिन और रॉरीडिन। विषविज्ञान की दृष्टि से डॉन और टी–टू टॉक्सिन दोनों ही सबसे प्रचलित हैं, जिनका व्यापक रूप से अध्ययन किया गया है। पौधों में, टी–2 टॉक्सिन (टी–2) और डॉन प्रतिक्रियाशील ऑक्सीजन प्रजातियों (आरओएस) के स्तर को बढ़ाकर ऑक्सीडेटिव तनाव उत्पन्न करते हैं।

डॉन मुख्य रूप से फसलों के खेतो में बने रहने के दौरान निर्मित होता है, हालांकि फसलों के भंडारण के दौरान माध्यमिक संदूषण हो सकता है। संरचनात्मक रूप से डॉन एक यौगिक कम्पाउण्ड है, जिसमें 3 मुक्त हाइड्रॉक्सिल समूह (–ओ एच) लगे होते हैं, जो मुख्य रूप से इसकी विषाक्तता के साथ जुड़े होते हैं। कई रिपोर्टों का सुझाव है कि मानव भोजन में डॉन की उपस्थिति गंभीर स्वास्थ्य चिंताओं को विशेष रूप से एनोरेक्सिया और उल्टी का कारण है,। डॉन को सेल सिग्नलिंग, विकास और मैक्रोमोल्युकुलर संश्लेषण को बाधित करते हुए दिखाया गया है जो कि गैस्ट्रोइंटेस्टाइनल होमिओस्टेसिस, न्यूरोइंडोक्राइन डिसफंक्शन, लोअर इम्यूनिटी जैसे व्यापक प्रभावों के साथ जुड़ा हुआ है। डॉन का मुख्य विषाक्त प्रभाव राइबोसोम के माध्यम से और सेलुलर काइनेज, माइटोजन सक्रिय प्रोटीन काइनेज (एम ए पी के) को सक्रिय करके सेलुलर स्तर पर प्रोटीन और न्यूक्लिक एसिड संश्लेषण की पद्धति करना है।

अत्यंत उच्च विषाक्तता दर क्षमता होने के कारण कम मात्रा में मिलने के बाद भी टी–2 टॉक्सिन ने ट्राइकोथिसीन्स में सबसे ज्यादा ध्यान आकर्षित किया है। यह एक गैर विलायक यौगिक है जो प्रकाश तथा तापमान से निष्क्रिय नहीं होता किन्तु तीव्र अम्ल और क्षार की परिस्थितियों में बहुत जल्द निष्क्रिय हो जाता है। यह माइकोटॉक्सिन दस्त, सुस्ती, वजन घटने, रक्तस्राव, प्रतिरक्षा क्षमता में बाधा, नेक्रोसिस, कार्टिलेजीनस ऊतक की क्षति, एपोटोसिस, और मृत्यु का कारण है। टी –2 को अलीमेंटरी टॉक्सिक एल्यूकिया (ए टी ए) व काशीन बेक रोग (केबीडी) का कारण माना गया है। हालांकि टी –2 विष और उनके जुड़े चयापचयों संरचनाओं को अच्छी तरह से जाना जाता है, फिर भी जानवरों में इनके सीमित जांच के कारणों से जानवरों और मनुष्यों में इन यौगिकों की विषाक्तता स्पष्ट नहीं है।

thjyhu,u ¼ft ;k½

जीरेलीनॉन (जिया) एक गैर स्टेरायडल एस्ट्रोजेनिक माइकोटॉक्सिन है जो फ्यूसेरियम जेनरा के कवक द्वारा निर्मित है। जिया अनाज और फसलों द्वारा उत्पादित का

चित्र 5: जीरेलीनॉन (जिया) की आणविक संरचना

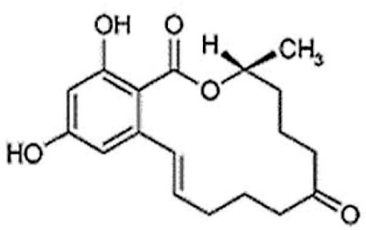

एक दूषित पदार्थ है। जिया मानव और पशु स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव डालता है और दुनिया भर में गंभीर आर्थिक समस्याओं का कारण है। जिया से दूषित उत्पादों खाद्य सुरक्षा के लिए और मानव स्वास्थ्य को खतरा है। वयस्कों की तुलना में जिया से उत्पन्न प्रभाव बच्चों के लिए अधिक जोखिम हैं। इसके अत्यधिक एस्ट्रोजेनिक गतिविधि के परिणामस्वरूप जिया को महिला प्रजनन परिवर्तक के रूप में शामिल किया गया, इसकी हार्मोनल क्षमता अन्य दूसरे प्राकृतिक गैर–स्टेरायडल एस्ट्रोजन्स जैसे कि सोया व आईसोफ्लेवन्स से अत्यधिक है। जिया के हाइपरएस्ट्रोजेनिक लक्षण प्रयोगशाला के जीवों (चूहों, गिनी पिग, हैमस्टर, और खरगोश) और इनके घरेलू प्रजातियों में प्रदर्शित किया गया है; प्रीप्यूबेर्टल गिनीपिग जिया विषाक्तता के लिए सबसे संवेदनशील प्रजाति है। जिया की हिपेटोटेक्सिक, हिमेटोटॉक्सिक, जीनोटॉक्सिक और इम्यूनोटेक्सिक क्षमता देखी गयी है। इसके साथ ही यह चूहों, खरगोशों और मनुष्यों में बड़े पैमाने पर अवशोषित होता है और मानव और पशुओं के माइकोटोक्सिकोसिस के कई प्रकोपों में देखा गया है।

खाद्य श्रृंखला में माइकोटॉक्सिन की उपस्थिति एक अपरिहार्य और गंभीर समस्या है, जिसका सामना पूरी दुनिया कर रही है, क्योंकि यह सुरक्षा के लिए एक बड़ा खतरा है। इस नए वैश्विक वातावरण में, माइकोटॉक्सिन अभी भी अपरिहार्य हैं और हमें उन रणनीतियों को डिजाइन करना चाहिए जो हमें इस समस्या का सामना करने मे सहायक करे। खाद्य पदार्थों में विषाक्त पदार्थ निम्न स्तरों में रहे ये सुनिश्चित रखना बहुत महत्वपूर्ण है। इस लक्ष्य तक पहुंचने के लिए, खाद्य पदार्थों को संभावित संदूषण से दूर रखा जाना चाहिए। अच्छे सफाईपूर्ण उपायों का अभ्यास करने के अलावा, मनुष्यों और पशुओं में माइकोटॉक्सिन विषाक्तता से जुड़े विषैले प्रभावों को सूचित करने के लिए जागरूकता का निर्माण किया जाना चाहिए। भण्डारण में नमी को कम करके माइकोटॉक्सीन से होने वाले नुकसानों को रोकने के कई तरीके हैं। चूंकि खाना पकाने के बाद माइकोटॉक्सिन के स्तर में कोई कमी नहीं होती, यह भोजन में माइकोटॉक्सीजेनिक कवक को कम करने के लिए कुछ नियमों को पारित करने के लिए सहायताकारी होगा। खाद्य पदार्थों और भोजन के उपयुक्त भंडारण के लिए कुछ मानदंड होने चाहिए। क्योंकि, इन उत्पादों का दूषित होना मानव स्वास्थ्य को खतरे में डाल सकता है; इसलिए, माइकोटॉक्सिन प्रदूषण को कम करने के लिए कुछ नियमों को बनाना महत्वपूर्ण है। पशुओं को माइकोटॉक्सिन–दूषित खाद्य खिलाने के विषैले प्रभावों पर अभी भी व्यापक ज्ञान मौजूद नहीं है। विषाक्त पदार्थों के मानव खाद्य श्रृंखला में प्रवेश करने की पर्याप्त संभावना है, अतः इस क्षेत्र में अनुसंधान की आवश्यकता है। हमारे पर्यावरण की बेहतर समझ और पर्याप्त शोध ही हमें वास्तविक रूप से खाद्य सुरक्षा का मतलब समझने और उसे हासिल करने के लिए सर्वोत्तम समाधान खोजने का कौशल प्रदान कर सकता है।

कह दो पुकार कर, सुन ले दुनिया सारी।
हम हिंद–तनय हैं, हिंदी मातु हमारी।।
भाषा हम सबकी एक मात्र हिंदी है।
आशा हम सबकी एक मात्र हिंदी है।।
शुभ सदगुण–गण की खान यही हिंदी है।
भारत की तो बस प्राण यही हिंदी है।।
हिंदी जिस पर निर्भर है उन्नति सारी।
हम हिंद–तनय हैं, हिंदी मातु हमारी।।
कविराज चंद ने इसको गोद खेलाया।
तुलसी, केशव ने इसका मान बढ़ाया।।
रसखान आदि ने इसको ही अपनाया।
गाना इसमें ही सूरदास ने गाया।।
गांधी जी इस मंदिर के हुए पुजारी।
हम हिंद–तनय हैं, हिंदी मातु हमारी।।
भारत ने अब इसके पद को पहचाना।
अपनी भाषा बस इसको ही है माना।।
इसका महत्व अब सब प्रांतों ने जाना।
दक्षिण भारत, पंजाब, राजपूताना।।
सब मिलकर गाते गीत यही सुखकारी।
हम हिंद–तनय हैं, हिंदी मातु हमारी।।
सदियों से हमने भेद भाव त्यागे हैं।
पा नवयुग का संदेश पुनः जागे हैं।।
अब देखेगा संसार कि हम आगे हैं।
जगकर हम रण से कभी नहीं भागे हैं।।
फिर आई है, हे जगत, हमारी बारी।
हम हिंद–तनय हैं, हिंदी मातु हमारी।।

çk- eukjtu th] ,e- ,] dk'kh foÜofo|ky; dh ;g jpuk ykgkj l: çdkf'kr *[kjh ckr* e 1935 e çdkf'kr gÃ FkhA

fclfQu,y&, ¼chih,½ dk ekuo efLr"d ij nq"çHkko

vfdr VMu ,o jtuh'k dekj prohnh

प्रणाली विषविज्ञान एवं स्वास्थ्य जोखिम मूल्यांकन समूह

सीएसआईआर–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, विषविज्ञान भवन, 31, महात्मा गांधी मार्ग
लखनऊ–226001, उत्तर प्रदेश, भारत

आधुनिक युग में मानव जाति ने हर क्षेत्र में काफी तरक्की कर ली है। धरती, पानी और आकाश हर जगह मानव जाति का डंका बजा हुआ है। अपनी बुद्धिबल का प्रयोग करके उसने अब पृथ्वी के बाहर अपने पैर फैलाने शुरु कर दिये हैं। इस आधुनिकीकरण से मानव को हालांकि काफी लाभ तो हुआ है, परन्तु हर सिक्के के दो पहलूओं की तरह आधुनिकीकरण का दूसरा पहलू मानव स्वास्थ्य पर बुरा असर है। बढ़ते आधुनिकीकरण के कारण मानव जीवन में डिब्बाबंद खाद्य एवं पेय पदार्थों का उपभोग बढ़ा है। ये खाद्य एवं पेय पदार्थ मुख्य रूप से प्लास्टिक से बनी बोतलों, थैलियों, डिब्बों एवं जार में रखे जाते हैं। इसी के साथ हम बैंक एटीएम के मिनी स्टेटमेंट, बिजली के बिलों, शॉपिंग मॉल या पेट्रोल पंप के बिल को नियमित रूप से रखने के आदी हैं।

शोधकर्ताओं ने यह खुलासा किया है कि उन बिलों और डिब्बों को बनाने के लिए इस्तेमाल किए गए रसायनों (जैसे– बिसफिनॉल–ए बीपीए इत्यादि) से हमारे शरीर में कैंसर और अन्य घातक बीमारियों के होने का खतरा रहता है । बीपीए मुख्य रूप से पॉली–कार्बोनेट प्लास्टिक, एपॉक्सी रेजिन और थर्मल पेपर बनाने में प्रयोग होता है। दुर्भाग्य से आधुनिक जीवन में उपयोग किए जा रहे कई पदार्थों में बीपीए की घातक उपस्थिति स्पष्ट हो चुकी है। बीपीए का उपयोग बच्चों के लिए पानी की बोतलों या भोजन को ले जाने के लिए टिफिन, पॉली–कार्बोनेट की बोतलों, माइक्रोवेव ओवन के साथ प्रयोग किए जाने वाले प्लास्टिक के बर्तनों में होता है। बीपीए का उपयोग इसकी अपेक्षाकृत कम लागत और निर्माण की सरलता के कारण लगभग सभी प्लास्टिक उत्पादों में होता हैं।

chih, dh ljpuk

बीपीए (चित्र 1) एक कार्बन आधारित हाइड्रोक्सिफिनॉल यौगिक है जिसका रसायनिक फार्मूला $(CH3)_2C(C_6H_4OH)_2$ है, जिसमें डाईफिनाईलमिथेन डेरिवेटिव के समूह शामिल हैं। यह एक रंगहीन अनाकार ठोस है जो कार्बनिक विलायकों में घुलनशील है, लेकिन पानी में घुलनशील नहीं है।

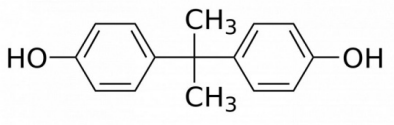

चित्र 1: बिसफिनॉल–ए की रसायनिक संरचना

बीपीए को पहली बार 1891 में रूसी रसायनशास्त्री एपी डायनिन ने फिनॉल के दो समकक्षों के साथ एसीटोन के संघनन से संश्लेषित किया था। इसमें प्रत्यय (सफिक्स) 'ए' एसिटोन से इसकी उत्पत्ति को नामित करता है।

बीपीए को मुख्य रूप से प्लास्टिक बनाने के लिए प्रयोग किया जाता है, और बीपीए आधारित प्लास्टिक का उपयोग करने वाले उत्पादों को 1957 से व्यावसायिक उपयोग में लिया गया है । वर्तमान में दुनिया में निर्माताओं द्वारा कम से कम 3.6 मिलियन टन बीपीए का उपयोग किया जाता है। यह एपॉक्सी रेजिन और पॉली–कार्बोनेट प्लास्टिक के उत्पादन में एक महत्वपूर्ण घटक (मोनोमर) है। बीपीए विभिन्न उपभोक्ता वस्तुओं जैसे पानी और शिशु आहार की बोतल, कॉम्पैक्ट डिस्क और डिजिटल बहुमुखी डिस्क, प्रभाव प्रतिरोधी सुरक्षा उपकरण, चश्मा लेंस, खेल उपकरण, घरेलू इलेक्ट्रॉनिक गैजेट्स फाउंड्री कास्टिंग और चिकित्सा उपकरण का घटक है। दांतों में भरने वाले सीलंट और कंपोजिट में भी बीपीए पाया जा सकता है। कार्बन रहित कॉपी पेपर और बिक्री प्राप्तियां और एटीएम स्टेटमेंट के थर्मल पेपर बनाने में बीपीए पसंदीदा रंग डेवलपर के रूप में प्रयोग किया जाता है।

ekuo 'kjhj ij chih, dk ,Dlikstj

मानव शरीर में बीपीए के एक्सपोजर का प्रमुख स्रोत आहार के माध्यम से है, जबकि हवा, धूल और पानी

एक्सपोजर के अन्य संभावित स्रोत हैं। बीपीए कुछ उपभोक्ता उत्पादों जैसे कि पॉली–कार्बोनेट टेबलवेयर, खाद्य भंडारण कंटेनर, पानी की बोतलें, शिशु की दूध की बोतलों एवं भोजन और पेय के डिब्बों की दीवारों से लीक (स्रावित) होता है जहां इसे प्लास्टिक के एक घटक के रूप में प्रयोग किया जाता है, जो कि खाने को पॉली–कार्बोनेट की बोतलों के सीधे संपर्क से रक्षा के लिए प्रयुक्त होता हैं बीपीए के खाने के सीधे संपर्क के मुख्य कारण कंटेनर की उम्र, कठोर डिटर्जेंट से साफ होने पर या अम्लीय या उच्च तापमान के तरल पदार्थ होते हैं। कुछ माइक्रोवेव उपयोगी बर्तन बनाने के लिए भी बीपीए युक्त प्लास्टिक का उपयोग किया जाता है। कठोर डिटर्जेंट से प्लास्टिक के बर्तन साफ करने, अम्लीय प्रवत्ति के भोजन रखने या ओवन के अंदर उच्च तापमान होने के कारण बीपीए प्लास्टिक की सतह से टूट (लीच) जाता है और पके हुए भोजन में मिल जाता है। बीपीए का उपयोग पानी के पाइपों के राल कोटिंग के लिए किया जाता है जो उसे टूटने से बचाने के लिए किया जाता है। पानी के पाइप से बीपीए की लीचिंग पीने योग्य पानी में हो सकती है। इसके अलावा, थर्मल पेपर्स में पॉलिमराइज्ड बीपीए के स्थान पर मुक्त या गैर–पॉलिमराइज्ड बीपीए का प्रयोग किया जाता है जैसा कि एपॉक्सी रेजिन या पॉली कार्बोनेट प्लास्टिक्स में होता है। हालांकि, कई मामलों में जैसे चिपकने वाले, ऑटोमोबाइल, डिजिटल मीडिया, इलेक्ट्रिकल और इलेक्ट्रॉनिक गैजेट्स, खेल सुरक्षा उपकरण, मुद्रित सर्किट बोर्ड, कंपोजिट, और पेंट्स के लिए विद्युत लेमिनेट्स जैसे, बीपीए के संभावित एक्सपोजर का अभी तक मूल्यांकन नहीं किया गया है।

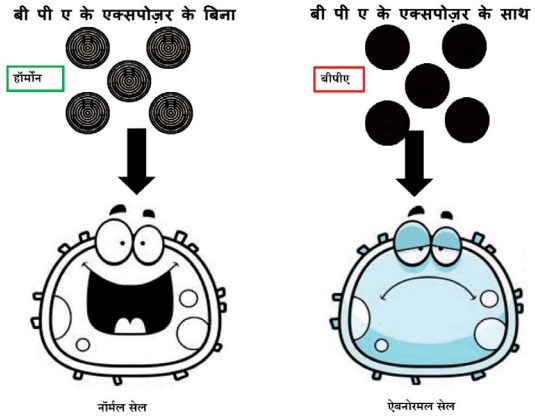

सामान्य कोशिका असामान्य कोशिका

चित्र 2: बीपीए का कोशिकाओं पर प्रभाव

इसके अलावा, विशेषज्ञों के मुताबिक, यदि कोई व्यक्ति लंबे समय तक थर्मल पेपर या कार्बन रहित कॉपी पेपर का उपयोग करता है, तो बीपीए आसानी से उसके त्वचा के माध्यम से खून में मिल जाता है (चित्र 2) और शरीर की कोशिकओं को नुकसान पहुंचाता हैं।

chih, dk fofHkUu vk;q legk e ç;kx

एक अध्ययन में पाया गया हैं कि वयस्कों के मुकाबले बच्चे बीपीए एक्सपोजर के लिए अधिक संवेदनशील होते हैं और सामान्य परिस्थितियों के तहत वयस्कों की तुलना में युवा बच्चों के मूत्र में बीपीए की उच्च सांद्रता है। वयस्कों में, बीपीए यकृत (लिवर) में एक विषहरण प्रक्रिया के माध्यम से शरीर से समाप्त हो जाता है। जबकि शिशुओं और बच्चों में, यह मार्ग पूरी तरह से विकसित नहीं होता, इसलिए उनके सिस्टम से बीपीए को कम करने की क्षमता में कमी होती है। बीपीए भ्रूण, शिशुओं और छोटे बच्चों के लिए खतरनाक होता है। बीपीए बच्चों के खाने–पीने के टिन पैक और पॉली कार्बोनेट बेबी बोतलों से आहार या तरल पदार्थों के द्वारा ज्यादा एक्सपोज होता हैं। कुछ प्लास्टिक की बेबी पुस्तकों या खिलौनों के चबाने के माध्यम से शिशुओं और छोटे बच्चों में एक्सपोजर भी हो सकता हैं। शोधों से पता चला है कि बीपीए गर्भवती महिलाओं के गर्भ नाल और एमनियोटिक तरल पदार्थ में पाया जा सकता है। इसलिए जब एक गर्भवती महिला को बीपीए का एक्सपोजर होता है, उसमें भ्रूण में बीपीए एक्सपोजर की संभावना बनी रहती है। हैरानी की बात है, कि बीपीए स्तन के दूध में भी पाया गया है और इसके द्वारा नवजात शिशु को बीपीए का एक्सपोजर हो सकता है।

भारत जैसे देश में बीपीए का एक्सपोजर किशोरावस्था में काफी हद तक होता है। आज की शॉपिंग मॉल संस्कृति और साथ ही डिब्बाबंद खाद्य और पेय पदार्थों को खाने की आदत किशोरावस्था में बीपीए के एक्सपोजर के लिए प्रमुख भूमिका निभाती है। बीपीए एक्सपोजर का तीसरा लक्ष्य समूह वयस्क है। वयस्कों में बीपीए के एक्सपोजर के लिए प्रमुख मार्ग आहार है। आहार के अलावा, हवा के माध्यम से और त्वचा अवशोषण के माध्यम से भी इसका एक्सपोजर हो सकता है जो कि मुख्य रूप से क्रेडिट, डेबिट कार्ड्स के बिल एवं एटीएम रसीदों को संभालने से त्वचा के माध्यम से हो सकता है। इसके अलावा, 24 घंटों के लिए बटुए में कागज मुद्रा के संपर्क में आने वाली थर्मल

प्राप्तियां पेपर मुद्रा में बीपीए की एकाग्रता जोखिम का एक द्वितीयक स्रोत होता है।

बीपीए का मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव : बीपीए को पहली बार 1936 में सिंथेटिक एस्ट्रोजेन के समान भूमिका के लिए पहचाना गया था। प्राकृतिक एस्ट्रोजन (हॉर्मोन) के कार्य की नकल करने की बीपीए की क्षमता (जैसे एस्ट्रैडियोल या ई–2) दोनों बीपीए और एस्ट्रैडियोल पर फिनॉल समूहों की समानता से निकले हैं। अन्य दुष्प्रभाव इस प्रकार हैं (चित्र 3):

प्रक्रियाओं को उत्तेजित करता है। इसके अलावा बीपीए एक एंडोक्राइन डिसरप्टर रसायन है। चूहों पर एक अध्ययन के अनुसार बीपीए, स्तन उत्तक में विकासात्मक परिवर्तन का कारण हो सकता हैं और स्तन कैंसर का कारण बन जाता हैं। बीपीए एपीजेनेटिक परिवर्तन करके कैंसर करने के कारणों में भी शामिल है। बीपीए अंडाशय कैंसर में एस्ट्रोजन रिसेप्टर के जीन अभिव्यक्ति में परिवर्तन पैदा कर सकता है।

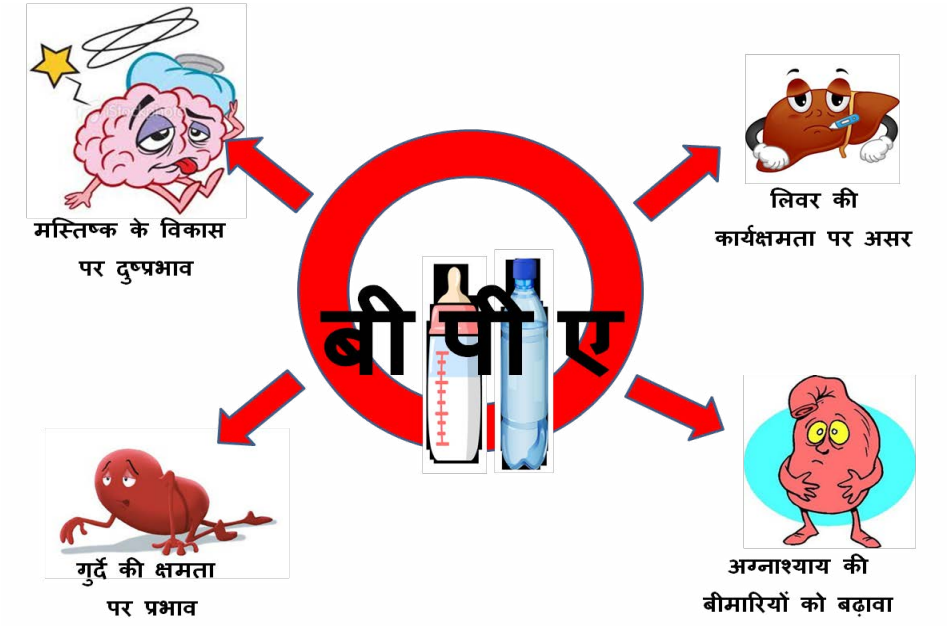

चित्र 3: बी पी ए का विभिन्न अंगो पर दष्प्रभाव।

chih, vkj ekVkik

कई शोध से पता चला है कि बीपीए मोटापे का एक मुख्य कारण बन सकता है। बीपीए हाइपर–थायरॉयड के लिए भी जिम्मेदार है, जो मोटापे को प्रेरित करता है। इसके अलावा यह मधुमेह का कारण भी हो सकता है। गर्भावस्था के दौरान, बीपीए की अधिकता बच्चों में मोटापे का कारण है।

chih, vkj dSlj

बीपीए एक संभावित कार्सिनोजन है और मानव शरीर में इसके होने से स्तन और प्रोस्टेट कैंसर होने का खतरा बढ़ जाता है। बीपीए प्रोस्टेट ग्रंथियों की कोशिकाओं में एक अनुपयुक्त नाइट्रोजन के रूप में कार्य करता हैं और इसकी एक खुराक भी प्रोस्टेट कैंसर का खतरा बढ़ा सकती हैं। यह अन्य स्टेरॉयड हॉर्मोन के अभाव में कोशिकाओं की

chih, vkj çtuu {kerk

बीपीए मनुष्य और कई प्रजातियों के पशुओं में प्रजनन क्षमता को प्रभावित करने के लिए भी जाना जाता है। दीर्घकालिक बीपीए एक्सपोजर वन्यजीव और मानव दोनों में प्रजनन संबंधी समस्याओं से जुड़ा हुआ है। कई वैज्ञानिक अध्ययनों में इसके एक्सपोजर के द्वारा मानव शुक्राणुओं की संख्या और गुणवत्ता, जननांग असामान्यताओं जैसे कि असामान्य लिंग या पुरुष मूत्रमार्ग विकास, अवस्यक बच्चे एवं बच्चियों में समय से पूर्व यौवन की शुरुआत, उर्वरता पर प्रभाव, गर्भपात और जन्म दोष जैसी गिरावट देखी गई है।

chih, vkj ;Ñr

विभिन्न शोध से पता चलता है की बीपीए यकृत की कार्यक्षमता को काफी बुरी तरह से नुकसान पहुँचाता है।

चूहों में हुए एक अध्ययन के अनुसार यह आक्सीकारक तनाव को बढ़ावा देता है और दूसरी तरफ एंटीऑक्सीडेंट एन्जाईमों की गतिविधियों को घटाता है। यह माईटोकोंड्रिया को भी क्षति पहुचाता है।

chih, vkj vXU;k'k;

बीपीए का सम्बन्ध रक्त में बदले हुए ग्लूकोज की सामान्य स्थिति से भी है। कई शोधों से पता चलता है कि चूहों में बीपीए (कम मात्रा में भी) अग्नाशय के "बीटा कोशिकाओं" के कार्य को बुरी तरह प्रभावित करता है, जिससे "इन्सुलिन रेसिस्टेंस" शुरू हो जाता है। इस कारण से मधुमेह के होने का खतरा होता है। बीपीए की वजह से बीटा कोशिकाओं की मृत्यु (अपोप्टोसिस) होने लगती है।

chih, vkj xnk

बीपीए गुर्दों की रेनोवस्कुलर एक्टिविटी को क्षति पहुंचाता है। बीपीए रक्त के दवाब और यूरिनरी अल्ब्यूमिन्युरिया से संबंध रखता है। यह गुर्दे में ट्युबुलर अर्धपतन को भी बढ़ावा देता है।

chih, vkj efLr"d

बीपीए का मस्तिष्क पर खराब प्रभाव पड़ता है। बीपीए, चूँकि एक "जीनोएस्ट्रोजेन" है, यह मस्तिष्क के विकास में बाधा डालता है जिससे आगे चलकर "न्यूरोडिजनरेशन डिसोर्डर" होने की संभावना काफी बढ़ जाती है। बहुत से अनुसंधानों से यह पता चला है कि बीपीए दिमाग के विकास को बुरी तरह प्रभावित करता है। एक शोध से यह पता चला है कि जेब्राफिश में बीपीए हाइपोथेलेमस में नए न्यूरोंस के बनने कि प्रक्रिया (न्यूरोजेनेसिस) तथा उसके व्यवहार को बुरी तरह प्रभावित करता है। गैर–मानव प्राइमैट्स में बीपीए का स्पाइन साइनेप्स पर बुरा असर दिखाया गया है। बीपीए, एस्ट्रडिओल के कारण होने वाली साइनेप्टोजेनिक प्रक्रिया को पूरी तरह समाप्त कर देता है। क्योंकि नयी स्पाइन साइनेप्सिस का बनना अनुभूति और मूड के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण है, अतः बीपीए का स्पाइन साइनेप्सिस के बनने में बाधा डालना, मस्तिष्क के विकास के लिए बहुत हानिकारक है। हमारी प्रयोगशाला में हुए शोध परिणाम दर्शाते हैं कि बीपीए का अति कम मात्रा में चूहे के गर्भ काल में एक्सपोजर पैदा हुए बच्चों में न्यूरल स्टेम कोशिका के विकास में भी बदलाव लाता है। चूहो में, बीपीए कि कम मात्रा की खुराक से "वींट बीटा केटेनिन" की प्रतिक्रिया पर बुरा असर पड़ता है जिस कारण से स्टेम कोशिका के विकास में बाधा पड़ती है। इस कारण से दिमागी विकास पर बुरा प्रभाव पड़ता है। एक शोध से यह पता चला है कि बीपीए पानी (अन्य द्रव्य पदार्थ) की बोतलों से लीच आऊट होकर पीने के पानी में मिल जाता है। अगर पानी उबलता हुआ हो तो यह कई गुना सामान्य की तुलना से कई गुना ज्यादा मात्रा में लीच आऊट होता है। इस कारण यह "सेरिब्लर न्यूरॉन" में न्यूरोटॉक्सिक प्रभाव डालता है जो कि इन न्यूरोन के विकास में बाधा डालता है।

बीपीए एक हाईड्रोफोबिक और लिपोफिलिक रसायनिक यौगिक है। एक अनुसंधान के दौरान यह देखा गया कि चूहों के शिशुओं में स्तनपान के दौरान बीपीए के एक्सपोजर से शिशुओं के मस्तिष्क के "विजूअल कॉर्टेक्स" में गड़बड़ी आई। बीपीए का शिशु विकास के दौरान बाधा डालना शिशु के मस्तिष्क में सामान्य "सेंसरी सर्किट" के विकास को बुरी तरह प्रभावित करता है। इस कारण से शिशु के दिमागी विकास में अड़चन आती है और यह आगे चलकर डेमेनशिया, डिप्रेशन इत्यादि उसकी आगे की जिंदगी को बुरी तरह प्रभावित करती है।

बीपीए का प्रभाव थायरॉयड ग्रंथि पर भी पड़ता है। चूहों के बच्चों में हुए शोध में यह देखा गया कि जब वह स्तनपान करते हैं तब उनमें सिरम में बीपीए कि मात्रा बढ़ जाती हैं। इस कारण से उनमें थायरॉयड हॉरमोन संबंधी जीन "न्यूरोग्रेनिन" कि अभिव्यक्ति बढ़ती है, जिस वजह से पिट्युटरी ग्रंथि पर बुरा प्रभाव पड़ता है। इस कारण से बच्चों में दिमाग के विकास में बाधा आ सकती है। बीपीए के विकल्प, "बीपीएस और बीपीएफ" भी बीपीए कि तरह ही काम करते हैं तथा दिमागी विकास में बाधा डालते हैं। चूहों में यह पाया गया कि बीपीए, बीपीएस और बीपीएफ तीनों ही एक तरह काम करते हैं तथा "बेसल टेस्टोस्टिरोन" के स्राव को घटा देते हैं। इस वजह से यह रसायनिक तत्व चूहों में शारीरिक कामकाज को बुरी तरह प्रभावित करते हैं।

कम मात्रा में बीपीए की खुराक मादा में स्तनपान के द्वारा शिशुओं में जाने से "ग्लूटामेट" का "हिप्पोकैम्पस" में स्तर काफी मात्रा में बढ़ जाता है। इस कारण से "माइटोकोंड्रिया" के कामकाज पर बुरा असर पड़ता है और इस वजह से "न्यूरोनल और ग्लायल" विकास में परिवर्तन आता है जो कि मस्तिष्क विकास के लिए हानिकारक है। बीपीए का प्रभाव गैर मानव प्राईमेट पर भी देखा गया

है। मादा प्राइमेट्स में बीपीए देने से शिशुओं में गड़बड़ी "वेंट्र्ल मेसेंसिफेलोन" और "हिप्पोकैम्पस" में देखी गयी है। मध्य ब्रेन में "डोपामीन न्यूरोन" की कमी देखी गयी और "स्पाईन साइनेप्स" की कमी "हिप्पोकैम्पस" में देखी गयी है। इस कारण से दिमागी विकास में अड़चन आती है। एक शोध में यह देखा गया है कि बीपीए "न्यूरोट्रांसमीटर" को बुरी तरह प्रभावित करता है। यह "ट्रान्सएमिनेज" की गतिविधि को प्रभावित करता है जिससे दिमाग के विकास में बाधा पड़ती है।

बीपीए एक ऐसा रसायनिक तत्व है जो प्रजनन में और व्यवहार में असामान्यता, प्रयोगशाला जीव जंतुओं के शिशुओं में पैदा करता है। कम मात्रा में बीपीए की खुराक का प्रभाव देखा गया कि, प्रजनन के दौरान, बीपीए "सेरीबुल कॉर्टैक्स" में "न्यूरोनल मायग्रेशन" में बाधा डालता है जिस वजह से मस्तिष्क के विकास में अड़चन पैदा होती है।

बीपीए की अधीनता सर्वव्यापी है। प्रयोगशाला में जीव जंतुओं में बीपीए न्यूरल संगठन, "न्यूरोएंडोक्राईन फिजिओलोजी" और व्यवहार को बुरी तरह प्रभावित करता है। चूहों में, सामान्य की तुलना में, बीपीए "एस्ट्रोजन रिसेप्टर" की अभिव्यक्ति "मिडिओबेसल हाइपोथेलेमस" और "ऐमिग्डला" में दोनों लिंगो में बुरी तरह प्रभावित करता है जो कि मस्तिष्क के विकास के लिए हानिकारक है। इसके अलावा, उपभोक्ता उत्पादों का बुरा प्रभाव दिमाग में मौजूद लगभग हर जगह के न्यूरोन पर होता है। चूहों में एक अनुसंधान में यह देखा गया की किशोरावस्था में बीपीए "न्यूरोन" और "ग्लायल" की, "मिडियल प्रिफ्रंटल कॉर्टैक्स" में संख्या में बुरी तरह बदलाव लाता है। इस कारण से दिमाग का विकास बाधित होता है।

बचपन में मस्तिष्क के विकास के दौरान लगातार बीपीए की अधीनता से न्यूरोनल विकास में बाधा आती है जिस कारण दिमाग की संरचना में गड़बड़ी आती है और इस कारण आगे की जिंदगी में "न्यूरोसाइकियाट्रिक एवं न्यूरोलॉजिकल" बीमारियाँ होने की संभावना काफी बढ़ जाती है। चूहों में एक शोध में यह देखा गया कि शिशुओं में बीपीए "हिप्पोकैम्पस" में "ओलिगोडेन्ड्रोसाइट" की संख्या को काफी हद तक घटा देता है और यह स्थिति उनकी वयस्कता तक बनी रहती है। इस कारण से "ओलिगोडेन्ड्रोसाइट" में "मायलिन बेसिक प्रोटीन" और "मोनोकर्बोसिलेट ट्रांसपोर्टर १" की अभिव्यक्ति बहुत घट जाती है और इस वजह से "मायलिनेटेड एक्जोन" की संख्या काफी कम हो जाती है।

बीपीए प्लास्टिक की बोतलों के उत्पादन में इस्तेमाल होने वाला तत्व है और जिसकी वजह से शिशुओं में विकासात्मक न्यूरोटोक्सिसिटी होती है। प्रजनन के दौरान, चूहों में यह देखा गया कि, बीपीए की डोज से हिप्पोकैम्पस में "स्पाईन घनत्वता" काफी हद तक कम हो गयी। इस वजह से हिप्पोकैम्पस में न्यूरोनल आकारिकी पर बुरा प्रभाव पड़ा और यह प्रभाव वयस्कता तक कायम रहा। बीपीए एक ऐसा रसायनिक तत्व है जो कि भ्रूण विकास के लिए बहुत हानिकारक है। एक शोध में यह देखा गया कि बीपीए से "इंसुलिन लाइक ग्रोथ फैक्टर १", "एकटोडर्म" और "न्यूरल प्रोजेनिटर" कोशिका के जीन और "डोपमिनेर्जिक न्यूरोन" की अभिव्यक्ति का स्तर काफी हद तक कम हो गया। उनमे "टाइरोसिन हाइड्रोक्सिलेस" और "डोपमीन" का स्तर भी बहुत कम हो गया। इस कारण बीपीए "डोपमिनेर्जिक न्यूरोन डिफरेंशियेशन" का दमन करता है। इस वजह से बीपीए जन्म से पूर्व न्यूरोडेवलपमेंट पर बुरा असर डालता है। एक अनुसंधान से यह पता चला है कि बीपीए नवजात चूहों में, दोनों लिंगो में, हाइपोथैलेमस और हिप्पोकैम्पस के जीन अभिव्यक्ति को बुरी तरह प्रभावित करता है जो कि नवजात चूहों के मस्तिष्क के विकास के लिए हानिकारक है।

जो जानकारी उपलब्ध है उसके अनुसार प्रसवकालीन समय में बीपीए की अधीनता "पेरिफेरल इंसुलिन प्रतिरोध" को बढ़ावा देती है। बीपीए का चूहों पर यह प्रभाव देखा गया कि उनमे "इंसुलिन सिगनलिंग" और "ग्लूकोस ट्रांस्पोर्टर" पर बुरा असर हुआ जिस वजह से "फोस्फोरिलेटेड टाओ (Tau)" और "एमायलोइड प्रिकर्सर प्रोटीन" का स्तर काफी बढ़ गया। इस वजह से इनमें न्यूरोडिजनरेटिव बीमारियाँ होने की संभावना काफी बढ़ गयी। कम मात्रा की बीपीए की खुराक जानवरों में "न्यूरोडेवेलपमेंट", "सेक्सुअल डायमोर्फिस्म", व्यवहार और सीखने की क्षमता को बुरी तरह प्रभावित करती है और यह आगे आने वाली पीढ़ियों को भी प्रभावित कर सकती है। इंसानों में बीपीए बच्चों में व्यवहार से जुड़ी समस्या का कारण बन सकता है। चूहों में बीपीए मस्तिष्क के "एपिजीनोम" को बुरी तरह प्रभावित करता है। "डीएनए मिथाईलेशन" पर बीपीए बुरा असर डालता है जो कि दिमाग के व्यवहार और कामकाज को खराब कर सकता है।

हमनें अपने अध्ययनों में पाया कि बीपीए चूहों के दिमाग में हिप्पोकैम्पस में न्यूरोजेनेसिस की प्रक्रिया को बाधित करता है। न्यूरोजेनेसिस की प्रक्रिया बाधित होने से नए न्यूरोन नहीं बन पाते। इस कारण दिमाग की सीखने

और याद करने की क्षमता बुरी तरह प्रभावित होती है। "करक्यूमिन" एक पीले रंग का रासायनिक तत्व है जो कि हल्दी में सबसे ज्यादा पाया जाता है। यह एक आयुर्वेदिक दवा के तौर पर बहुत ही लाभदायक होता है। "करक्यूमिन" चूहों में न्यूरोजेनेसिस कि प्रक्रिया, जो कि बीपीए द्वारा बाधित हो जाती है, को बढ़ावा देता है। इससे बीपीए से हुई दिमाग में क्षति को रोका जा सकता है।

chih, dk of'od çHkko

बीपीए सर्वव्यापी है। यह हवा, पानी और मिट्टी तीनों जगहों में पाया जाता है। बीपीए का मुख्य श्रोत प्लास्टिक बनाने वाले उद्योग हैं। चिमनियों से धुआँ जिसमे बीपीए मौजूद रहता है वह हवा में पहुँच जाता है जिससे हवा में बीपीए का प्रदूषण फैलता है। उद्योगों से निकले गंदे पानी में बीपीए मौजूद रहता है जो कि नदियों में सीवर द्वारा पहुंचता है। यही पानी मिट्टी में भी मिल जाता है जिस कारण बीपीए मिट्टी में मौजूद रहता है। इन तीनों स्त्रोतों से बीपीए जानवरों और इंसानों में पहुँच जाता है और धीरे–धीरे शरीर को नुकसान पहुंचाता है।

बीपीए ज्यादातर विकसित देशों में प्रतिबंधित है, परन्तु विकासशील देशों और गरीब मुल्कों में अभी भी इसका प्रयोग प्लास्टिक और अन्य उत्पादों को बनाने में किया जा रहा है (चित्र 4)। इस वजह से कई बीमारियाँ भी हो रही हैं।

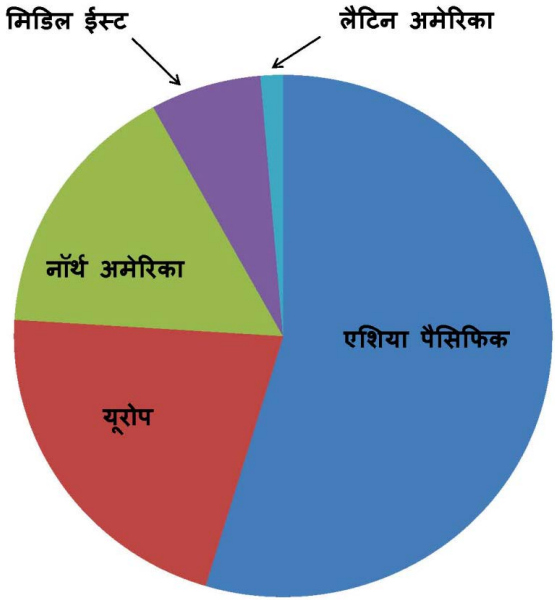

चित्र 4 : ग्लोबल बिसफिनाल–ए कैपेसिटी (2017)

chih, ds i;kZx gsrq ljdkjh fu;ked

बीपीए एक "एंडोक्राइन डिसरपटिंग" रसायन है जिससे यह देखा गया है कि उससे काफी बीमारियाँ होती हैं। वैसे तो काफी सारे शोध से यह बात साफ है कि बीपीए मानव शरीर को हानि पहुंचाता है, परन्तु सख्त सरकारी नियमों की बहुत जरूरत है जो कि उत्पादों में बीपीए के प्रयोग को कम करें, खास तौर पर खाने पीने की वस्तुओं में। कई देशों में बीपीए के उपयोग के लिए बहुत ही कड़े नियम हैं परन्तु भारत में अभी भी इसके उपयोग के लिए कोई खास नियम नहीं हैं। इसलिए प्राधिकारी को इस विषय पर गौर करना चाहिए और बीपीए के इस्तेमाल के लिए कड़े नियम लाने चाहिए ताकि इसके द्वारा मानव शरीर पर दुष्प्रभाव को रोका जा सके।

chih, ds vU; fodYi

प्लास्टिक और उसके उत्पादों का खाने में प्रयोग हानिकारक है। कई उद्योग "बीपीए फ्री" प्लास्टिक का उत्पादन कर रहे हैं। ज्यादातर "बीपीए फ्री" प्लास्टिकों में बीपीए की जगह "बीपीएस", "बीपीएफ" और "बीपीबी" आदि इस्तेमाल हो रहा है। कुछ रिसर्च के अनुसार "बीपीए फ्री" होने के बावजूद भी ये बीपीए जितने ही मानव स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव डालते हैं। इनमें और बीपीए में फर्क केवल इतना है कि बीपीए में "ऐसीटोन" ग्रुप जुड़ा हुआ है और बाकी में अलग आर ग्रुप है, जैसे कि "बीपीएफ" में "फोर्मेल्डिहायड", "बीपीबी" में "ब्यूटेनोन" और "बीपीएस" में "सल्फर ट्राइओक्साइड"। इस कारण से इन सबकी संरचना एक जैसी ही है, अतः इनका काम भी एक जैसा ही है, यानि, यह सब "जीनोएस्ट्रोजेन" कि श्रेणी में आते हैं और लगभग एक जैसी बीमारियों के लिए जिम्मेदार हैं।

IykfLVd jlk;u dh igpku

"अमेरीकन सोसाइटी ऑफ इंटरनेशनल असोशिएशन फॉर टेस्टिंग एंड मटेरियल्स" (एएसटीएम) एक अंतर्राष्ट्रीय संस्था है, जिसने विस्तृत श्रृंखला के सामग्री, उत्पादों, प्रणालियों और सेवाओं के लिए एक मानक स्थापित किया है। एएसटीएम ने "इंटरनेशनल रेसिन आइडेंटिफिकेशन कोडिंग सिस्टम" के एक सिम्बल के सेट की स्थापना की है जो कि प्लास्टिक उत्पादों में मौजूद होते हैं और प्लास्टिक को पहचानने के लिए होते हैं कि प्लास्टिक किस चीज से बना हुआ है। नीचे दिये गए टेबल (चित्र–5) में संक्षेप में दिया गया है प्लास्टिक का कोड और कौन सी प्लास्टिक को वो दर्शाता है।

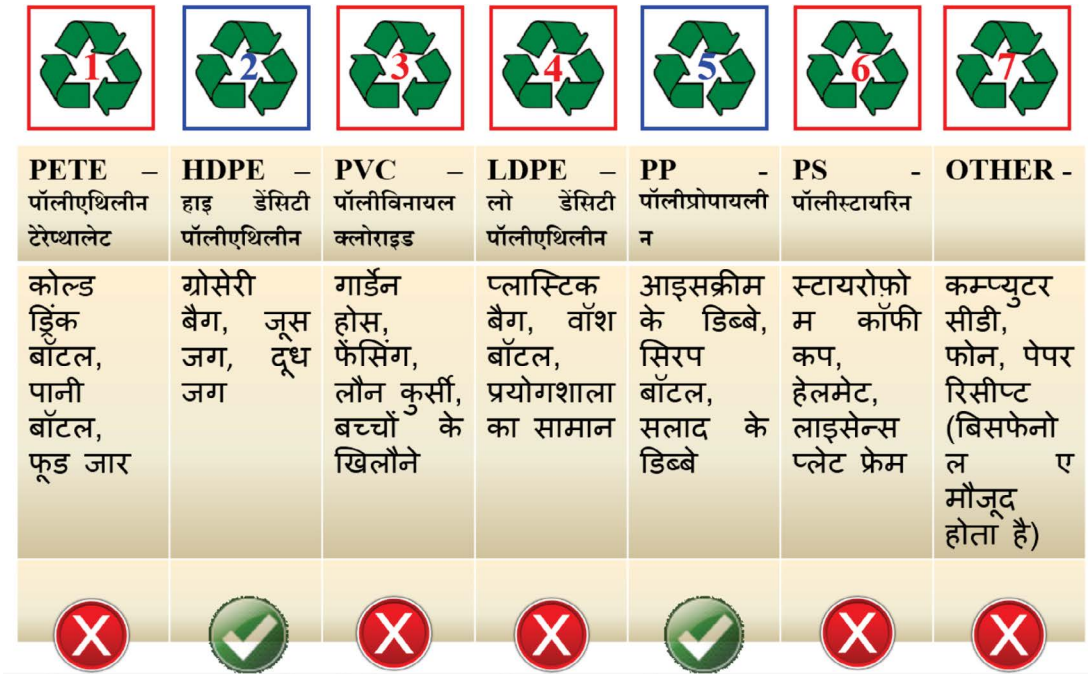

1	2	3	4	5	6	7
PETE – पॉलीएथिलीन टेरेप्थालेट	**HDPE – हाइ डेंसिटी पॉलीएथिलीन**	**PVC – पॉलीविनायल क्लोराइड**	**LDPE – लो डेंसिटी पॉलीएथिलीन**	**PP - पॉलीप्रोपायलीन**	**PS - पॉलीस्टायरिन**	**OTHER -**
कोल्ड ड्रिंक बॉटल, पानी बॉटल, फूड जार	ग्रोसेरी बैग, जूस जग, दूध जग	गार्डेन होस, फेंसिंग, लौन कुर्सी, बच्चों के खिलौने	प्लास्टिक बैग, वॉश बॉटल, प्रयोगशाला का सामान	आइसक्रीम के डिब्बे, सिरप बॉटल, सलाद के डिब्बे	स्टायरोफ़ोम कॉफी कप, हेलमेट, लाइसेन्स प्लेट फ्रेम	कम्प्युटर सीडी, फोन, पेपर रिसीप्ट (बिसफेनोल ए मौजूद होता है)
✗	✓	✗	✗	✓	✗	✗

चित्र 5 : प्लास्टिक के विभिन्न कोड

खाने की चीजों को रखने के लिए सबसे अच्छा "PP" "5" नंबर वाला प्लास्टिक होता है। बाकी लगभग सबमें बीपीए अलग अलग मात्रा में मौजूद रहता है। हालांकि प्लास्टिक का सबसे अच्छा विकल्प "स्टील", मिट्टी अथवा शीशे के बने उत्पाद हैं। चीनी मिट्टी के बर्तन भी सुरक्षित होते हैं।

बीपीए एक हानिकारक रसायन है जो कि प्लास्टिक के निर्माण में काम आता है। बच्चो की बोतलों से लेकर खेल कूद के उत्पादों में इसका प्रयोग होता है। यह बोतलों से उच्च तापमान पर बहुत कम मात्रा में भी लीच होता रहता है और पानी और अन्य द्रव्य पदार्थ में मिलकर मानव शरीर में चला जाता है। यह एक जीनोएस्ट्रोजेन है अतः यह मानव शरीर को हानि पहुंचाता है। कई शोध से यह पता चला है कि इसका बुरा प्रभाव मानव शरीर के लगभग हर अंग में होता है। यह बच्चों के विकास में बाधा डालता है जिससे आगे चलकर बहुत सी बीमारियाँ होने का खतरा बढ़ जाता है। इस कारण से प्लास्टिक के उत्पादों को जितना हो सके कम से कम इस्तेमाल करना चाहिए खास तौर पर खान–पान की चीजें रखने के लिए।

fgnh gekjs jk"Vª dh vfHkO;fDr dk ljyre L=ksr gS-----

&lqfe=kuUnu iar

ftl ns'k dks viuh Hkk"kk vkSj lkfgR; dk xkSjo dk vuqHko ugha gS] og mUur ugha gks ldrk-----

&Mk- jktsUnz izlkn

fgnh Hkkjr dh jk"VªHkk"kk rks gS gh] ;gh tura=kRed Hkkjr esa jktHkk"kk Hkh gksxh-----

&lh- jktxksikykpkjh

ekVkik ,o e/kqeg d jkdFkke e okuLifrd& jlk;uk dh çHkkoh Hkkfedk

fooid d|ekj ik.M;] vYiuk ekFkj ,o iue dDdM
नियामक विषविज्ञान समूह
सीएसआईआर–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, विषविज्ञान भवन, 31, महात्मा गांधी मार्ग
लखनऊ–226001, उत्तर प्रदेश, भारत

वैश्वीकरण का एक गंभीर परिणाम, सम्पूर्ण विश्व में और विशेषतया एशियाई देशों में पाश्चात्य–शैली के फास्ट–फूड का वृहद बाजारीकरण के रूप में उभर कर सामने आया है। इस फास्ट–फूड और सॉफ्ट–ड्रिंक (पेय पदार्थों जैसे कि स्प्राइट, कोका–कोला इत्यादि) के बढ़ते उपभोग से ओबेसिटी अर्थात मोटापा और मधुमेह (टाइप 2 मधुमेह) एक वैश्विक समस्या बन चुकी है। भोजन का सीधा संबंध मानव स्वास्थ्य से है। भोजन की मात्रा, इसके प्रकार एवं संघटक ही मानव स्वास्थ्य एवं शारीरिक चयापचय की आधारभूत इकाई हैं जो कि मोटापा और मधुमेह दोनों के नियंत्रण पर सीधा प्रभाव डालते हैं। इन चयापचय सम्बन्धी विकारों का जन्म मूलतः आहार, वजन, स्वास्थ्य, लिंग एवं व्यवसाय पर निर्भर होता है। विश्वभर में, अनुमानतया 1.5 अरब वयस्क या तो अधिक वजन के हैं या मोटापे के शिकार हैं। वहीं आई०डी०एफ० (इंटरनेशनल डाइबिटीज फेडरेशन) की एक ताजा रिपोर्ट के अनुसार 366 मिलियन डाइबिटीज (मधुमेह) पीड़ितों में 80 प्रतिशत लोग या तो निम्न या मध्यम आय वाले देशों से संबन्धित थे जिनमें एशिया से सर्वाधिक 60 प्रतिशत लोग पाये गए। चयापचय में उत्पन्न विकारों से होने वाली दो प्रमुख बीमारियों, मोटापा एवं मधुमेह के लक्षणों, कारकों, उपलब्ध उपचार एवं वानस्पतिक–संघटकों द्वारा नियंत्रण का संक्षिप्त विवरण इस लेख में प्रस्तुत है।

ekVkik ¼vkcflVh½

मोटापा अर्थात ओबेसिटी, वह अवस्था है जिसमे शरीर पर अत्यधिक वसा का संचयन और बॉडी मास इंडेक्स (बी०एम०आई०) 30किग्रा/मीटर^2 से अधिक हो जाता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन की एक रिपोर्ट के अनुसार विश्व भर में लगभग 39% वयस्क मोटापे का शिकार हैं। अत्यधिक वजनी होना या मोटा होना व्यक्ति के स्वास्थ्य, सामाजिक एवं आर्थिक स्थितियों पर बुरा प्रभाव डालता है। मोटापा बढ़ने से मधुमेह, हृदय–विकार, उच्च रक्तचाप एवं कैंसर (स्तन कैंसर, कोलन एवं एंडोमिट्रियल कैंसर) होने का खतरा अत्यधिक बढ़ जाता है।

dkjd

मोटापा समय के साथ होने वाला वह मेटाबोलिक विकार है जो आवश्यकता से अधिक कैलोरी–युक्त भोजन ग्रहण करने एवं शारीरिक श्रम में समन्वय न होने से होता है। ओबेसिटी उत्पन्न करने वाले विभिन्न कारक हो सकते हैं जिनमें से कुछ निम्नलिखित हैं :

1. आहार की मात्रा एवं प्रकार
2. आहार एवं शारीरिक क्रियाशीलता में तालमेल की कमी
3. आनुवंशिकता
4. सुस्त जीवनशैली
5. चिकित्सीय दुष्प्रभाव
6. मानसिक तनाव एवं बीमारियां
7. अपर्याप्त नींद
8. इंडोक्राइन डिसआर्डस (पर्यावरणीय संदूषक जो कि लिपिड मेटाबोलिज्म में बाधा उत्पन्न करते हैं)
9. एपिजिनेटिक कारक

vkcflVh ¼ekVkik½ dk miyC/k mipkj ,o okuLifrd&jlk;uk dh Hkkfedk

आहार पर नियंत्रण और नियमित व्यायाम ही मोटापे को नियंत्रित करने के प्रमुख उपचार हैं। वजन कम करने के लिए कम–कार्बोहाइड्रेट युक्त आहार, कम–वसीय आहार से उत्तम माने जाते हैं। इसके अलावा कुछ औषधियाँ जैसे की लोर्कासेरिन, लीराग्लुटाइड, ओर्लीस्टाट इत्यादि वजन कम करने हेतु उपलब्ध हैं, जिनका असर लगभग 1 वर्ष के सेवन के बाद होता है और वह भी मात्र 4–6 किग्रा ही वजन कम हो पाता है। ये दवाएं स्वास्थ्य पर प्रतिकूल

प्रभाव भी डालती हैं जिससे हृदय एवं गुर्दा सम्बन्धी रोगों से ग्रसित होने की संभावना बढ़ जाती है। मोटापे का अब तक का सबसे असरदार उपचार शल्य–चिकित्सा के द्वारा किया जाता है जिसे चिकित्सीय भाषा में बैरियाट्रिक सर्जरी के नाम से जाना जाता है परंतु इसका खर्चा अत्यधिक होने के कारण आम–जनमानस तक इस इलाज का पहुँचना एक चुनौती है।

उपलब्ध उपचारों के प्रतिकूल प्रभावों और महँगे होने के कारण खाद्य पदार्थों में पाये जाने वाले वानस्पतिक (हर्बल) रसायन, मोटापे को कम करने का एक प्रभावी विकल्प हो सकती हैं। मौजूदा शोधपत्रों से यह ज्ञात होता है कि पादप–संघटक अपनी प्रभावशाली एंटी–ऑक्सीडेंट क्रियाशीलता के चलते मोटापा नियंत्रित करने एवं उससे होने वाली जटिलताओं को कम करने में सक्षम हैं। कुछ वानस्पतिक–रसायन जो कि ओबेसिटी से उत्पन्न जटिलताओं को कम करने मे सक्षम पायी गयी, जो निम्नवत हैं :

rkfydk 1 % okuLifrd jlk;uksa ds iHkko

ØŒ lŒ	okuLifrd& jlk;u	L=kr	iHkko
1	कैफेइक एसिड	यूकेलिप्टस, साल्वीनिया	सीरम कोलेस्ट्रॉल एवं मोटापा कम करने मे सहायक
2	करक्यूमिन	हल्दी	लिपिड संचय को कम करता है एवं एडिपोज ऊतकों को नष्ट करता है
3	रेस्वेराट्राल	अंगूर	लिपिड संचय को कम और लिपोलिसिस को बढ़ा देता है, वजन कम करता है
4	कर्सेटिन	सौंफ, मूली, सेब, ब्राक्ली	लिपिड संचयन के जीन्स की अभिव्यक्ति को कोशिकाओं में कम करता है
5	कैप्सेसिन	मिर्च	मोटापे से उत्पन्न इन्फ्लामेशन तथा अन्य मेटाबोलिक विकारों को कम करता है
6	कैरोटिनोएड्स	शैवाल, पौधे, बैक्टीरिया, फंजाई	मोटापा तथा इन्फ्लामेशन कम करने में सहायक
7	एजोईन	लहसुन	कोलेस्ट्रॉल संश्लेषण को रोकता है , एडिपोज कोशिकाओं की मृत्युदर

lkzr % जी० ए० मोहम्मद एवं समूह के रिव्यू आर्टिकल नैचुरल एंटी एंड ओवेसिटी एजेन्ट्स से परिवर्तित एवं उद्धृत।

e/kqesg ¼Mkbfc Vht½

मधुमेह (डाइबिटीज) एक ऐसी बीमारी है जिसमें या तो पैंक्रियाज (अग्न्याशय) उचित मात्रा में इंसुलिन नही बना पाता है या मानव शरीर इंसुलिन का समुचित उपयोग नहीं कर पाता है। इंसुलिन, ग्लूकोज कणों को कोशिकाओं के भीतर पहुचाने का कार्य करता है जिसके चयापचय से शरीर को ऊर्जा मिलती है। अतः ग्लूकोज के कोशिकाओं में न पहुँचने से जहां एक ओर ऊर्जा का ह्रास होता है वहीं दूसरी ओर रक्त में ग्लूकोज का स्तर अत्यधिक बढ़ जाने से शरीर को क्षति पहुँचती है। समय के साथ उच्च रक्त–शर्करा शरीर के कई प्रमुख अंगों को नुकसान पहुंचाती है जिससे हृदयाघात (हार्ट–अटैक), तंत्रिका–तंत्र मे क्षति, गुर्दों को क्षति, दृष्टिहीनता, नपुंसकता एवं संक्रमण होने का खतरा बना रहता है (चित्र 1)।

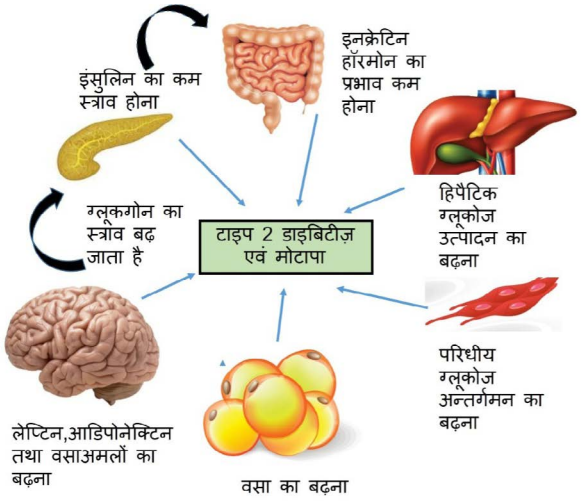

चित्र 1: टाइप 2 मधुमेह व मोटापे में होने वाली मुख्य विकृतियां

आई०डी०एफ० 2015 की एक रिपोर्ट के अनुसार सम्पूर्ण विश्व में तकरीबन 415 मिलियन (41.50 करोड़) लोग मधुमेह से पीड़ित हैं जिनकी संख्या 2040 तक बढ़कर 642 मिलियन (64.20 करोड़) होने के आसार हैं। इसी रिपोर्ट के अनुसार 2015 में भारत में तकरीबन 6.91 करोड़ लोग मधुमेह से पीड़ित पाये गए। विश्व में, मधुमेह से होने वाली मृत्यु का आंकड़ा 2015 में, एड्स, तपेदिक (टी०बी०) और मलेरिया से होने वाली मृत्यु से अधिक था। ये आंकड़े मधुमेह को एक विकराल समस्या के रूप में प्रदर्शित करते हैं तथा इंगित करते हैं कि मधुमेह की जानकारी, इससे होने वाली समस्याओं और इसके उपचार के प्रचार–प्रसार की नितांत आवश्यकता है। इस समस्या की महत्ता इससे भी प्रदर्शित होती है कि बीते वर्ष 2016

में 230 आई०डी०एफ० सदस्य देशों, संस्थाओं, हेल्थकेयर प्रोफेशनल्स इत्यादि ने एक साथ मिलकर 14 नवंबर को विश्व मधुमेह दिवस के रूप में मनाया जिसकी विषय–वस्तु "आईज ऑन डाइबिटीज" थी।

e/keg d çdkj

मधुमेह बीमारी मुख्यतः दो प्रकार की होती है :

Vkbi 1 MkbfcVht % यह सामान्यतः युवा–अवस्था में होने वाला मधुमेह है, जिसमे इंसुलिन शरीर में अपर्याप्त मात्रा में बनता है। इंसुलिन कम बनने का मुख्य कारण, शरीर में उत्पन्न प्रतिरक्षा कणों द्वारा पैंक्रियाज की बीटा–कोशिकाओं (इंसुलिन उत्पादक कोशिका) का विनाश करना है। पैंक्रियाज की बीटा–कोशिकाओं का यह क्षरण धीरे–धीरे कई महीनों अथवा वर्षों में होता है और यह अवस्था तब आती है जब अधिकाधिक कोशिकाओं का क्षरण हो जाता है। कोशिकाओं का यह क्षरण प्राकृतिक कारकों या आनुवांशिक कारणों से उत्प्रेरित होता है और इससे रक्त में इंसुलिन की मात्रा बहुत कम हो जाती है जिससे ग्लूकोज का कोशिकिय–अन्तः गमन प्रभावित हो जाता है। डाइबिटीज के रोगियों में टाईप 1 डाइबिटीज से पीड़ित रोगियों की संख्या तकरीबन 10 प्रतिशत है।

Vkbi 2 MkbfcVht % यह मुख्यतः वयस्कों मे होता है और इसको इंसुलिन आश्रित मधुमेह (insulin dependent diabetes) भी कहा जाता है। इस मधुमेह के रोगियों की कोशिकाओं की सतह पर उपस्थित इंसुलिन रिसेप्टर्स,इंसुलिन के लिए प्रतिरोधी हो जाते हैं और इंसुलिन से होने वाली आण्विक संकेतन (molecular signaling) को बाधित कर देते हैं। लिवर कोशिकाओं के इंसुलिन रिसेप्टर्स का इंसुलिन के लिए ही प्रतिरोधक हो जाने से लिवर द्वारा हो रहे ग्लूकोज उत्पादन को रोकने में कोशिकाएं अक्षम हो जाती हैं, जिससे रक्त में ग्लूकोज की मात्रा और अधिक बढ़ जाती है। टाइप 2 डाइबिटीज से पीड़ित रोगियों की संख्या तकरीबन 90 प्रतिशत है।

e/keg y{k.k] dkjd ,oa eY;kdu

मधुमेह के प्राथमिक लक्षणों में अत्यधिक भूख लगना, बार–बार प्यास लगना, बहुमूत्रता एवं धुंधला दिखाई देना शामिल है। मधुमेह की जटिलता बढ़ने पर हृदय–संबंधी बिमारियाँ, तंत्रिका–तंत्र संबंधी रोग, किडनी संबंधी रोग एवं संक्रामक बीमारियों के होने का खतरा अत्याधिक बढ़ जाता है। मधुमेह के कारकों में मुख्यतः मोटापा, सुस्त जीवनशैली, आनुवांशिकी एवं अधिक उम्र का होना शामिल हैं (चित्र 2)।

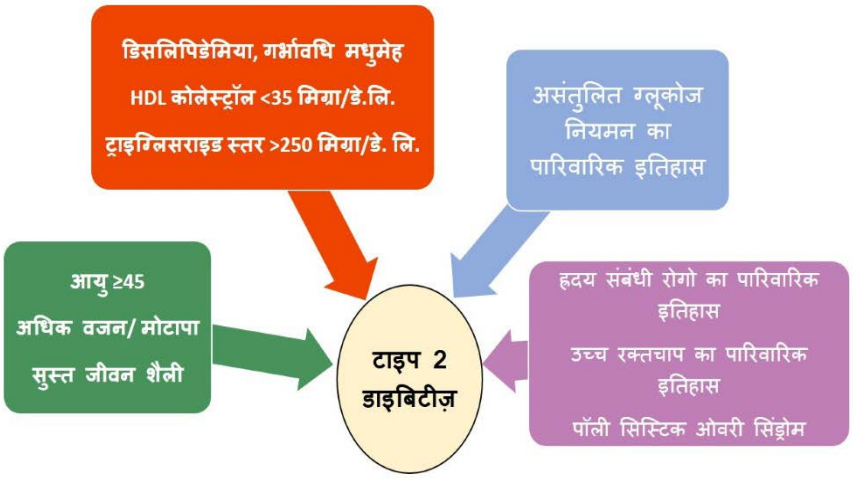

चित्र 2: मधुमेह के कारक

स्त्रोतः इरिजैरी के०ए० एवं समूह द्वारा प्रकाशित शोध पत्र से उपांतरित।

प्राथमिक रूप से मधुमेह का मूल्यांकन (diagnosis) रक्त में उपस्थित ग्लूकोज की मात्रा को माप कर किया जाता है। इसके अलावा मूल्यांकन के अन्य पैरामीटर्स आगे दी गयी तालिका में वर्णित हैं।

rkfydk 2% e/keg eY;kdu d ijkehVl

जाँच	औसत स्तर	असंतुलित ग्लूकोज नियमन	डाईबीटीज
फास्टिंग प्लाज़्मा ग्लूकोज (मिग्रा/डे.लि.)	<100	100-125	≥126
ओरल ग्लूकोज टोलेरंस टेस्ट (मिग्रा/डे.लि.)	<100	140-190	≥200
एचबी ए1सी (%)	<5.7	5.7-6.4	≥6.5

e/kqesg dk orZeku mipkj ,oa okuLifr d&jlk;uksa dh Hkwfedk

वर्तमान में उपलब्ध मधुमेह के उपचार बहुत महँगे और शरीर पर प्रतिकूल प्रभाव डालने वाले हैं। मेटफॉर्मिन, जो कि मधुमेह के उपचार में अधिकतम प्रयोग की जाने वाली दवा है, उससे अपच, थकान, चक्कर आना, जैसी समस्या आम है। दूसरी महत्त्वपूर्ण दवा ग्लिबिंक्लामाइड से रक्त–शर्करा का अत्यंत कम हो जाना, त्वचा में लाल चकत्ते एवं खुजली तथा वजन बढ़ने जैसी समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं। इन दवाओं के प्रतिकूल प्रभावों से निजात पाने की खोज के दौरान फ्लेवोनोइड्स ने वैज्ञानिकों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया है। फ्लेवोनोइड्स पौधों में पाये जाने वाले फिनोल समूह के रसायनों में सर्वाधिक पाया जाने वाला फिनोल रसायन है। फ्लेवोनोइड्स खाद्य पदार्थों में प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। कर्सेटिन और इसका ग्लायिकोसीडिक रूप, रुटिन, खाद्य पदार्थों के साथ सबसे ज्यादा उपभोग किए जाने वाले फ्लेवोनोइड्स हैं।

Hkkjrh; fo"kfoKku vuqla/kku laLFkku dh 'kks/k esa e/kqesg ij çHkkoh ikS/ks ,oa ¶ysoksukbM~l ¼okuLifr d&jlk;u½

ekfju

हाल में हुए शोधों से पर्याप्त प्रमाण मिलते हैं कि पॉलीफिनोल्स अपनी विशिष्ट जैविक गुणवत्ता के चलते टाइप 2 डाइबिटीज के उपचार में खाद्य–पूरक पदार्थ या न्यूट्रासुटिकल्स के रूप मे उपयोग किए जा सकते हैं। मोरिन (3,5,7,2′,4′–पेंटाहाइड्रोक्सीफ्लैवोन), एक प्राकृतिक जैव–फ्लैवोनोइड है जो कि अमरूद, संतरा,शहतूत, अंजीर, बादाम एवं कई प्रकार के साग–सब्जियों में पाया जाता है। अभी–तक के शोध से पता चलता है कि मोरिन एक प्रबल एंटी–ऑक्सीडेन्ट, एंटी–इन्फ्लामेट्री एवं एंटी–हाइपरग्लाइसीमिक गुणवत्ता वाला जैव–पॉलीफिनोल है। प्रकाशित एक शोध से पता चलता है कि मोरिन पैंक्रियाज से होने वाले इंसुलिन स्राव को बढ़ा देता है। एक और शोधकर्ताओं के समूह ने अपने शोध में पाया कि मोरिन प्रोटीन फास्फटेज 2, नामक प्रोटीन की क्रियाशीलता को रोक करके इंसुलिन सिग्नलिंग को बढ़ा देता है जिससे यह तर्क निकाला जा सकता है कि मोरिन, इंसुलिन की तरह कार्य करने वाला पॉलीफिनोल है।

हमारी अपनी प्रयोगशाला में द्वारा किए गए शोध में पाया गया कि उच्च–शर्करा यानि मधुमेह से प्रेरित कोशिका मृत्यु (एपॅपटोसिस) को मोरिन ने कम कर दिया तथा एंटी–ऑक्सीडेंट एंजाइमों की क्रियाशीलता को बढ़ा दिया। वर्तमान में चल रही हमारी शोध से पर्याप्त प्रमाण मिल रहे हैं कि मोरिन, चूहों के लिवर और किडनी में मधुमेह से होने वाली क्षति को रोकता है। साथ ही यह पाया गया कि मोरिन उच्च–शर्करा से उत्पन्न अति–क्रियाशील ऑक्सिजन प्रजातियों (ROS)को तथा इनसे होने वाले नाभिकीय क्षति, माइटोकान्ड्रिया एवं इंडोप्लाज्मिक–रेटीकुलम की अक्रियशीलता को कम करता है।

cjcjhu

बरबरीन, *बरबेरिस अरिस्टाटा* की जड़ों में पाया जाने वाला एक महत्त्वपूर्ण फ्लैवोनोइड है जो कि रक्त में उच्च–शर्करा तथा बढ़ी हुई लिपिड की मात्रा को कम करता है। संस्थान में किये गये शोध से यह ज्ञात होता है कि बरबरीन, मधुमेह से ग्रसित चूहों में न केवल प्रति–आक्सीकारक एंजाइमों (कैटालेज, एस०ओ०डी०, ग्लूटाथिओन परआक्सीडेज इत्यादि) की क्रियाशीलता को बढ़ाता है अपितु लिपिड परआक्सीडेशन एवं प्रोटीन कार्बोनाइलेशन को भी कम करता है। इस शोध के अनुसार, बरबरीन, ग्लूकोकाइनेज एवं ग्लूकोज 6 फास्फोडिहाइड्रोजिनेज की क्रियाशीलता को भी मधुमेह से पीड़ित चूहों में बढ़ा देता है। बरबरीन, मोटापा कम करने में भी सहायक है। बरबरीन ग्लाइकोलिसिस को बढ़ावा देता है तथा ए०एम०पी०के० प्रोटीन्स की क्रियाशीलता को भी बढ़ा देता है जिससे रक्त में बढ़ी हुई शर्करा को कम करने में मदद मिलती है। इसके साथ–साथ बरबरीन अल्फा–ग्लूकोसाइडेज के प्रावरोधक के रूप में भी कार्य करता है।

ufjuftfuu

मोरिन एवं बरबरीन के अतिरिक्त हमारी प्रयोगशाला में एक और जैव–फ्लैवोनोइड, नैरिनजेनिन पर मधुमेह की जटिलताओं को कम करने के लिए शोध किया गया। नैरिनजेनिन अंगूर, टमाटर, ग्रीक–ओरिगानो, मिंट एवं बीन्स में पाया जाने वाला एक फ्लैवोनोइड है। इस प्रयोगशाला में किए गए शोध में पाया गया कि नैरिनजेनिन उच्च–शर्करा–प्रेरित, माइटोकान्ड्रिया के माध्यम से होने वाली कोशिका मृत्यु (apoptosis) जो कि ए०आई०एफ०, एंडोन्यूक्लिएज–जी एवं कैस्पेज द्वारा होती है, को रोकता है। अन्य वैज्ञानिक समूहों द्वारा किए गए कार्यों से पता चलता है कि नैरिनजेनिन में एंटी–इन्फ्लामेट्री, कार्बोहाइड्रेट चयापचय एवं प्रतिरक्षा–तंत्र

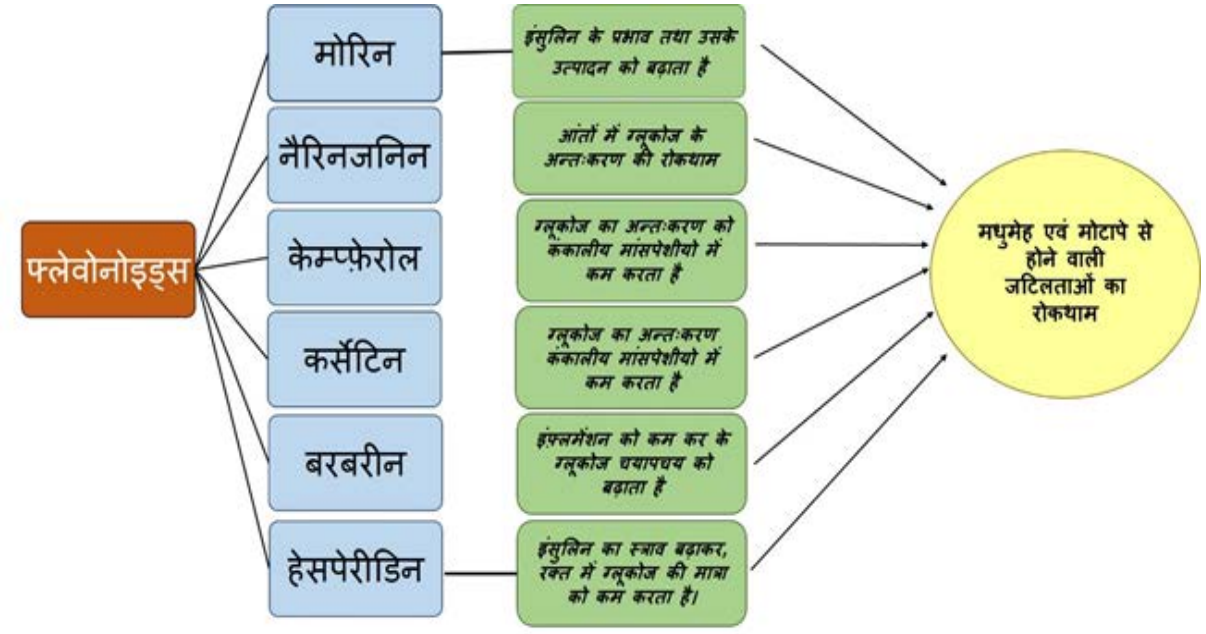

चित्र 3: मधुमेह नियंत्रण में कारगर फ्लेवोनोइड्स

को मजबूत करने के गुण मौजूद हैं। इनके अतरिक्त विश्व भर में किए जा रहे कई शोध से पता चलता है कि अन्य फ्लैवोनोइड जैसे बरबरीन, रेस्व्रेट्रोल, हेसपेरीडिन एवं कैम्फेरोल इत्यादि मधुमेह को नियंत्रित करने में कारगर साबित हो सकते हैं।

e/kqeg dk fu;a=r djus esa fofHkUu Qyoksuk;M dh Hkwfedk

अतएव, इस निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है कि अनेकों फ्लैवोनोइड ऐसे हैं जो चयापचय के विकार द्वारा उत्पन्न जटिलताओं से बचाने में सक्षम हैं (चित्र 3)। फ्लेवोनोइड्स का कोशिकीय अणुओं के साथ परस्पर प्रभावों पर अभी और शोध की आवश्यकता है जिससे इनके क्रियाशीलता की सटीक जानकारी मिल सके। वर्तमान दवाओं के साथ फ्लैवोनोइड्स के उपयोग पर भी शोध की आवश्यकता है जो शायद इन दवाओं से होने वाले शारीरक क्षति को कम कर सके।

vxj geas i;kZoj.k dh x|.koÙkk esa lq/kkj ykuk gS rks dqoy ,d gh rjhdk gS] lcdks 'kkfey djuk----

fjpMZ jkt lu

iFoh lHkh euq";ksa dh t:jr iwjh djus ds fy, i;kZIr lalk/ku çnku djrh gS] yfdu ,d dk Hkh ykyp iwjk djus ds fy, ugÈ----

egkRek xka/kh

i;kZoj.k çnw"k.k ,d ykbykt chekjh gSA bls doy jksdk tk ldrk gS----

cjh d,euj

d\lj d\ f[kykQ U;VkL;fVdYl d\ lHkkfor mi;kx% ,d c<\rk çfreku

b'k\ fl\g ,o\ ;kx'oj 'kDyk

खाद्य, औषधि एवं रसायन विषविज्ञान समूह

सीएसआईआर–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, विषविज्ञान भवन, 31, महात्मा गांधी मार्ग

लखनऊ–226001, उत्तर प्रदेश, भारत

यह सर्वविदित है कि शरीर के सामान्य कार्यों में खाद्य व पोशक तत्व महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वे व्यक्ति के स्वास्थ्य को बनाए रखने और कैंसर सहित विभिन्न रोगो के जोखिम को कम करने मे सहायक होतें हैं। इस तथ्य की दुनिया भर मे स्वीकृति ने "आहार" और "स्वास्थ्य" के बीच एक मान्यता कडी का गठन किया और इस तरह न्यूट्रास्युटिकल्स की अवधारणा अस्तित्व में आई। अनुसंधान के आंकड़े बताते हैं कि न्यूट्रास्युटिकल्स स्वास्थ्य को बेहतर बनाए रखने, प्रतिरक्षा को कम करने वाले रोगों को रोकने, तथा पुरानी बीमारियों का इलाज करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इस प्रकार न्यूट्रास्युटिकल्स पदार्थों के क्षेत्र को मनुष्य के स्वास्थ्य लाभ में लापता ब्लॉकों के रूप मे देखा जा सकता है। किसी भी अन्य बीमारी की तुलना में कैंसर होने के कई कारण है। कैंसर से जुड़े विभिन्न आण्विक मार्गों को सकारात्मक रूप से प्रभावित करने के लिए न्यूट्रास्युटिकल्स की क्षमता को कैंसर के उपचार में एक बहुत बड़ा अवसर माना जाता है। हमारी प्रर्योगशाला के आंकड़ो में, चाय, लहसुन, लाइकोपीन, रेस्वेराट्रोल, पेट्रोस्टील्वीन, जिंजरोल, ल्यूपोल, ब्रोमोलाइन, गिंजरोल आदि जैसे न्यूट्रास्युटिकल्स ने विभिन्न प्रयोगात्मक और साथ ही नैदानिक स्तरों पर कारगर साबित हुआ है (चित्र 1)। क्यूंकि उनमें वैश्विक स्वास्थ्य देखभाल लागत को कम करने के साथ–साथ वर्तमान कैंसर केमोथेरेपी से जुड़े कुप्रभावों को भी कम करने की क्षमता है। इसके अलावा हमने यह भी दिखाया कि संयोजन मे न्यूट्रास्युटिकल्स इन कारकों की तुलना में बेहतर दमनकारी विधि और समर्थन प्रदान कर सकते हैं। जो कि आहार विशेषज्ञों की सहायता से नवीन संयोजन उपचार/रसायनमोचन का विकार कैंसर के प्रति अधिक फायदेमंद होगा। इसके अलावा त्वचा, फेफड़े, बड़ी आंत, ग्रीवा और स्तन कैंसर पर इन फाइटो मोलिक्युल्स के लाभकारी प्रभाव, कैंसर प्रबंधन में न्यूट्रास्युटिकल्स का उपयोग चिकित्सा को सामयिक करने के लिए है। कई और अध्ययनो में यह देखा गया है कि कैंसर कि रोकथाम और उपचार प्रबंधन के लिए, नवनिक अध्ययन के अनुरूप न्यूट्रास्युटिकल्स के लिए सबसे आवश्यक लक्ष्य लगातार परिणामों का प्रदर्शन करते रहना आवश्यक है।

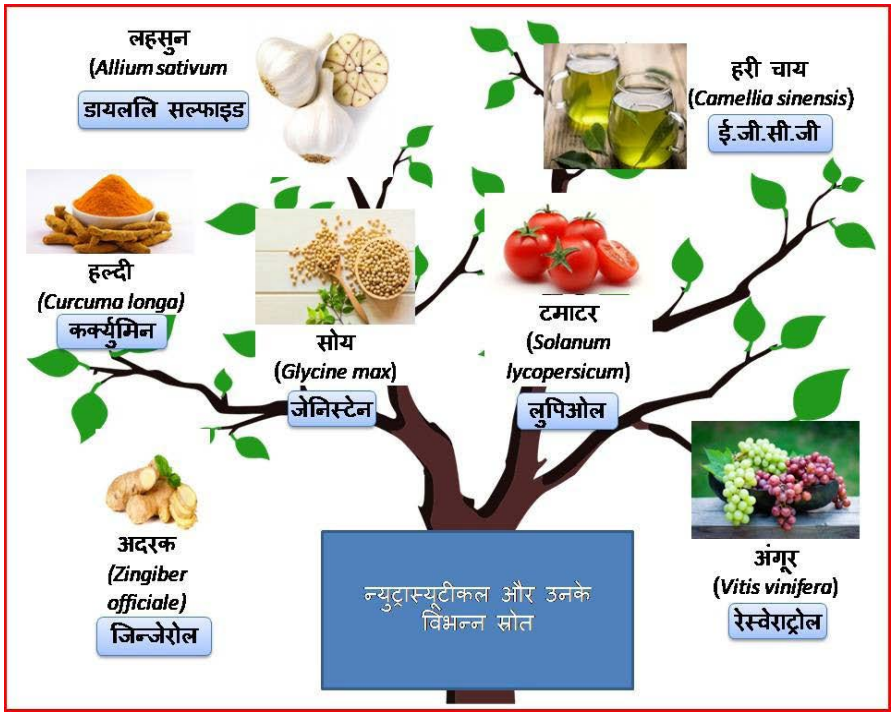

चित्र 1: न्युट्रास्युटिकल्स और उनके विभिन्न स्रोत

ikf"Vd&vk"kèkh; inkFk

'न्यूट्रास्यूटिकल' शब्द को 1989 में स्टीफन डीफेलिस द्वारा "न्यूट्रिशन" और "फार्मास्यूटिकल" शब्दों के मेल से बनाया गया था। न्यूट्रास्यूटिकल को एक भोजन (या भोजन का हिस्सा) के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो किसी बीमारी की रोकथाम और/या उपचार सहित चिकित्सा या स्वास्थ्य लाभ प्रदान करता है।

इसके अलावा, ये उत्पाद कम महंगे, सुरक्षित और सिंथेटिक एजेंटों की तुलना में अधिक आसानी से उपलब्ध हैं। कुछ न्यूट्रास्यूटिकल्स वर्तमान में नैदानिक परीक्षणों के तहत हैं, लेकिन कई को नैदानिक उपयोग के लिए पहले से ही मंजूरी दे दी गई है। पिछले दशक में, कैंसर से लड़ने के लिए विभिन्न रासायनिक संरचनाओं के साथ न्यूट्रास्यूटिकल्स की संख्या की पहचान की गई है।

uvkIykfLVd fodkl d f[kykQ U;VkL;fVdYl dh Hkkfedk

पिछले दो दशकों में, बहुत से साक्ष्य सामने आए हैं कि, आणविक स्तर पर, कैंसर समेत अधिकांश पुरानी बीमारियां, एक अपर्याप्त सूजन प्रतिक्रिया के कारण होती हैं। सूजन अक्सर निओप्लास्टिक विकास से जुड़ी होती है और प्रिमालिग्नंत और कोशिकाओं के घातक परिवर्तन में एक प्रेरक शक्ति के रूप में कार्य करती है। अब इस धारणा का समर्थन करने वाले साक्ष्य बढ़ रहे हैं कि पुरानी सूजन से त्वचा, पेट, कोलन, स्तन, प्रोस्टेट और पैनक्रियास सहित विभिन्न अंगों की घातकता हो सकती है। प्रो इंफ्लेमेटरी ट्रांसक्रिप्शन कारक परमाणु कारक – कप्पा बी (एनएफ–केबी), सूजन और कैंसर के बीच महत्वपूर्ण संबंध स्थापित करता है। एनएफ– केबी एक सर्वव्यापी और विकासवादी संरक्षित प्रतिलेखन कारक है जो परिवर्तन, अस्तित्व, प्रसार, आक्रमण, एंजियोजेनेसिस और कैंसर कोशिकाओं के मेटास्टेसिस में शामिल गुणधर्म की अभिव्यक्ति को नियंत्रित करता है। कई न्यूट्रस्यूटिकल्स को एनएफ–केबी सिग्नल्लिंग पाथवे को दबाने से केमोप्रोवेन्टिव / एंटीकेन्सर गतिविधि को लागू करने के लिए दिखाया जाता है।

मानव अनजाने में पर्यावरणीय समस्याओं जैसे कि कीटनाशक, धुएं, ऑटोमोबाइल निकास, आयनकारी, पराबैंगनी विकिरण इत्यादि के संपर्क में आते हैं, जिससे कोशिकाओं के भीतर चयापचय गतिविधि द्वारा ऑक्सीडेंट का गठन होता है। अधिक मात्रा में, ये ऑक्सीडेंट असंतुलन पैदा कर सकते हैं, जिससे प्रतिक्रियाशील ऑक्सीजन प्रजातियों (आरओएस) या ऑक्सीडेटिव तनाव का उत्पादन होता है। आम तौर पर, आक्साइड और एंटीऑक्सीडेंट रक्षा प्रणालियों के बीच संतुलन होता है, इनके बीच असंतुलन ऑक्सीडेटिव तनाव पैदा कर सकता है। ऑक्सीडेटिव तनाव डीएनए, प्रोटीन और लिपिड जैसे सेलुलर घटकों की संरचना को बदल सकता है, तथा विभिन्न तंत्रों के माध्यम से कोशिका मृत्यु या कैंसर के विकास को प्रेरित कर सकता है।

ऑक्सीडिएटिव तनाव का असंतुलन विभिन्न ट्रांसक्रिप्शन कारकों (जैसे, एनएफ–केबी) और माइटोजेन–सक्रिय प्रोटीन केनेस (एमएपीके) के फॉस्फोरिलेशन कैस्केड के सक्रियण सहित कई सिग्नलिंग मार्गों के सक्रियण को प्रेरित करने में सक्षम है।

इस प्रकार, ऑक्सीडेटिव तनाव की दर को कम करने और एंटीऑक्सिडेंट सुरक्षा तंत्र बढ़ाने से कैंसर पर नियंत्रण प्राप्त किया जा सकता है। ऑक्सीडिएटिव तनाव की स्थिति को दबाकर कैंसर के खतरे को कम करने में न्यूट्रास्यूटिकल्स में मौजूद आहार एंटीऑक्सीडेंट की संभावित भूमिका शोध पत्रों में अच्छी तरह से प्रलेखित किया गया है।

नियोप्लास्टिक विकास का एक अन्य प्रमुख कारण शरीर होमियोस्टेसिस का विघटन होता है, जो जीवित प्राणियों की मूलभूत विशेषता है। सेल, प्रसार और एपोप्टोसिस के बीच संतुलन, समस्थिति के रखरखाव में एक महत्वपूर्ण कदम है।

एपोप्टोसिस का अपघटन कैंसर का एक हॉलमार्क है और कैंसर के विकास और ट्यूमर सेल अस्तित्व के लिए महत्वपूर्ण है। कैंसर कोशिकाएं मुख्य रूप से दो सिग्नलिंग मार्गों के माध्यम से एपोप्टोसिस कर सकती हैं: बाह्य (रिसेप्टर मध्यस्थ) और आंतरिक (माइटोकॉन्ड्रिया मध्यस्थ)।

बाह्य मार्ग प्रोअपोपटोटिक और एंटीअपोपटोटिक प्रोटीन के एक जटिल सेट द्वारा प्रेरित किया जाता है, जिसमें कैस्पेस परिवार प्रोटीन, बैक्स, बी सेल लिम्फोमा (बीसीएल)–2 पारिवारिक प्रोटीन, साइटोक्रोम सी, एपोप्टोटिक प्रोटीएज़ सक्रियण कारक (एपीएएफ) –1, और मृत्यु रिसेप्टर्स (एपीओ–1 / ट्रेल)। आंतरिक मार्ग सेलुलर विकासात्मक सिग्नल द्वारा या डीएनए क्षति सहित गंभीर सेलुलर तनाव के परिणामस्वरूप शुरू किया जाता है। कुछ

एंटीअपोपटोटिक प्रोटीन, जैसे कि बीसीएल–2 और बीसीएल–एक्सएल, कई कैंसर के प्रकारों में अतिवृद्ध होते हैं। इसलिए, कैंसर कोशिकाओं में चुनिंदा एंटीअपोपटोटिक प्रोटीन्स के डाउनरेगुलेशन और प्रोअपोपटोटिक प्रोटीन्स के अपरेगुलेशन, कैंसर उपचार मे हस्तक्षेप करते हैं।

परंपरागत कैंसर उपचार गंभीर दुष्प्रभाव पैदा करते हैं और कई प्रकरण ऐसे हैं जिनमें रोगी को कैंसर से मुक्ति मिल जाती है परंतु अंग विफलता और इम्म्यूनो–सप्रेशन के कारण उनकी मृत्यु हो जाती है। इन विसंगतियों के निवारण के लिए फाइटोकेमिकल्स की सहायता लेने का सुझाव दिया जा रहा है। शरीर की सामान्य कोशिकाओं को प्रभावित किए बिना एक नियोप्लास्टिक सेल लाइन में एपोप्टोसिस की प्रेरण फाइटोकेमिकल्स के कैंसर के खिलाफ केमोप्रोवेन्टिव एजेंट के रूप में उपयोग के पक्ष में एक महत्वपूर्ण संकेत है।

आहार में प्राकृतिक यौगिकों का उपयोग करने का उद्देश्य ऊतकों में इन यौगिकों के केमोप्रोवेन्टिव गुणों को प्रस्तुत करना है (चित्र 2)। कई अध्ययनों के यह सिद्ध किया गया है कि वैयक्तिक रूप से इन यौगिकों की एकल खुराक भी कीमोप्रिवेंशन के लिए प्रभावी है। परन्तु इन–वीवो अवस्था में सीरम में इन यौगिकों की उच्च सांद्रता प्राप्त करने में असमर्थता एक समस्या का विषय है। यद्यपि नैदानिक उपचार में संयोजित रूप से इन यौगिकों के प्रयोग का अध्ययन अभी प्राथमिक स्तर पर है, इस क्षेत्र में किये गये अध्ययनों ने दिखाया है कि यौगिकों के सहक्रियात्मक प्रभाव वैयक्तिक प्रयोग कि तुलना में बहुत कम खुराक पर हासिल किए जा सकते हैं।

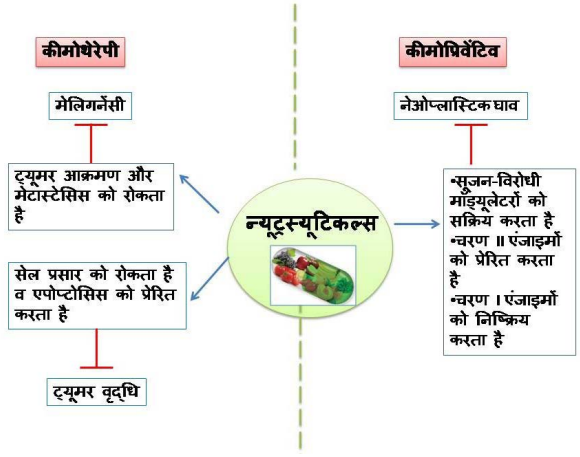

चित्र 2: खाद्य पदार्थों में उपस्थित जैव–सक्रिय अवयवों का कोशिकाओ के आतंरिक तंत्रों पर प्रभाव

ट्यूमर विकास को रोकने या कैंसर की घटनाओं के जोखिम को कम करने के लिए केमोप्रोवेन्टिव एजेंटों को प्रारंभिक हस्तक्षेप दृष्टिकोण के रूप में बहुत अधिक मांग की जाती है। यह देखते हुए कि कैंसर के वर्त्तमान उपचार के उपलब्ध उपाय, अर्थात केमोथेरेपी, विकिरण और शल्यचिकित्सा, सभी विकृत दुष्प्रभावों को प्रेरित कर सकते हैं, वैकल्पिक या सहायक उपचार की तत्काल आवश्यकता उत्पन्न हुई है।

l;ktu e U;VL;fVdYl

न्यूट्रास्यूटिकल्स के योजक और सहक्रियात्मक प्रभाव उनके शक्तिशाली एंटीऑक्सीडेंट और एंटीकैंसर गतिविधियों के लिए ज़िम्मेदार हो सकते हैं, फल और सब्ज़ियों में समृद्ध आहार के लाभ का मुख्य कारण असंसाधित खाद्य पदार्थ में मौजूद न्यूट्रास्यूटिकल्स के जटिल मिश्रण को माना जाता है। नियोप्लास्टिक विकास के खिलाफ न्यूट्रास्यूटिकल्स के संयोजन के कुछ प्रभाव आगे खंडों में वर्णित हैं।

tfuLVu vkj jlfojVky

केमोप्रिवेन्शन और सोया से व्युत्पन्न उत्पाद जेनिस्टीन के बीच सकारात्मक संबंध देखा गया हैं। सोया चूहों में प्रत्यारोपण योग्य मानव प्रोस्टेटिक कार्सिनोमा और ट्यूमर एंजियोजेनेसिस के विकास को रोकता है।

हाल ही में लाल शराब और अंगूर से व्युत्पन्न उत्पादों में पाए गए रेसविरैट्रोल नामक एक पॉलिफ़ेनोलिक फाईटोअलेक्सिन को कैंसर निरोध के सन्दर्भ में काफ़ी प्रोत्साहन मिला है. अध्ययनों के द्वारा दर्शाया गया है कि रेसविरैट्रोल चूहों में रसायन से उत्प्रेरित स्तन कैंसर का दमन करता है।

जेनिस्टेन और रेसविरैट्रोल एकल और संयोजित दोनों रूप से, कोशिका प्रजनन को घटाकर, इन्सुलिन– लाइक ग्रोथ फैक्टर–1 नामक प्रोटीन की अभिव्यक्ति के माध्यम से, और प्रोस्टेट में अपॉपटोसिस प्रक्रिया को बढाकर चूहों में प्रोस्टेट कैंसर जनन का दमन करते हैं।

dD;feu vkj ,fixykdVfpu xyV

हरी चाय में कई पॉलीफेनोलिक यौगिक होते हैं निम्नलिखित कैटेचिन सहितः ईजीसीजी, एपिगैलोकैटेचिन ईजीसी, एपिकैटेचिन –3– गैलेट (ईसीजी), और एपिकैटेचिन (ईसी)। ईजीसीजी हरी चाय का एक प्रमुख घटक है, और

यह कैंसर कोशिका के प्रसार को अवरुद्ध करने और उनमें एपोप्टोसिस को प्रेरित करने चाय में पाया जाने वाला सबसे प्रबल यौगिक हो सकता है।

हाल ही में, कर्क्यूमिन और हरी चाय में पाए गये केटेचिन के 1,2–डायमेथिलहाइड्राज़िन (डीएमएच) द्वारा उत्प्रेरित कोलन कैंसरजनन पर व्यक्तिगत रूप से एवं संयोजन में केमोप्रोवेन्टिव प्रभावों का पुरुष विस्तर चूहों में अध्ययन किया गया था। इस अध्ययन में कैंसर के खिलाफ उपरोक्त यौगिकों का प्रभाव जानने के लिए, कोलन में बनने वाले अबैरेंट क्रिप्ट फोसाई (ए.सी.एफ) की संख्या में गिरावट तथा उनके गठन कि प्रक्रिया में बाधा की गणना की गयी। अध्ययन में पाया गया कि उपरोक्त यौगिक कोलोन कैंसर से बचाव के लिए सहक्रियात्मक प्रभाव के कारण, व्यक्तिगत रूप कि तुलना में संयोजन में अधिक प्रभावशाली होते हैं। मेकनिस्टिक अध्ययन से पाया गया कि इन यौगिकों के कैंसर विरोधी प्रभाव, एक्टिवेटर प्रोटीन1 (एपी –1) , सी–फोस, एनएफ–केबी, और साइकलिन डी 1 प्रमोटर, इन प्रोटीन्स की प्रतिलेखन गतिविधियों में अवरोध उत्पन्न करने से होते हैं।

Mk;fyy lYQkbM vkj vukj

अनार (प्यूनिका ग्रेनाटम लिन।; पुनीसेसी) फल का व्यापक रूप से ताज़ा और पेय पदार्थों में रस और मदिरा के रूप में सेवन होता है। अनार के रस और छील में प्रबल एंटीऑक्सीडेंट क्षमता के साथ पॉलीफेनॉल की प्रचुर मात्रा होती है, विशेष रूप से, एलागिटैनिन, जोकि एक संघनित टैनिन है, और एंथोकाइनिन, और दोनों की केमोप्रोवेन्टिव, केमोथेरेपीटिक और सूजन–विरोधी प्रभावकारिता प्रदर्षित की गयी है।

दर्शाया गया है कि लहसुन (एलियम सैटिवम: ऑलियासी) में पाया जाने वाला डी.ए.एस (डायलिल सल्फाइड) नामक एक ओर्गानोसल्फ़र यौगिक मानव कैंसर, जैसे कि कोलन और फेफड़े का कैंसर, के विरुद्ध संभावित केमोप्रोवेन्टिव गतिविधि दिखाता है। वर्त्तमान समय के अध्ययन द्वारा सूचित किया गया कि पी.फ़.ई. एवं डी.ए. एस के मिश्रण ने चूहों में चर्म के ट्यूमर को सहक्रियात्मक गतिविधि से अवरुद्ध किया ट्यूमर अवरोध के साथ–साथ इनके प्रभाव से निक कि गठान में कमी, ट्यूमर के आयतन में कमी, प्रोलिफ़रेशन के संकेतों कि मात्रा में कमी, एमएपीके एवं एनएफ–केबी सिग्नलिंग में अवरोध और अपॉप्टोटिक कोशिका मृत्यु का उत्प्रेरण भी होते है। अतः प्रस्तावित किया जाता है कि चर्म कैंसर के प्रबंधन के लिए यौगिकों कि संयोजित चिकित्सा एकल रसायन कि तुलना में कही ज्यादा लाभदायक होगी।

QfuyfFkfy lkFkhvkslkbuV vkj dD;fEeu

फेनिलेथिलिसोथीओसाइनेट (पीईआईटीसी) एक ऐसा स्वाभाविक रूप से प्रकृति में उत्पन्न होने वाला आइसोथियोसाइनेट यौगिक है जिसने अपने उल्लेखनीय कैंसर केमोप्रोवेन्टिव गुणों के कारण बहुत ध्यान आकर्षित किया है। जिन तंत्रों से पीईआईटीसी कैंसर के खिलाफ सुरक्षा करता है, पाया गया है कि उनमें कोशिका चक्र स्थगन और एपोप्टोसिस के प्रेरण के माध्यम से प्रीनियोप्लास्टिक कोशिकाओं का शमन, साइटोक्रोम पी 450–निर्भर मोनोऑक्सीजेनेस की मात्रा में न्यूनाधिक के माध्यम से कैंसरजन सक्रियण का दमन और एंटीऑक्सीडेंट प्रतिक्रिया तत्व पर निर्भर कैंसरजन डिटॉक्सिफिकेशन एंजाइम कि मात्रा में वृद्धि ये सब क्रियाएं शामिल हैं। कर्क्यूमिन (डाइफेरुलोयल मीथेन), हल्दी में पाए जाने वाला एक पीला फेनोलिक वर्णक, कर्कुमा लांगा नमक पौधे के राइज़ोम से निकाला जाता है, जिसमें प्रबल एंटीऑक्सीडेंट और सूजन–विरोधी प्रभाव पाए गये हैं। इन गुणों के कारण, कर्क्यूमिन के संभावित कीमोप्रिवेंटिव गतिविधियों की व्यापक रूप से जांच की गयी है। कर्क्यूमिन के साथ उपचार एपोप्टोसिस और कोशिका चक्र स्थगन का कारण बनता है, परंतु यह एण्ड्रोजन निर्भर और एण्ड्रोजन– मुक्त पीसीए कोशिकाओं कि वृद्धि को रोकता है, तथा सिग्नल ट्रांसडक्शन का सक्रियण एवं कैंसर कोशिकाओं में उनके परिवर्तित होने कि गतिविधियों को बदलता है। कर्क्यूमिन त्वचा, पेट के पूर्व भाग, डुओडेनम, और कोलन के कैंसर का चूहों के रासायनिक कैंसरजन्य के मॉडल में अवरोध करता है। पीईआईटीसी और कर्क्यूमिन की कम खुराक के संयुक्त उपचार को इन–विट्रो अवस्था में मानव पीसीए सेल वृद्धि को दबाने के साथ–साथ, एंड्रोजेन–मुक्त मानव पीसीए कोशिकाओं (पीसी–3) के क्सेनोग्राफ्ट– सहित इम्यूनोडिफिएंटेंट चूहों में और TRAMP माउस मॉडल में अर्थात इन–विवो अवस्था में भी कैंसर कोशिका वृद्धि को कम किया गया है। कापा बी सिग्नलिंग मार्गों के अवरोध से दमन करने के लिए पाया गया है।

xHkkoLFkk d nkjku vklfud fo"kkDrrk d dkj.k tUe yu oky pgk e Ropk dlj dh c<rh lHkkouk

fl)kFk xxkik/;;] 'kxu 'kDyk ,o fodkl JhokLro

प्रणाली विषविज्ञान एवं स्वास्थ्य जोखिम मूल्यांकन समूह

सीएसआईआर–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, विषविज्ञान भवन, 31, महात्मा गांधी मार्ग

लखनऊ–226001, उत्तर प्रदेश, भारत

पेयजल के माध्यम से आर्सेनिक एक्सपोजर एक वैश्विक स्वास्थ्य समस्या बनी हुई है क्योंकि यह दुनिया में हजारों लोगो को प्रभावित करता है। आर्सेनिक मुख्य रूप से पर्यावरण में भूजल प्रदूषक के रूप में पाया जाता है, जहां यह मानवीय गतिविधियों (कीटनाशकों के उपयोग, लकड़ी के संरक्षण, खनन उद्योग इत्यादि) के कारण उपस्थित हो सकता है या यह आर्सेनिक खनिज युक्त तलछट या चट्टानों से भूजल जलाशयों तक पहुंच सकता है। अधिकांश आर्सेनिक यौगिक पानी में घुलनशील होते हैं और नदी के पानी या वर्षा के जल में मिल कर कुएं, झीलों और तालाबों जैसे सतह के पानी के स्रोतों को भी दूषित कर सकते हैं, जिससे प्रदूषण के स्रोतों का पता लगाना मुश्किल हो जाता है। पर्यावरण में, आर्सेनिक और इसके यौगिक गतिशील होते हैं और इन्हें आसानी से नष्ट नहीं किया जा सकता है इसलिए, भूजल में आर्सेनिक प्रदूषण दुनिया भर में एक गंभीर स्वास्थ्य समस्या है। पूर्वी भारत, बांग्लादेश, चीन और वियतनाम सहित दक्षिण पूर्व एशियाई महाद्वीप के विशाल क्षेत्रों में और दक्षिण अमेरिकी देशों जैसे चीन और मैक्सिको भी आर्सेनिक प्रदूषण से गंभीर रूप से प्रभावित हैं। प्रतिदिन उपयोग में लाए जाने वाले जल में 50 पीपीबी आर्सेनिक स्तर को रखने के लिए दिए गये दिशानिर्देश प्रभावी नहीं पाये गये है, इसलिए वर्तमान पेयजल में आर्सेनिक के लिए अनुशंसित सुरक्षा सीमा यूरोप के देशों में और संयुक्त राज्यों (डब्ल्यूएचओ) में 10 पीपीबी है। भारत में, पेयजल में आर्सेनिक की अनुशंसित सुरक्षित सीमा अभी भी 50 पीपीबी है (भारतीय मानक ब्यूरो द्वारा तय किये गए मानकों के आधार पर) जो अंतर्राष्ट्रीय मानकों से काफी अधिक है। भूजल में अकार्बनिक आर्सेनिक की सान्द्रता दुनिया के विभिन्न हिस्सों में इन मानकों की तुलना में बहुत अधिक पायी जाती है, जो हानिकारक हो सकती है। पूर्वी भारत, बांग्लादेश, चीन और दक्षिणी अमेरिका के आर्सेनिक स्थानिक क्षेत्रों में आयोजित अध्ययन में पाया गया कि विभिन्न अंगों के कैंसर, टाइप 2 मधुमेह, उच्च रक्तचाप और परिधीय न्यूरोपैथी जैसी कई बीमारियों के विकास के लिए अधिक मात्रा में आर्सेनिक एक्सपोजर एक प्रमुख कारक के रूप प्रदर्शित हुआ है। अधिक मात्रा में या दीर्घकालिक आर्सेनिक एक्सपोजर के अधिकांश लक्षण पीड़ितों की त्वचा और नाखूनों पर देखे जा सकते हैं। प्रभावित मनुष्य के शरीर पर हाइपरपीग्मेंटेशन का एक विशेष पैटर्न (वर्षा–बूंद जैसा) दिखाई देता है और क्षैतिज रेखाएं हाथ तथा पैर की उंगलियों के नाखूनों पर दिखाई देती हैं। मध्यम से अधिक आर्सेनिक एक्सपोजर से त्वचा पर ट्यूमर दिखाई दे सकते है जो अंग की सामान्य संरचना को खराब या विकृत कर सकता है और स्थानिक क्षेत्रों में सामाजिक कलंक का कारण बन सकता है। दीर्घकालीन आर्सेनिक एक्सपोजर त्वचा, फेफड़ों, मूत्राशय और यकृत के कैंसर के कारक के रूप में पाया गया है। अन्य रासायनिक कैंसर कारकों के विपरीत, आर्सेनिक प्रत्यक्ष डीएनए हानिकारक तत्व के रूप में कार्य नहीं करता है, लेकिन यह सूर्य के पराबैगनी विकिरण और बेंजोप्रिन जैसे अन्य कैंसर कारकों के कैंसरकारी प्रभावों को बढ़ा देता है। आर्सेनिक आसानी से रक्त–प्लेसेंटल बाधा को पार कर जाने की क्षमता के कारण प्रभावित क्षेत्रों में विकासशील भ्रूण के लिए एक संभावित दुष्प्रभावी कारक है। कई वैज्ञानिक अध्ययनों ने गर्भवती महिलाओं में आर्सेनिक एक्सपोजर से भ्रूण की मृत्यु या भ्रूण की सामान्य वृद्धि पर दुष्प्रभाव को प्रदर्शित किया है। गर्भावस्था के समय कम से मध्यम आर्सेनिक एक्सपोजर, बच्चों में जन्म के समय कम वजन, प्रतिरक्षा रोग और धीमी वृद्धि का कारण बन सकता है। गर्भावस्था में आर्सेनिक का संपर्क में भ्रूण में फोलेट उपापचय (फोलेट मेटाबोलिज्म) में व्यवधान उत्पन्न करता है जो सेलुलर मिथाइलेशन मशीनरी को मिथाइल समूह दाताओं की कमी के कारण होता है। आर्सेनिक के संपर्क से अपर्याप्त डीएनए मिथाइलेशन हो सकता है जिससे एपिजेनेटिक मेकअप में आजीवन परिवर्तन हो जाता हैं। बदली हुई मिथाइलेशन स्थिति से कई जीन की अपरिवर्तनीय अभिव्यक्ति हो सकती

है, जो वयस्क आयु में प्रारंभिक विकारों जैसे कि कैंसर और कार्डियोमैटैबोलिक रोगों की ओर बढ़ती संवेदनशीलता में योगदान दे सकती है। प्रसवपूर्व और प्रसवोत्तर एक्सपोजर के पशु मॉडल में हाल के अध्ययनों ने साबित कर दिया है कि बहुत कम मात्रा में गर्भावस्था में आर्सेनिक एक्सपोजर मूत्राशय, फेफड़ों और अंडाशय में कैंसर के विकास में योगदान दे सकता हैं। आर्सेनिक यकृत उपापचय को भी बाधित कर सकता है, जिससे वसा युक्त यकृत रोग का खतरा बढ़ रहा है। हाल के अध्ययनों से, यह तेजी से स्पष्ट हो रहा है कि आर्सेनिक के गर्भावस्था में संपर्क से वयस्क जीवन के दौरान व्यक्ति के स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव हो सकता है क्योंकि यह बाद के जीवन में कैंसर और उपापचय सिंड्रोम सहित कई अन्य रोगों के जोखिम को बढ़ाता है।

विभिन्न शोध समूहों ने प्रसवपूर्व और वयस्क एक्सपोजर के सह–कैंसरजन्य प्रभाव की खोज की है, वर्तमान अध्ययन का उद्देश्य गर्भावस्था के समय आर्सेनिक के पर्यावरिक प्रासंगिक मात्रा (0.4 पीपीएम और 4.0 पीपीएम) के संपर्क के प्रभावों की जांच करना है।

lkexh ,oa i)fr

tUrq ç;ksx

स्विस एल्बिनो (6 सप्ताह) चूहों को सीएसआईआर–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान लखनऊ की संस्थागत जंतु आवास सुविधा से प्राप्त किया गया। मानक प्रयोगशाला स्थितियों के तहत चूहों को पॉलीप्रोपीलीन पिंजरों में रखा गया था। संस्थागत जंतु नैतिक समिति (आईएईसी) के पूर्व अनुमोदन के साथ सभी जंतु–देखभाल प्रक्रियाओं का पालन करते हुए प्रयोगों का आयोजन किया गया। प्रयोगों में दर्द तथा जानवरों का प्रयोग कम संख्या में करने के लिए सभी प्रयास किए गए थे।

6 सप्ताह की मादा चूहों को विभिन्न आर्सेनिक खुराकों पर आधारित तीन समूहों में विभाजित किया गया। एक समूह को 0.4 पीपीएम आर्सेनिक दिया गया था, दूसरे को 4 पीपीएम आर्सेनिक दिया गया था और अंतिम समूह को शुद्ध पानी के साथ नियंत्रण के रूप में रखा गया था। शुद्ध पानी में सोडियम आर्सेनाइट को घोलकर गर्भावस्था में मौखिक नलिका–पोषण द्वारा दिया गया था। चूहों के बच्चो को लिंग और खुराक के अनुसार विभाजित किया गया था और 6 सप्ताह की आयु तक परिपक्व होने के लिए छोड़ दिया गया।

दूध पिलाने के 3 सप्ताह के बाद, पृष्ठीय त्वचा के बाल काट दिए गए और 7,12–डाइमिथाइलबेन्ज-ए, -एन्थ्रासीन (डीएमबीए) 4 नैनोमोल्स की सान्द्रता में एसीटोन में घोलकर चूहों की पृष्ठीय त्वचा पर समान रूप से लगाया गया। डीएमबीए की खुराक लगाने के बाद, चूहों को एक सप्ताह के लिए छोड़ दिया गया था। बाद में, एसीटोन में घोलकर टीपीए को सप्ताह में दो बार 4 नैनो मोल्स (nMoles) की खुराक दी गयी।

Vîwej la[;k rFkk vkdkj dk fo'ys"k.k

प्रयोग में भिन्न भिन्न समय पर ट्यूमर की संख्या तथा वर्नियर कलिपर्स से ट्यूमर आकर की माप की गयी।

Vîwej dk fgLVksy‚ftdy fo'ys"k.k

प्रयोग समाप्ति के बाद सभी समूहों के चूहों की त्वचा का हिस्टोलॉजिकल विश्लेषण किया गया था। हिस्टोलॉजिकल विश्लेषण के लिए चूहों की त्वचा को 0.5 माइक्रोन पतले टुकड़ो में काटकर हिमैटोक्सीलीन तथा ईओसिन के साथ अभिरंजित किया गया।

ifj.kke ,oa ifjppkZ

आर्सेनिक से गर्भावस्था के दौरान एक्सपोजर से चूहों की त्वचा पर ट्यूमर संख्या तथा आकार का विश्लेषण

आर्सेनिक के साथ इलाज किए गए जानवर ट्यूमर के विकास के प्रति अधिक संवेदनशील दिखे (चित्र 1) और ट्यूमर संख्या में एक महत्वपूर्ण अंतर देखा गया।

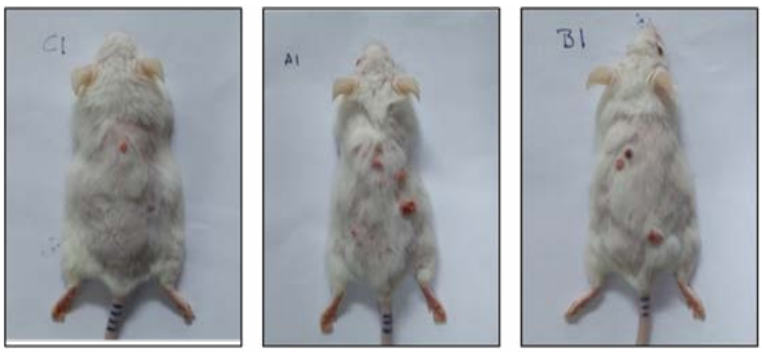

नियंत्रण-डीएमबीए+ टीपीए | 0.4 पीपीएम - डीएमबीए+टीपीए | 4 पीपीएम - डीएमबीए+टीपीए

चित्र 1: प्रयोग समाप्ति पर चूहों की त्वचा पर ट्यूमर की उपस्थिति।

गर्भावस्था में आर्सेनिक के सम्पर्क में आये चूहों में त्वचा ट्यूमर डीएमबीए एक्सपोजर शुरू होने के पांच सप्ताह के बाद और टीपीए के साथ लगातार जारी होने पर विकसित हुए, जबकि अनुपचारित नियंत्रणों में किसी भी ट्यूमर के विकास और उपस्थिति के लिए ग्यारह सप्ताह का समय लगा (चित्र 2)।

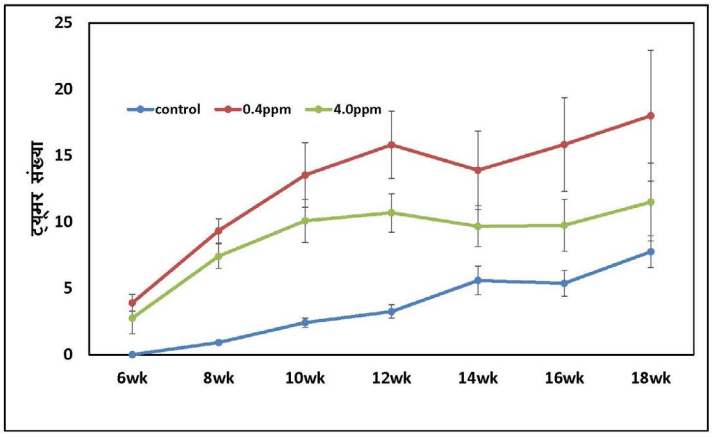

चित्र 2: विभिन्न समूहों में समय के साथ ट्यूमर की उपस्थिति का विश्लेषण।

नियंत्रण और उपचार समूहों के बीच ट्यूमर संख्याओं में महत्वपूर्ण अंतर थे (चित्र 3)। आर्सेनिक और डीएमबीए . टीपीए दोनों के साथ इलाज में समूहों के ट्यूमर की घटनाओं में वृद्धि देखी गई। ट्यूमर संख्या में वृद्धि जन्मपूर्व आर्सेनिक उपचार की खुराक पर निर्भर नहीं थी।

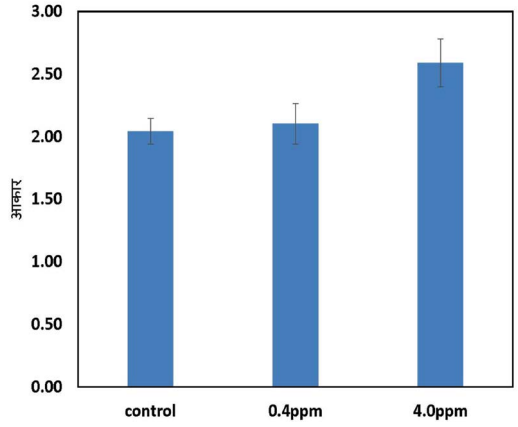

चित्र 3: विभिन्न समूहों में ट्यूमर के औसत आकार का विश्लेषण।

fgLVky,ftdy fo'y"k.k

हिस्टोपैथोलॉजिकल विश्लेषण में ट्यूमर की बेसमेंट झिल्ली का एन्वैजन पाया गया और जन्तुओं की त्वचा की एपिडर्मल परत में वृद्धि हुई और आर्सेनिक के संपर्क वाले समूह में स्क्वामस सेल कार्सिनोमा के लक्षण पाये गये (चित्र 4)।

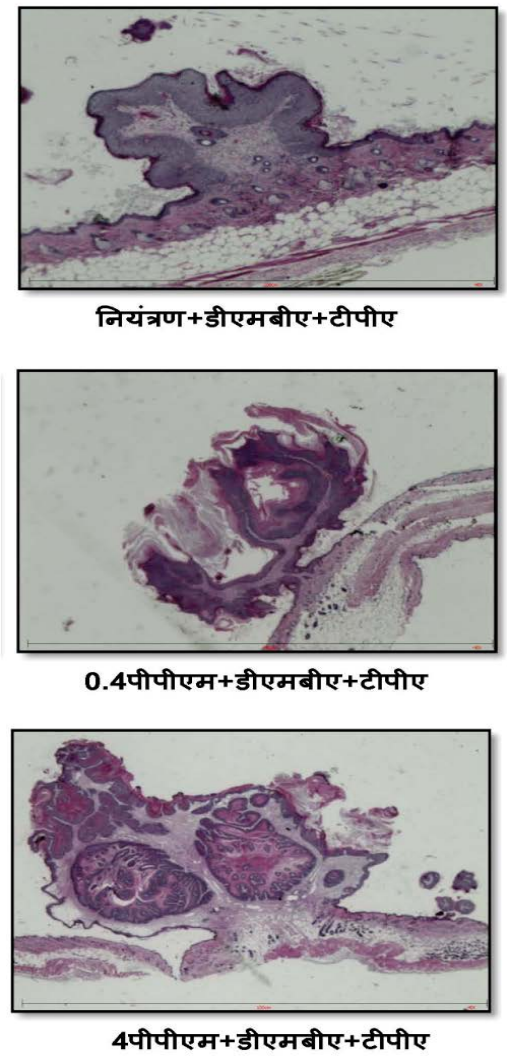

चित्र 4: चूहों की त्वचा के ट्यूमर का हिस्टोपैथोलॉजिकल विश्लेषण।

गर्भावस्था में सिर्फ आर्सेनिक का संपर्क चूहों में हाइपरकेरोटोसिस को प्रेरित करने के लिए पर्याप्त था और समय के साथ चूहों की त्वचा की एपिडर्मल मोटाई में एक उल्लेखनीय वृद्धि हुई थी, जो कि त्वचा की गुणवत्ता की गिरावट का संकेत था (चित्र 5)। नियंत्रण की तुलना में, डीएमबीए और टीपीए समूहों में उपकला परत की मोटाई, कोलेजन मैट्रिक्स और असामान्य रूपरेखा वाले कोशिकाओं में वृद्धि देखी गई।

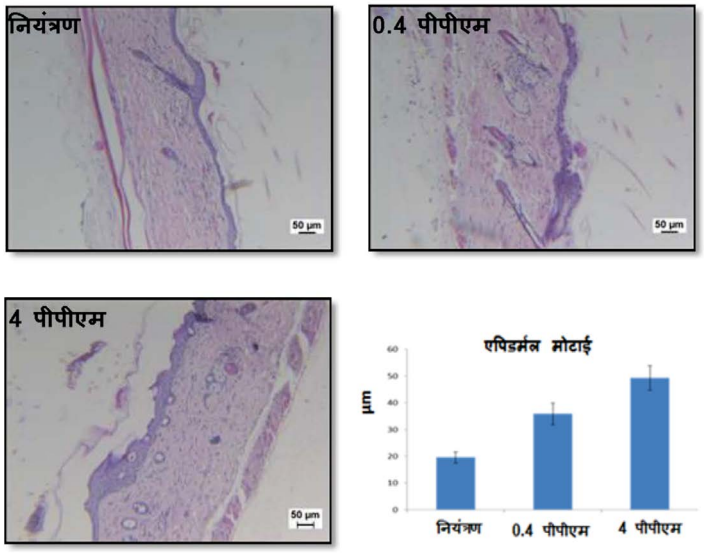

चित्र 5: एक साल की आयु पर चूहों की त्वचा में एपिडर्मल मोटाई का विश्लेषण।

दीर्घ कालीन आर्सेनिक का एक्सपोजर त्वचा के कैंसर के विकास से जुड़ा हुआ है जो ज्यादातर सौर पराबैंगनी विकिरण के साथ सह–कैंसरजनक के रूप में कार्य करता है, लेकिन प्रसवपूर्व एक्सपोजर के प्रभावों का अच्छी तरह से मूल्यांकन नहीं किया गया है।

हमारे अध्ययन में यह पाया कि केवल प्रसव–पूर्व आर्सेनिक जन्तु, नियंत्रण की तुलना में त्वचा कार्सिनोमा के विकास के लिए अधिक संवेदनशील थे। इसके अलावा, इन ट्यूमर की हिस्टोलॉजिकल विश्लेषण में सेलुलर एटिपिया और बेसमेंट झिल्ली का एन्वैजन पाया गया जो ट्यूमर के घातक परिवर्तन को इंगित करता है। हमने आर्सेनिक जानवरों में ट्यूमर की संख्या तथा आकार में वृद्धि पायी।

हमारा यह प्रारंभिक अध्ययन आर्सेनिक के प्रसव–पूर्व एक्सपोजर और त्वचा कैंसर के विकास के बीच एक सकारात्मक सहसंबंध दिखाता है। इस प्रभाव के पीछे आणविक और एपिजेनेटिक तंत्र अभी तक अस्पष्ट हैं और आगे अनुसंधान का विषय है।

हमारे अध्ययन से पता चलता है कि केवल गर्भावस्था में आर्सेनिक का संपर्क बच्चों की त्वचा में हानिकारक परिवर्तनों को प्रेरित करने के लिए पर्याप्त है और यह दाहक (inflammatory) तंत्र के मॉड्यूलेशन के माध्यम से त्वचा की कार्सिनोजेनेसिस के प्रति बढ़ती प्रतिक्रिया में सहायता कर सकता है। हमारे प्रयोगों में आर्सेनिक की मात्रा पर्यावरण में पायी जाने वाली आर्सेनिक की मात्रा से तुलनीय है और हमने पाया कि गर्भावस्था में आर्सेनिक कम मात्रा में भी बच्चों की त्वचा में हानिकारक परिवर्तन कर सकता है जो वयस्कता में प्रदर्शित होते है।

e| nfu;k dh lHkh Hkk"kkvk dh bTtr djrk g ij ej n'k e fgnh dh bTtr u gk] ;g e lg ugh ldrk----

&vkpk;l foukck Hkko

ljyrk vkj 'kh?k lh[ku ;kX; Hkk"kkvk e fgnh lokifj g----

&ykdekU; cky xxk/kj fryd

HkkT; inkFkksa esa vklsZfud fo"kkärk rFkk ekbdzkjkbtk dodksa }kjk blds fujkdj.k

tkx'rh 'kqDyk] 'kk;ku ek-] vi.kkZ flag d{'kokgk ,oa eukst dqekj

पर्यावरण विषविज्ञान समूह

सीएसआईआर–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, विषविज्ञान भवन, 31, महात्मा गांधी मार्ग
लखनऊ–226001, उत्तर प्रदेश, भारत

आर्सेनिक एक अधातु है, जो मूलरुप से पृथ्वी की ऊपरी सतह (भूपर्पटी) और चट्टानों मे पाया जाता है। प्रकृति में आर्सेनिक कई रूपों में पाया जाता है जिसमे त्रिसंयोजक (–3, आर्सेनाइट) और पंचसंयोजक (–5, आर्सेनेट) प्रमुख है। आर्सेनिक, ऑक्सीजन, सल्फर, सोडियम और कार्बोनेट अभिक्रिया करके विभिन्न आर्सेनिक लवण बनाता है सोडियम आर्सेनाइट जल में ज्यादा घुलनशील होने के कारण सोडियम आर्सेनेट से ज्यादा विषाक्त होता है। आर्सेनिक पर्यावरण में तीन मुख्य स्रोतों से पहुंचता है– 1. भूगर्भी क्रियाएँ 2. जैवीय क्रियाएँ 3. मानवीय क्रियाएँ।

भूगर्भीय कारणों में चट्टानों और आर्सेनिक लवणों का टूटना तथा ज्वालामुखी क्रियाएं मुख्य हैं। आर्सेनिक के विभिन्न लवण चट्टानों में पाये जाते हैं, जब चट्टानों का क्षरण होता है तो यह मुक्त हो जाती हैं और जल में घुल जाती हैं। जैवीय क्रियाएँ मुख्यतः विभिन्न आर्सेनिक लवणों को या तो अघुलनशील बनाती हैं या उन्हें गैसीय रूप में परिवर्तित कर देती हैं। इस प्रकार आर्सेनिक गैसीय रूप में उन स्थानों तक पहुँच जाता है जहां पहले इसकी समस्या नहीं पायी जाती थी। विभिन्न मानवीय क्रिया–कलाप जैसे भूजल का अत्याधिक दोहन, आर्सेनिक युक्त रसायनों का प्रयोग, कोयले के जलने, कोयलों के खानों से आर्सेनिक के निकलने, धातुओं के निस्तारण आदि आर्सेनिक के पर्यावरण में आने के मुख्य स्रोत हैं। यह आर्सेनिक जल, मिट्टी और वायु में घुल जाता है एवं इसी घुलनशील रूप में जीवधारियों तक पहुँचता है। मनुष्यों में आर्सेनिक, दूषित जल पीने से, दूषित खाद्य पदार्थों के सेवन और दूषित वायु में सांस लेने की वजह से पहुँचता है। इस लेख में हम भारत मे आर्सेनिक विषाक्तता की समस्या, इसका मानव जीवन पर प्रभाव तथा इसके निवारण पर किये गए शोध पर चर्चा करेंगे।

Hkkjr esa vklsZfud fo"kkärk dh leL;k

विश्व के विभिन्न देशों जैसे बांग्लादेश, भारत, ताइवान, मंगोलिया, वियतनाम, अर्जेंटीना, चिली, मेक्सिको, घाना, और अमेरिका में आर्सेनिक की समस्या है। इन देशों ने पीने योग्य पानी में आर्सेनिक सांद्रता का मानक, अलग– अलग रखा है। 1958 मे विश्व स्वास्थ्य संगठन ने पीने योग्य पानी मे आर्सेनिक सांद्रता का अंर्तराष्ट्रीय मानक बनाया जो कि 10 माइक्रोग्राम प्रति लीटर से 50 माइक्रोग्राम प्रति लीटर है। भारत में गंगा–मेघना–ब्रह्मपुत्र नदियों के मैदानी भागों में, आर्सेनिक विषाक्तता का भयावह रूप दिखाई देता है। इन भागों में पड़ने वाले वाले राज्यों जैसे पश्चिम बंगाल, झारखंड, बिहार, उत्तर प्रदेश, असम तथा मणिपुर में भूगर्भीय जल आर्सेनिक से विषाक्त है। पश्चिम बंगाल में यह समस्या विकराल हो गयी है, इस राज्य के नौ जिलों जिसमें मालदा, मुर्शिदाबाद, नादिया, पूर्व 24 परगना, पश्चिम 24 परगना, बर्धमान, हावड़ा, हूगली, तथा कोलकाता में पानी में आर्सेनिक की सांद्रता 300 माइक्रोग्राम प्रति लीटर से ज्यादा पायी गयी है। यहाँ आर्सेनिक की समस्या प्राकृतिक जनित है और इसी दूषित पानी का उपयोग पीने, सिंचाई एवं अन्य कार्यों में होता है जो मानव स्वास्थ्य को प्रभावित कर रहा है।

vklsZfud dk ekuo thou ij çHkko

मनुष्य तक आर्सेनिक, पीने के पानी एवं खाद्य–पदार्थों द्वारा पहुँचता है। आर्सेनिक विषाक्त जल के सिचाई में उपयोग द्वारा आर्सेनिक पौधों में पहुँचता है। यह पौधों के विभिन्न भागों जैसे जड़ों, तनों, पत्तियों तथा फलों मे संग्रहीत हो जाता है। पशुओं और मनुष्यों मे आर्सेनिक इन दूषित पौधों से बने खाद्य पदार्थों के सेवन करने से पहुंचता है। मनुष्यों मे आर्सेनिक विभिन्न अंगो तथा अंग

तंत्रो को प्रभावित करता है। इसका प्रभाव शारीरिक विकास एवं प्रजनन के अलावा कैंसर उत्प्रेरक के रूप में भी पाया गया है।

मनुष्य में आर्सेनिक से प्रभावित होने वाले अंग तथा अंग तंत्र निम्नलिखित हैं।

vxk ij çHkko

1- ;Ñr ij çHkko

यकृत हमारे शरीर का एक ऐसा अंग है जो शरीर की विभिन्न क्रियाओं से बनने वाले अपशिष्ट पदार्थों को नष्ट करता है या उन्हें इस रूप में परिवर्तित करता है कि उसे आसानी से शरीर के बाहर निकाला जा सके। यकृत पर आर्सेनिक का प्रभाव इस बात पर निर्भर करता है कि इसकी कितनी मात्रा का सेवन किया गया है। बार–बार थोड़ी–थोड़ी मात्रा में आर्सेनिक यकृत में पहुँच कर संग्रहीत हो जाता है। रोगियों में इसके लक्षण यकृत का आकार बढ़ना, पीलिया होना, जलोदर (यकृत में पानी भर जाना) और वसा युक्त यकृत (fatty liver) आदि रूपों में दिखाई देता है। रोगियों में ये लक्षण दीर्घकालिक होते हैं। आर्सेनिक लिवर की कोशिकाओं में मौजूद माइटोकोन्ड्रिया को नुकसान पहुँचाता है। माइटोकोन्ड्रिया के कार्यो में बाधा पहुँचाता है। हाल में हुए शोध में यह पाया गया है कि आर्सेनिक मनुष्यों में (Hepatocellular carcinoma) और (hepatic angiosarcoma) नामक कैंसर के लिए भी जिम्मेदार है।

2- oDd ij çHkko

किडनी या वृक्क हमारे शरीर का ऐसा अंग है जो रक्त को शुद्ध करता है। यकृत की तरह किडनी को बार – बार आर्सेनिक मिलने पर यह इसे संग्रहीत कर लेता है। किडनी ही आर्सेनिक निकालने का मुख्य रास्ता होता है तथा यही आर्सेनिक अपने पंचसंयोजक रूप से त्रिसंयोजक रूप मे बदलता है। आर्सेनिक के कारण किडनी की नलिकाएं, कोशिकाएं तथा ग्लोमेरुली क्षतिग्रस्त हो जाती हैं जिसके कारण वृक्क काम करना बंद कर देती है।

3- Ropk ij çHkko

विभिन्न अध्ययनों में यह पाया गया है कि जिन क्षेत्रों के लोग पीने के पानी में आर्सेनिक 0.01–0.1 एमजी/दिन से ज्यादा लेते हैं उनमें चर्म रोग हो जाता है। मुख्य रूप से इसके प्रभाव से हथेलियों तथा तलवों मे गाँठ, गोखरू, हाइपर–किरोटोसिस होता है तथा चेहरे, गर्दन और पीछे के हिस्सों में गहरे और हल्के रंग के चकत्ते बन जाते हैं।

vx&r=k ij çHkko

1- 'olu r= ij çHkko

मानव के श्वसन तंत्र पर आर्सेनिक के प्रभाव व्यावसायिक तथा ट्यूबवेल पानी दोनों से रिपोर्ट किए गए हैं। औद्योगिक प्रसंस्करण, जैसे स्मेल्टिंग में, अयस्कों के खनन और मिलिंग में कार्य करने वाले लोग श्वास के द्वारा आर्सेनिक धूल या धुएं को लेते हैं जिसके परिणामस्वरूप श्वसन तंत्र की अनेक बीमारियों जैसे की श्लेष्म झिल्ली मे जलन, लैरिन्जाइटिस, ब्रोंकाइटिस, राइनाइटिस और ट्रेकोब्रोनकाइटिस, भरी नाक, गले में खराश, घोरपन और पुरानी खांसी आदि हो सकते हैं।

2- ifjlapj.k r= ij çHkko

कई अध्ययनों में यह पाया गया है कि आर्सेनिक मनुष्यों में परिसंचरण तंत्र की बीमारियों का खतरा बढ़ा देता है। आर्सेनिक रक्त वाहिकाओं तथा हृदय को नुकसान पहुँचाता है। आर्सेनिक भोजन या पानी के माध्यम से मानव शरीर मे पहुँचता और हृदय पर गंभीर प्रभाव डाल सकता है। आर्सेनिक हृदय की कोशिकाओं (मायोकार्डिया) मे विरूपण कर देता है, दिल का दौरा पड़ने की संभावना बढ़ जाती है। ब्लैकफुट रोग आर्सेनिक द्वारा परिसंचरण तंत्र के क्षतिग्रस्त होने से होता है, आर्सेनिक का परिसंचरण तंत्र पर प्रभाव का मुख्य उदाहरण है। यह रोग उन क्षेत्रों मे होता है जहाँ पीने के पानी में 0.17 से 0.8 पीपीएम आर्सेनिक होता है।

3- tBjk= r= ij çHkko

आर्सेनिक का पाचन अथवा जठरांत्र तंत्र पर प्रभाव तीव्र विषाक्त स्थिति में परिलक्षित होता है। इसके कारण पीड़ित व्यक्ति को मतली, उल्टी डायरिया आदि होते हैं। आर्सेनिक एपिथेलियल कोशिकाओं को नुकसान पहुंचाती है। जठरांत्र तंत्र द्वारा आर्सेनिक का अवशोषण इस बात पर निर्भर करता है कि आर्सेनिक किस रूप में है। त्रिसंयोजक (–3, आर्सेनाइट) रूप में आर्सेनिक ग्लुकोज ट्रांसपोर्टर नामक प्रोटीन और पंचसयोजक (–5, आर्सेनेट) रूप में यह फास्फेट ट्रांसपोर्टर नामक प्रोटीन द्वारा अवशोषित किया जाता है।

vklsfud leL;k ds fujkdj.k ds fy, miyC/k midj.k ,oa izk|kfxdh

आर्सेनिक समस्या की भयावहता को देखते हुए पीने योग्य पानी में आर्सेनिक की मात्रा को कम करने के लिए अनेक उपकरणों का आविष्कार किया गया है जिनमें अल्ट्राफिल्ट्रेशन, विपरीत परासरण (reverse osmosis) और अक्टिवेटेड कार्बन एडजोर्पसन (adsorption) की प्रौद्योगिकी प्रमुख हैं। इन प्रौद्योगिकी के उपयोग से पीने के पानी में आर्सेनिक की मात्रा को कम कर सकते हैं और इसके दुष्प्रभावों से बच सकते है परंतु खाद्य पदार्थों में आर्सेनिक की मौजूदगी से यह समस्या अभी बनी हुई है। हाल ही में हुए शोध में इस प्रकार का धान का पौधा तैयार किया गया है जो कि बहुत ही कम मात्रा मे आर्सेनिक अवशोषित करता है और इसके खाने योग्य दानों में भी आर्सेनिक बहुत ही कम होता है। परंतु धान के अलावा अभी तक कोई अन्य फसल तैयार करना संभव नहीं हो पाया है जो आर्सेनिक की कम मात्रा अवशोषित करता हो। आर्सेनिक को फसलों द्वारा अवशोषित होने से रोकने के लिए विभिन्न प्रकार के सूक्ष्मजीवियों का प्रयोग एवं शोध हो रहे हैं। इनमे से मायकोराईजल कवक तथा ट्राईकोडर्मा मुख्य हैं। आइये जानने का प्रयास करते है कि मायकोराईजल कवक तथा ट्राईकोडर्मा और आर्सेनिक विषाक्तता के निवारण में इनका क्या महत्व है।

ek;dksjkbZty dod ¼Mycorrhizal Fungi½

ज्यादातर स्थलीय पौधे कई जीवों के साथ घनिष्ठ सहयोग बनाकर रहते हैं, जिनमें मायकोराईजल कवक महत्वपूर्ण हैं। मायकोराईजल कवक पौधे की जड़ों में रहते हैं और वहाँ से ये जड़ों के आस–पास की मिट्टी मे फैले रहते हैं। चूंकि ये स्वयं अपना भोजन "कार्बोहाइड्रेट" (आमतौर पर शर्करा) नहीं बना पाते इसलिए ये पौधों से ग्लूकोज के रूप मे अपना भोजन प्राप्त करते हैं और बदले में मिट्टी से पानी और खनिज पोषक तत्व जैसे फॉस्फोरस, नाइट्रोजन और पानी, पौधों को प्रदान करते हैं। मायकोराईजल कवक, पौधों की 95% से अधिक प्रजातियों के साथ सहजीवी बन कर रहते हैं जिसे मायकोराईजल सिम्बियोसिस कहते है, हालांकि ब्रासियेसी और चीनीपोडियेसी नामक पौधो के समूह, मायकोराईजल सिम्बियोसिस नहीं करते हैं। मायकोराईजल सिम्बियोसिस, पौधों के विकास में विशेष रूप से लाभ प्रदान करते हैं और असंतुलित पर्यावरिक कारकों से पौधों की सुरक्षा भी करते हैं।

ek;dksjkbZty dod ds çdkj

आमतौर पर मायकोराईजा दो प्रकार के होते हैं, एक्टोमाइकोराईजा और एंडोमायकोराईज। एक्टोमाइकोराईजल कवक जड़ों की अलग–अलग कोशिकाओं में प्रवेश नहीं करता है, जबकि एंडोमाइकोराईजल कवक जड़ों की कोशिका में प्रवेश कर कुछ विशेष संरचना बनाती है जिन्हें अरबसकुल (Arbuscules) और वेसाइकल (Vesicle) कहते है। एंडोमाकोरिजाइजा का विशेष पौधों के समूहों से सहजीविता करने के कारण कई नामों से जाना जाता है जैसे एरिकेसी समूह के पौधे के साथ इसे एरिकोइड, और ऑर्किड पौधे के साथ इसे ऑर्किड माइकोराईजा कहा जाता है, जबकि अर्बुटाइड माइक्रोरिजा को एक्टोएन्डोमाइकोरिजा के रूप में वर्गीकृत किया गया है। एक्टोमाइकोराईजा आमतौर पर एंजियोस्पर्म और कोनिफर की विभिन्न प्रजातियों के साथ सिम्बियोसिस करते हैं। एंडोमायकोराईजा के विपरीत, एक्टोमाइकोराईजल कवक पौधे की कोशिका में प्रवेश नहीं करते हैं। इसके बजाए, वे पूरी तरह से अंतःकोशिकीय इंटरफेस (intercellular interface) बनाते हैं, जिसमें हाइफा अत्यधिक फैली होती है। फैली हुई हाइफा के कारण इस कोशिका में एपिडर्मल और कॉर्टिकल रूट कोशिकाओं के बीच एक जाल बन जाता है, जिसे हार्टिंग नेट (Hartig net) के नाम से जाना जाता है। इसके अलावा ये जड़ों की सतह के आस–पास एक घना आवरण बनाती है जिसे मैंटल (mantle) कहते है और ये आसपास के मिट्टी में कई सेंटीमीटर तक फैल जाती है।

dodksa dh vklsZfud fo"kkärk ds fuokj.k esa mi;ksfxrk

प्रकृति में ऐसे बहुत से कवक पाये जाते हैं जो आर्सेनिक प्रतिरोधी होते हैं। कवकों में आर्सेनिक विषाक्तता को सहने के लिए विभिन्न विधियाँ होती हैं। जैसे कि आर्सेनिक का अवक्षेपण, अवशोषण, संग्रहण तथा विषाक्त से अविषाक्त रूप में परिवर्तन प्रमुख हैं। हाल में ही माइकोराइजा पर हुए शोध में यह ज्ञात हुआ है कि इस प्रकार की कवक भूमि में आर्सेनिक विषाक्तता को कम करने की क्षमता रखती है। इसके लिए यह पौधे में आर्सेनिक द्वारा उत्पन्न आक्सीकारक तनाव को कम करता है साथ–साथ यह पौधे के फास्फेट ट्रांसपोर्टर और आर्सेनिक ट्रांसपोर्टर का भी उपयोग करते हुए आर्सेनिक से मुक्ति दिलाने में सहायता करता है। एक अन्य कवक ट्राईकोडर्मा

जो हरे रंग के एस्को–माइसेट्स कवक की है। यह मिट्टी और जड़ों के पारिस्थितिक तंत्र में एक मुक्तजीवी रूप में पाया जाता है तथा आर्सेनिक विषाक्तता को सहने की क्षमता रखता है। यह कवक पौधों के साथ सहजीवी के रूप में रहते हैं जिसके कारण पौधे मूलभूत संरचनात्मक और कोशिकाओं की जैव–रसायनिक क्रियायें प्रभावित होती हैं जिनमे हॉर्मोन द्वारा जैविक गतिविधियों में नियंत्रण, घुलनशील शर्करा के आदान प्रदान, फिनोलिक यौगिकों के निर्माण, प्रकाश संश्लेषण और वाष्पोत्सर्जन प्रमुख हैं। ट्राईकोडर्मा कवक मिट्टी में पाया जाने वाला एक तंतुनुमा कवक है। यह कवक एक शक्तिशाली बायोकंट्रोल एजेंट के रूप में पौधे को विभिन्न रोगों से सुरक्षा प्रदान करने और उसके विकास में सहायता करने के अलावा भूमि की उर्वरक क्षमता को बढ़ाने के कारण कृषि क्षेत्र में विशेष महत्त्व रखता है। पूर्व में हुए विभिन्न शोधों से यह भी पता चला है कि यह कवक मृदा और जल प्रदूषण को रोकने में सक्षम है। यह पौधों की जड़ों में संलग्न रहते हुए विभिन्न अजैविक कारकों से सुरक्षा प्रदान करता है। इसके इस गुण का उपयोग आर्सेनिक विषाक्तता के निवारण में किया जा सकता है। ट्राईकोडर्मा के पास आर्सेनिक प्रतिरोधी क्षमता होती है। विभिन्न शोधों से यह ज्ञात हुआ कि यह कवक आर्सेनिक को मेथाईलेटेड रूप में बदल देते है जो बाद में आर्सेनिक गैस के रूप में परिवर्तित होकर वातावरण में आ जाता है। इस प्रकार आर्सेनिक वायु के माध्यम से यह उन स्थानों तक पहुँच जाता है जहाँ पहले आर्सेनिक की समस्या नहीं थी।

जैसा कि हम जानते हैं कि अधिकांश कवक परपोषी होते हैं परन्तु जैसा कि पूर्व में बताया गया है कि माइकोराईजल कवक पौधों के साथ सहजीवी के रूप में रहते हैं और इन्हें पौधे से अलग करके नहीं उगाया जा सकता अर्थात माईकोराईजल कवकों के साथ सबसे बड़ी समस्या यह है कि इनका कृत्रिम संवर्धन नहीं किया जा सकता जिससे कि पौधों के साथ इनके विभिन्न क्रियाकलापों का अध्ययन प्रयोगशाला में किया जा सके या इसका प्रयोग आर्सेनिक समस्या ग्रस्त कृषि भूमि में किया जा सके। सन 1997 में थार मरुस्थल, राजस्थान में एक कवक *"पिरिफोर्मोस्पोरा इंडिका"* की खोज हुई, जो प्रयोगशाला में कृत्रिम रूप से संवर्धित किया जा सकता है। यह कवक पौधों की जड़ में सहजीविता करता है और पौधे को जैविक तथा अजैविक कारकों से सुरक्षा प्रदान करता है (चित्र 1)।

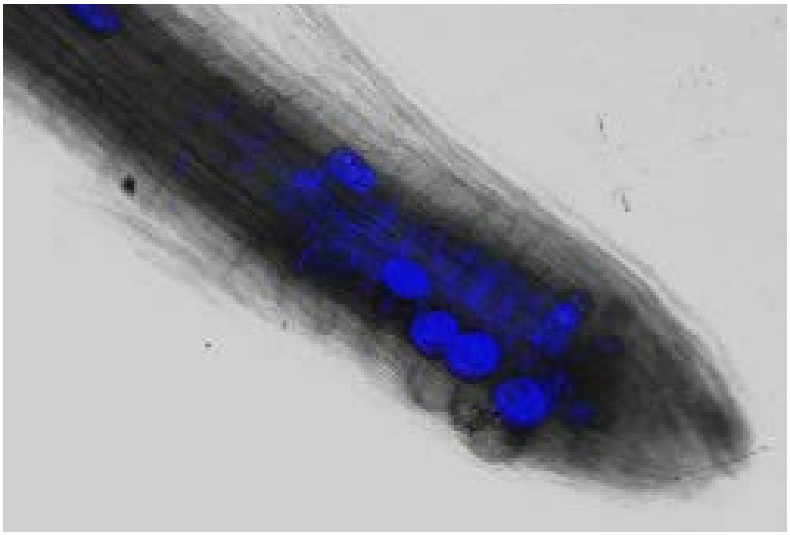

चित्र 1: पिरिफोर्मोस्पोरा इंडिका

पिरिफोर्मोस्पोरा इंडिका एक बहुत महत्वपूर्ण कवक है जो विभिन्न प्रकार से पौधे के लिए उपयोगी होता है। यह पौधों के वृद्धि एवं विकास में सहायता करने के अलावा जैविक और अजैविक कारकों से पौधे को सुरक्षा प्रदान करता है। यह विभिन्न एकबीजपत्री, द्विबीजपत्री, अनावृतबीजी तथा टेरीडोफाईट पौधे की जड़ों में सहजीवी के रूप में रहता है। यह कवक पौधे को धातु प्रदुषण से होने वाले दुष्परिणामों से भी बचाता है। आर्सेनिक भी ऐसा प्रदूषक है जो पौधे के विकास को प्रभावित करने के अलावा पौधे के बीजों और फलों में संगृहित हो जाता है और यहाँ से यह खाद्य श्रृंखला में पहुँच जाता है। अभी हाल में हुए शोधों से पता चला है कि यह कवक जिन पौधों की जड़ों में सहजीवी के रूप में रहता है उन पौधों में आर्सेनिक, जड़ों तक ही सीमित रह जाता है और पौधों की वृद्धि और विकास पर आर्सेनिक का कोई दुष्प्रभाव नही होता है। यह कवक दो प्रकार से आर्सेनिक का निवारण करता है।

जब भूमि में आर्सेनिक की मात्रा कम होती है तो यह कवक आर्सेनिक को अपनी रिक्तिकाओं में संग्रहित कर लेता है और जब आर्सेनिक की मात्रा भूमि में अधिक होती है तब यह कवक आर्सेनिक को अपनी कोशिका भित्ति पर उसे कणों के रूप में जमा कर लेता है। इस प्रकार दोनों ही स्थिति में यह कवक आर्सेनिक कि जड़ों तक ही सीमित रखता है और उसे तनों और पत्तियों में नहीं पहुँचने देता (चित्र 2)।

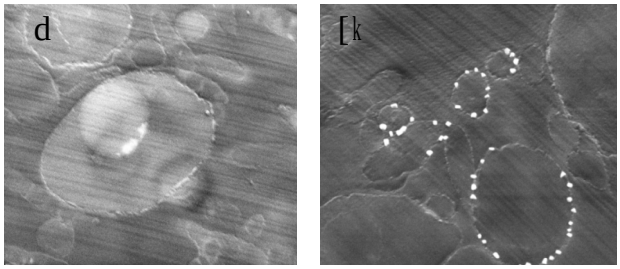

चित्र 2: कवक *पिरिफोर्मोस्पोरा इंडिका* में आर्सेनिक का संग्रहण (क) रिक्तिका के भीतर (ख) कवक कोशिका की भित्ति पर आर्सेनिक कण (स्रोत : मोहम्मद एवं अन्य–2016, 10.3389/fmicb-2017.00754)

वास्तव में यह कवक आर्सेनिक को अवशोषण के द्वारा, रिक्तिका के भीतर संचयन या उन्हें अघुलनशील कणों में परिवर्तित करके उसकी विषाक्तता में कमी करता है (चित्र 3)। इस प्रकार से कवक का आर्सेनिक विषाक्तता के उन्मूलन में सहयोग के कारण आर्सेनिक से प्रदूषित कृषि योग्य भूमि पर इनकी उपयोगिता बढ़ जाती है। भविष्य में इस कवक का उपयोग हमें भोज्य पदार्थो में आर्सेनिक की समस्या से छुटकारा दिलाने में कारगर सिद्ध होगा।

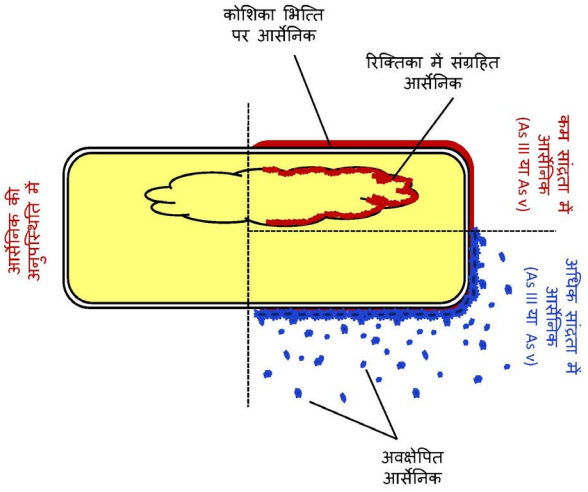

चित्र 3: कवक *पिरिफोर्मोस्पोरा इंडिका* द्वारा आर्सेनिक विषाक्तता के उन्मूलन का चित्रण
(स्रोत : मोहम्मद एवं अन्य–2016, 10.3389/fmicb-2017.00754)

IykfLVd LokLF; d fy, ?kkrd

पुरानी तथा कई बार प्रयोग की गई (रिसाईकिल्ड) प्लास्टिक से बने बर्तन व सामान का प्रयोग न करें

रिसाईकिल्ड प्लास्टिक के सस्ते, आकर्षक रंगीन खिलौने स्वास्थ के लिए हानिकारक हो सकते हैं

बिना पॉलिश/रंगों वाले लकड़ी के खिलौने से खेलें

u`uk d.kks }kjk ikuh ls Hkkjh /kkrq fu"dklu

Qkeh Qkfrek] ve`rk flag] vkfnR; dj ,oa lR;dke iVuk;d

नैनो मैटीरियल विषविज्ञान समूह

सीएसआईआर–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, विषविज्ञान भवन, 31, महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ–226001, उत्तर प्रदेश, भारत

पानी अर्थात जीवन की पहली प्राथमिकता और इसी प्राथमिकता का स्वच्छ और सुचारू होना विज्ञान की पहली प्राथमिकता है। इस वैज्ञानिक युग में औद्योगिक कारखाने, बढ़ते वाहन आदि से, जल प्रदूषण में भारी इजाफा हुआ है। जल प्रदूषण का मुख्य कारक है भारी धातु जो मनुष्य के पाचन तंत्र, श्वसन तंत्र को प्रभावित तो करता ही है साथ ही शरीर की गुर्दे और तंत्रिका तंत्र की कार्यक्षमता को भी प्रभावित करता है। भारी धातु अपने विषैले व कैन्सरकारी स्वभाव की वजह से अति संवेदनशील और खतरनाक तत्वों की सूची में रखे गए हैं।

कैडमियम, आर्सेनिक, सीसा, पारा, निकिल, क्रोमियम व जिंक प्रमुख भारी धातु हैं जो जल प्रदूषण के कारक हैं। बढ़ते भारी धातु के प्रदूषण के फलस्वरूप विज्ञान का रूझान इस प्रदूषण को रोकने या कम करने की ओर अग्रसर हुआ है, इसी कड़ी में नैनोतकनीक आधुनिकतम रूप है।

u`ukrduhd

नैनोतकनीक, नैनो कण पर आधारित है, जिसके बृहद उपयोग हैं, ये वे कण होते हैं जिनका आकार 1–100 नैनोमीटर तक का होता है। ये कण बहुत ही प्रभावकारी व क्रियाकारी होते हैं। इनकी सहायता से, पर्यावरण में मौजूद उन क्षयकारकों को लक्ष्य किया जा सकता है जिन पर सूक्ष्म कण भी प्रवेश नहीं कर पाते। बहुउपयोगी नैनोतकनीक के कुछ उपयोग निम्नवत हैं –

1. गैस भंडारण अनुप्रयोगों में
2. सिरेमिक और सेंसर में
3. बैटरी और ईंधन कोशिकाओं में
4. कैटालिसीस और इलेक्ट्रोलिसिस रिएक्टरों में
5. कैंसर के उपचार और पानी के उपचार के लिए चुंबकीय नैनोकणों का उपयोग आदि।

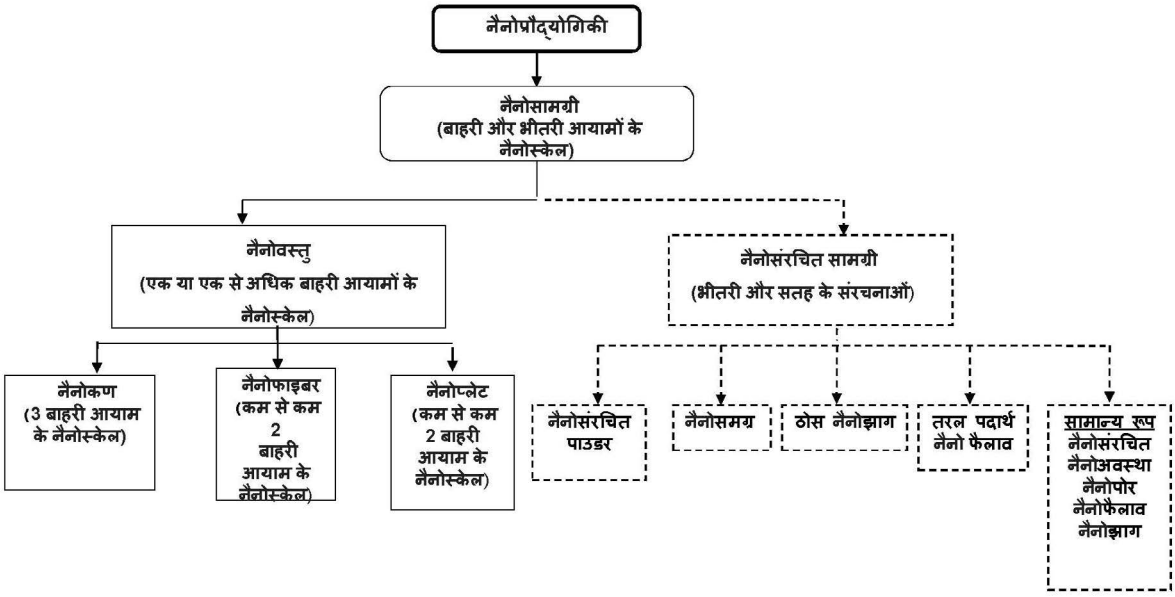

चित्र 1: नैनोप्राद्योगिकी

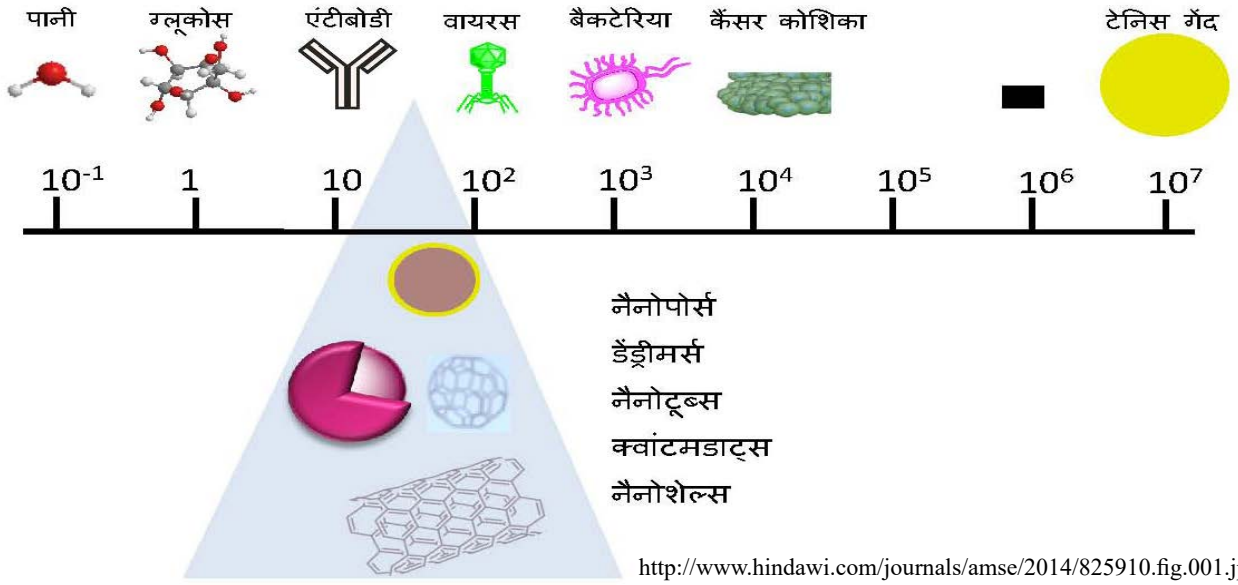

http://www.hindawi.com/journals/amse/2014/825910.fig.001.jpg

uukQkbcj uukIyV

नैनोकण का सूक्ष्म आकार, बृहद सतह क्षेत्र, क्वांटम प्रभाव, प्रभावकारी अवशोषण क्षमता, विसरण क्षमता तथा तीव्र गति से रसायनिक क्षमता उसे अद्वितीय बनाती है, इसी कारण उसका उपयोग आज बहुत सी आधुनिक तकनीकों में हो रहा है।

नैनोकण के इन गुणों का प्रयोग कर, जलीय पर्यावरण से हानिकारक अपव्यय आसानी, तीव्रता व कम लागत से हटाये जा सकते हैं।

Hkkjh /kkrvk o mudk gkfudkjd çHkko

भारत में जल प्रदूषण से जनित रोगों के कारण प्रतिदिन सैकड़ों लोगों की मौत होती है। जल प्रदूषित करने वाले प्रमुख भारी धातु व उनके हानिकारक प्रभाव निम्न हैं :

dMfe;e

कैडमियम पृथ्वी की ऊपरी सतह पर पाया जाता है (0-1मिग्रा./किग्रा.)। इसका उपयोग मिश्र धातु, रंजक व बैटेरी बनाने में होता है। उद्योगों के कचरे से भी यह पैदा होता है। यद्यपि कुछ वर्षों में कैडमियम का इस्तेमाल बैटरी बनाने में बहुत बढ़ा है मगर पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव के कारण विकसित देशों में इसके इस्तेमाल में काफी गिरावट आई है। यह प्राकृतिक रूप से कुछ खाद्य पदार्थों जैसे पत्तेदार सब्जियाँ, आलू, अनाज तथा बीजों में भी पाया जाता है। यह मुख्य रूप से सिगरेट, खाद पदार्थों (आलू आदि सब्जियाँ) के द्वारा शरीर में प्रवेश करता है। इसका त्वचा में अवशोषण मुश्किल है। इसके वितरण का मुख्य मार्ग परिसंचरण तंत्र है, जबकि रक्त वाहिकाएं, कैडमियम विषक्तता का मुख्य अंग है।

gkfudkjd çHkko

इसके प्रभाव से फेफड़ों के कार्य पर असर पड़ता है तथा छाती के रेडियोग्राफ में भी परिवर्तन आ जाता है जो कि एम्फिसेमा की स्थिति को दर्शाता है। कैडमियम की उपस्थिति का पता मुख्यतः रक्त तथा मूत्र में कैडमियम की मात्रा को नाप कर पता किया जाता है। अगर कैडमियम की उपस्थिति का रक्त में पता चलता है तो यह कैडमियम के सिगरेट पीने से हाल ही के हुए एक्स्पोसर को दिखाता है। मूत्र में कैडमियम की उपस्थिति किडनी में संचयन दर्शाती है। दीर्घकालिक प्रभाव से फेफड़ों के कैंसर, हड्डियों का भंगुरन व गुर्दे की खराबी हो सकती है।

कैडमियम की विषाक्तता का अभी बहुत अधिक अध्ययन नहीं हुआ है मगर यह अनुमान लगाया गया है कि, कैडमियम कोशिकाओं को प्रारंभ में प्रतिक्रिया ऑक्सीजन प्रजातियों द्वारा क्षति पहुंचती है, यह डीएनए को क्षतिग्रस्त करके, न्यूक्लीक एअम्ल व प्रोटीन निर्माण को रोक देता है।

ikjk ¼edjh½

यह प्रकृति में तीन रूपों में पाया जाता है, धात्विक, कार्बनिक व अकार्बनिक। इनमें से प्रत्येक की अलग विषाक्तता की क्षमता होती है। पारा का उपयोग,

विद्युत कारखानों, (स्विच, बैटरी, थर्मोस्टेट), दांत विज्ञान व कास्टिक सोडा निर्माण जैसे कार्यों मे होता है। पारा मुख्यतः डेंटल अमलगम तथा मछलियों के सेवन से हमारे शरीर में प्रवेश करता है।

gkfudkjd çHkko

इसके हाल ही के प्रभाव से डायरिया, बुखार व उल्टी तथा दीर्घकालिक प्रभाव से, मुँह व मसूड़ों में जलन, कंपन, हाथों व पैरों में दर्द व उनका गुलाबी होना तथा गुर्दा विकृति जैसी समस्याएँ आ सकती हैं। जीवाणु तथा शैवाल जलीय मार्ग से आए पारा को मेथाइलेट कर देते हैं और यह मेथाइलेटेड पारा खाद्य ऋंखला के द्वारा मछलियों में तथा फिर मनुष्य के शरीर में भी प्रवेश कर जाता है।

तात्त्विक पारा वाष्प, फेफड़ों तथा मुंह के ऊतकों द्वारा प्रभावी रूप से अवशोषित हो जाता है। जब एक बार यह कोशिकाओं में प्रवेश कर जाता है तो एचजी^{0} ऑक्सीकृत हो जाता है तथा अत्यधिक क्रियाशील एचजी^{2} में बदल जाता है।

मेथाइल मर्करी जठरांत्रीय मार्ग में आसानी से अवषोशित हो जाता है, तथा लिपिड में घुलनशील होने के कारण प्लेसेंटा तथा रक्त मस्तिष्क बाधा को भी पार कर जाता है। इसका एक बड़ा हिस्सा अवशोषित होता है तथा किडनी, तंत्रिका ऊतकों तथा यकृत में एकत्रित हो जाता है।

lhlk ¼yhM½

सीसा मुख्यतः, पेट्रोल से निकलने वाले धुओं से पर्यावरण में आता है। यद्यपि सीसा प्राकृतिक रूप से वातावरण में पाया जाता है, मनुष्य जनित क्रियाएँ जैसे कि, जीवाष्म ईंधन को जलाना, खनन, तथा निर्माण की वजह से पर्यावरण में सीसा की मात्रा बहुत बढ़ गई है। सीसा बैटरी निर्माण, घरेलू कृषि व एक्स रे यंत्र बनाने में काम आता है। वयस्क मनुष्य पानी का 35–50% सीसा अवशोषित करते हैं तथा बच्चों में अवशोषण की मात्रा 50% से भी ज्यादा हो सकती है।

gkfudkjd çHkko

तंत्रिका तंत्र, सीसा का सबसे अधिक संवेदनशील लक्ष्य होता है। इससे से बहुत से अंगों पर दुष्प्रभाव हो सकता है जैसे, गुर्दा, यकृत, केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र, अन्तः स्रावी तंत्र, तथा प्रजनन तंत्र। इसके हाल ही के प्रभाव से मस्तिष्क दुष्क्रिया, उल्टी आदि हो सकते हैं, व दीर्घकालिक प्रभाव से रक्त की कमी, इन्सेप्लोपेथी व गुर्दे की खराबी हो सकती है।

Økfe;e

क्रोमियम पृथ्वी की ऊपरी सतह में पाया जाता है। यह कई ऑक्सीकारण अवस्था {Cr (II) से Cr (VII) तक} में पाया जाता है। क्रोमियम की Cr (III) अवस्था बहुत स्थिर होती है तथा यह इस अवस्था में अपने अयस्कों जैसे फेरोक्रोमाइट में पाया जाता है। Cr (VI) दूसरी सबसे स्थिर अवस्था है। तात्विक क्रोमियम {Cr (0)} प्राकृतिक रूप से नहीं पाई जाती है। यह औद्योगिक अपव्यय से उत्पन्न होता है। यह वेल्डिंग में, धातु बनाने में काम आता है। मनुष्य जनित क्रियायों के फलस्वरूप Cr (VI) पर्यावरण में मुक्त होता है। Cr (III) मनुष्य के लिए एक आवश्यक पोषक तत्व है जो इंसुलिन को शक्ति प्रदान करके, ग्लूकोज, वसा तथा प्रोटीन उपापचय (मेटाबोलिस्म) में मदद करता है।

gkfudkjd çHkko

इसके हाल ही के प्रभाव से आंतरिक रक्त स्राव, हीमोलाइसिस तथा दीर्घकालिक प्रभाव से फेफड़ों का कैंसर हो सकता है।

कुछ लोग Cr (III) तथा Cr (VI) के लिए बहुत ही संवेदनशील होते हैं। इसके प्रभाव से एलर्जी संबंधी प्रक्रियाएं (जैसे त्वचा का अत्यधिक लाल होना तथा सूजन आना) हो जाती हैं। क्रोमियम की बहुत अधिक मात्रा का गलती से या जानबूझकर सेवन करने के परिणामस्वरूप, श्वास संबंधी, हृदयवाहिनी, जठरातंत्रीय, यकृत संबंधी, गुर्दा संबंधी तथा तंत्रिका तंत्र संबंधी दुष्परिणाम देखे गए हैं।

vklfud ¼Arsenic½

आर्सेनिक एक सर्वव्यापी तत्व है जो कि लगभग पर्यावरण के हर भाग में पाया जाता है। इसका मुख्य अकार्बनिक रूप ट्राइवेलेंट आर्सेनाइट तथा पेंटावेलेंट आर्सेनेट है। कार्बनिक रूपों में मुख्यतः मोनोमेथाइलरसोनिक अम्ल (MMA), डाइमेथैलर्सीनीक अम्ल (DMA) तथा ट्रैमेथाइलर्सीन ऑक्साइड है। आर्सेनिक का मुख्य उपयोग कृषि के क्षेत्र में, कीटनाशक, तृणनाशक, कवकनाशक व शैवालनाशी के निर्माण में होता है साथ ही लकड़ी के परिरक्षक तथा डाई बनाने में भी काम आता है।

gkfudkjd çHkko

आर्सेनिक लगभग सभी अंगों को प्रभावित करता है जैसे हृदयतंत्र, त्वचा, तंत्रिका, वृक्क (रीनल), जठरान्त्र तथा श्वसन तंत्र। आर्सेनिक प्रदूषित क्षेत्रों में गुर्दे, त्वचा तथा जिगर के कैंसर के बहुत से मामले देखे गए हैं।

इसके हाल ही के प्रभाव से, उल्टी, डायरिया तथा दीर्घकालिक प्रभाव से डायबिटीज व कैंसर हो सकते हैं।

Hkkjh /kkrqvksa dk fu"dklu

वर्तमान में नैनोकण, नैनोपाउडर, नैनोजेल आदि का उपयोग रसायनिक व जैवीय तत्वों के पहचान व निष्कासन में हो रहा है। नैनोतकनीक का भारी धातु निष्कासन में उपयोग इसलिए लाभप्रद है क्योंकि :

- कम मात्रा व ज्यादा सतह क्षेत्र
- चुंबकीय गुण
- कम लागत कम सान्द्रण पर भी आसानी से क्षय कारकों का निष्कासन
- प्रक्रिया के दौरान खराब पदार्थों का कम निर्माण

जल से भारी धातुओं के प्रदूषण दूर करने के लिए नैनोस्केल तत्व 4 भागों में विभाजित किए जा सकते हैं

1. धातु युक्त नैनोकण
2. जीओलाइट
3. कार्बोनेसियस नैनोकण
4. डेंड्राईमर्स

इनके अलावा कार्बन नैनोट्यूब व नैनोफाइबर भी सकारात्मक नतीजे देते हैं।

Hkkjh /kkrqvksa dk fu"dklu dh fofHkUu fof/k;k

भारी धातुओं को जल से निष्कासित करने के लिए, विद्युत लेपन एक प्रमुख प्रक्रिया है जिसमें धातु आयनों को विद्युत क्षेत्र द्वारा अलग अलग एलेक्ट्रोड पर पृथक किया जाता है।

द्वितीय विधि है वाष्पीकरण जो ताप पर आधारित है। किन्तु यह ताप संवेदी तत्वों पर लागू नहीं की जा सकती।

तृतीय विधि है विसरण जिसमें, अर्धपारगम्य झिल्ली की सहायता से पृथक्करण होता है।

चतुर्थ विधि है ऑक्सीकरण न्यूनीकरण (रेडॉक्स) विधि जिसमें, इलेक्ट्रॉन स्थानांतरण द्वारा पृथक्करण होता है।

पंचम विधि है, अवशोषण अणु, कण या आयन एक बृहद अवस्था जैसे ठोस द्रव या गैस में प्रवेश कर जाते हैं।

vf/k'kks"k.k ¼Adsorption½

इन समस्त विधियों में अधिशोषण सबसे प्रभावकारी तकनीक है। क्योंकि यह नियंत्रित, प्रभावी व सुगम है। इससे विघटन कम होता है तथा उत्पाद को पुनः प्राप्त किया जा सकता है। बहुत से अधिशोषक जैसे सक्रिय कार्बन, सिलिका जेल, हाइड्रोक्सी एपेटाईट निर्मित फिल्टर, जिओलाइट व ग्रेफाइट, ऑक्साइड का उपयोग भारी धातुओं के निष्कासन में हो सकता है।

थरमोडायनामिक मापदंड यह बताते हैं कि अवशोषण की प्रक्रिया सहज, एंडोथरमिक तथा रसायनिक प्रकृति की होती हैं। कंपोजिट्स की अवशोषण क्षमता को बैच में परीक्षित किया गया है।

- जलीय समाधान से भारी धातु आयनों Cu (II), Cd (II) को हटाने के लिए मोबाइल अवशोषक के रूप में कार्बन इंकेप्सूलेटेड चुंबकीय नैनोकण का प्रयोग किया जाता है। यह विधि आयरन कैडमियम व तांबा का 95% अवशोषण करता है।
- आयरन आक्साइड (Fe_3O_4) नैनोकणों की सतह पर 1,6– हेक्साडाइअमीन के सहसंयोजक बंधन द्वारा एक नवीन चुंबकीय नैनो एडसोरबेंट जलीय विलयन से कापर Cu (II) आयनों को हटाने के लिए विकसित किया गया है। इसे अमीनो फंक्शनलाइड मेग्नेटिक नैनो अवशोषक कहते हैं। यह बहुत ही तेज व अच्छे अवशोषक का गुण दर्शाता है जो जलीय विलयन से मेटल आयन का अवशोषण, चीलेशन या आयन एक्सचेंज द्वारा करता है। अपटेक व्यवहार को बहुत से कारक प्रभावित करते हैं जैसे संपर्क समय, तापमान, पीएच, लवणता, एमएनपी–एनएच2 (MNP&NH2) की मात्रा तथा कापर (Cu2) की प्रारम्भिक मात्रा। कापर (Cu) (II) व क्रोमीयम (Cr) (IV) आयन 92% तक अवशोषित हो जाते हैं।
- यह भी ज्ञात हुआ है कि, आयरन आक्साइड (Fe_3O_4) नैनोकण 98% कापर (Cu) (II), कैडमियम (Cd)(II) व सीसा (Pb) (II) के अवशोषण में कारगर सिद्ध हुआ है। आयरन आकसाइड/एचए 99% पारा Fe_3O_4/HA 99% Hg) (II) व सीसा (Pb) (II) तथा 95% कापर

(Cu) (II) व कैडमियम (Cd) (II) अवशोषित कर सकता है।

- प्राकृतिक जियोलाइट, धनायनिक भारी धातु जो मुख्यतः कारखानों से निकलते हैं, उनके निष्कासन में उपयुक्त होता है। खराब पानी से भारी धातु आयन को पृथक करने की क्षमता जियोलाइट में निम्नवत होती है :

  $CO_2+ > Cu\ (II)+ > Zn\ (II)+ > Mn^{2+}$

- मल्टीवाल कार्बन नैनोट्यूब को लोहे के आक्साइड के चुंबकीय गुणों के साथ कंपोजिट करके एक अच्छा अवषोशक बनाया गया है। यह कंपोजिट क्रोमियम आयनों के लिए अच्छी अवशोषण क्षमता रखता है।
- सबसे अच्छा अवशोषक मोनोअमीनो–क्रियाशील सिलिका S16–1N (monoamino functionalized silica S16–1N) को माना गया है जो प्रभावी रूप से भारी धातु कैडमियम (Cd) (II), सीसा (Pb) (II), आयरन (Fe) (II) तथा मैंगनिज (Mn) (II) को अवशोषित कर सकता है।
- सोडियम डोडिसिल सल्फेट लेपित नैनो एल्यूमिना पर स्थिर 2,4 डाइनाइट्रोफिनाइलहाइड्राजीन (DNPH), आयरन (Fe) (II), कैडमियम (Cd) (II), क्रोमियम (Cr) (III), कोबाल्ट Co(II) तथा निकल (Ni) (II) धातु को अवशोषित करने के लिए विकसित किया गया है।

gkbMªkt y

फोटोपॉलीमेराइजेशन तकनीक के माध्यम से संश्लेषित 2– एकराइलमिडो –2– मिथाइल –1– प्रोपेनसल्फोनिक एसिड AMPS) पर आधारित हाइड्रोजेल, चुंबकीय उत्तरदायी समग्र हाइड्रोजेल होता है। चुंबकीय गुणों से युक्त ये समग्र हाइड्रोजेल, विषाक्त धातु आयनों, कैडमियम (Cd) (II), कोबाल्ट (Co) (II), आयरन (Fe) (II), सीसा (Pb)(II), निकल Ni (II), कापर (Cu) (II), तथा क्रोमियम (Cr) (II) को हटाने के लिए उपयोग किए जाते हैं। इससे ये पता चला है कि चुंबकीय गुणों के साथ हाइड्रोजेल नेटवर्क को प्रभावी ढंग से भारी धातुओं के निष्कासन के लिए उपयोग किया जा सकता है। चुंबकीय आइरन कण युक्त हाइड्रोजेल नेटवर्क पारंपरिक तकनीकों से ज्यादा लाभप्रद होते हैं ।

भारी धातु का जल से निष्कासन इसलिए जरूरी है क्योंकि वह बहुत समय तक वातावरण में बना रहता है, भारी धातु की विषाक्तता कम करने के लिए बहुत सी तकनीक जैसे फोटोकैटेलिटिक ऑक्सीकरण, रसायनिक स्कंदन (कोएगुलेशन), इलेक्ट्रोकेमिकल तकनीक, बायोरेमिडीएशन, आयन विनिमय रेजिन, रिवर्स ऑस्मोसिस व अवशोषण, इन सभी तकनीकों में नैनो आधारित अवशोषण तकनीक सबसे सुगम व प्रभावकारी है जिसे और गुणकारी व प्रभावमान बनाकर जल से भारी धातु का पूर्णतः निष्कासन किया जा सकता है।

अच्छे नागरिक बनें

tSoi"BlfØ;d ¼ck;kslQSDVsUV½ i;kZoj.k mipkj esa mi;ksfxrk

foosd dqekj xkSM+] jkt dqekj jLrksxh] lxhe jtd ,oa uVs'ku ef.kDde

पर्यावरण विषविज्ञान समूह,

सीएसआईआर–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, विषविज्ञान भवन, 31, महात्मा गांधी मार्ग
लखनऊ–226001, उत्तर प्रदेश, भारत

पर्यावरण जिसमें मिट्टी, पानी और हवा का समावेश है, हमेशा से विकास के पथ पर हमारा सबसे बड़ा साथी रहा है। पर्यावरण के प्रदूषित होने से सभी को भविष्य में भयंकर क्षति पहुँच सकती है। प्रदूषक जैसे कि कीटनाशक, उर्वरक, विभिन्न रूपों में हाइड्रोकार्बन, तेलकूपों से रिसाव, औद्योगिक इकाइयों का कचरा/हानिकारक धुआँ, वाहनों से निकला धुआँ इत्यादि प्रदूषण के प्रमुख कारण हैं। मात्रात्मक रूप में हाइड्रोकार्बन जैविक प्रदूषण और उनके विभिन्न रूप सबसे अधिक चिंता का विषय हैं। सबसे आम पेट्रोलियम हाइड्रोकार्बन हैं जिसमें एन– एल्केन और दूसरे ऐलिफैटिक, ऐरोमेटिक यौगिक एवं सरल यौगिक शामिल हैं जो पर्यावरण पर लगातार प्रतिकूल प्रभाव डाल रहे हैं। ये वनस्पतियों, पशुवर्ग, एवं मानव स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं। 1970 से अब तक तेलकूपों से करीब 5.6 लाख टन तेल पर्यावरण में रिस चुका है जिससे पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा है। प्रकाशीय–ऑक्सीकरण, वाष्पीकरण और सूक्ष्मजीव द्वारा क्षरण जैसे प्राकृतिक तंत्रों से हाइड्रोकार्बन को हटाने में वर्षों का समय लगता है। इसलिए उच्च दक्षता और कम लागत वाले तरीकों का विकास जरूरी है और इन नये तरीकों से, प्रदूषकों को सुरक्षित रूप से पर्यावरण से दूर किया जा सकता है, जैविक मूल के सर्फेक्टेंट इसी दिशा में प्रभावशाली कार्य करते हैं। पर्यावरण में ऐसे जीवाणु उपस्थित हैं जो कि कार्बनिक हाइड्रोफोबिक (जलरोधी) यौगिकों (जीनोबायोटिक यौगिकों) को विघटित करने में सक्षम हैं एवं आमतौर पर जैवनिम्नीकरण नहीं होते। एक क्रिया जिसके द्वारा विघटन किया जाता है उसमे जैविक सर्फेक्टेंट को उत्पन्न किया जाता है जो कि झिल्ली की पारगम्यता एवं हाइड्रोफोबिक घटकों की जलीय घुलनशीलता को बढ़ा देते हैं जिसके कारण हाइड्रोफोबिक घटकों की कोशिका झिल्ली के माध्यम से उनके कोशिकीय परिवहन में सुविधा प्रदान करती है। हम जानते हैं कि ये दीर्घस्थायी यौगिक प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं परंतु, अभी भी इन यौगिकों का जैवसंचयन दैनिक आधार पर बढ़ता ही जा रहा है इसीलिए उससे प्रदूषित पर्यावरण को स्वच्छ बनाने के लिए इस तरह के उपायों के प्रयोग की अपार संभावनाएं है।

मिट्टी की गुणवत्ता और मृदा में उपस्थित सूक्ष्मजीवी समुदायों की गतिविधि, मुख्यतः जैव भू–रसायन चक्र, कार्बनिक पदार्थ, प्रजनन क्षमता को निर्धारित करती है। मृदा सूक्ष्मजीवी पैमाने बहुत समय से मिट्टी की गुणवत्ता के अवलोकन में सूचक की तरह प्रयोग किये जाते हैं। इसलिए मिट्टी में सूक्ष्म जैविक विविधता का मात्रात्मक विवरण गहन रुचि का विषय बन गया है, लेकिन यह अभी भी सूक्ष्म जैवपरिस्थितिकी विज्ञान विद्वानों के लिए अत्याधिक कठिन कार्य माना जा रहा है। मृदा में उपस्थित अधिकांश सूक्ष्मजीवों को पारंपरिक तकनीक से चरित्र–चित्रण नहीं किया जा सकता है। असंवर्धित सूक्ष्मजीव, सूक्ष्मजीव दुनिया का एक विशाल भाग हैं। लगभग 80–99% सूक्ष्मजीवों का अभी भी कृत्रिम माध्यम में सवर्धन नहीं किया जा सकता है। यह तो स्पष्ट है कि हम संभावित अद्वितीय जैव रसायन से इस असंवर्धनीय अंश का दोहन करने में सक्षम हैं और इसके लिए स्वतंत्र संवर्धन दृष्टिकोण नियोजित किया जाने की जरूरत है। डी एन ए आधारित फिंगरप्रिंटिंग विधि से जातिवृति आधार पर सूक्ष्मजीवी समुदायों के टुकड़े करने से सूक्ष्मजीव विविधता में हमारी अंतर्दृष्टि में वृद्धि हुई है। इसे अब अलग–अलग प्रजातियों के कई व्यवहार संबंधी लक्षण केवल एक समुदाय के संदर्भ में समझाने के लिए स्वीकार कर लिया है, क्योंकि इन तरीकों का अपरिहार्य उपकरण न केवल शास्त्रीय सूक्ष्मजैविक पारिस्थिति एवं अनुसंधान के अन्य क्षेत्र में उपयोगी है। सर्फेक्टेंट यौगिकों में सतह सक्रिय गुण होते हैं यानी वो दो अघुलनशील द्रव्यों की परिधि पर जम जाता है और उन दोनों के बीच तनाव को कम कर देते हैं। वे एम्फीफिलिक प्रकृति के होते हैं जिसमे दोनों जलरोधी और जलस्नेही गुण मौजूद होते हैं। रासायनिक सर्फेक्टेंट बड़े पैमाने पर एक लंबे समय के लिए दैनिक उपयोग के उत्पादों जैसे सर्फ, साबुन, खाद्य उत्पादों और सौंदर्य प्रसाधन के रूप में गीले एजेंटों और पायसीकरण

(emulsions) आदि में बहुतायत में इस्तेमाल किया जा रहा है। जबकि इनका उपयोग करने से प्रमुख दोष यह है कि रसायनिक सर्फेक्टेंट आसानी से जैवविघटित नहीं होते हैं, वे जहरीले हैं और अत्यधिक मात्रा में प्रदूषक तत्वों को उत्पन्न करते हैं जैविक स्रोतों से प्राप्त प्रष्ठ–सक्रियाकारकों को जैवसर्फेक्टेंट के रूप में नाम दिया गया हैं, वे रसायनिक सर्फेक्टेंट के मुकाबले ज्यादा लाभकारी हैं। प्राकृतिक जैवसर्फेक्टेंट, पर्यावरण अनकूल उत्पाद हैं जो कि कम हानिकारक हैं, आसानी से जैवविघटित हो सकते हैं और दूषित स्थल पर इन्हें प्रयोगशाला के बाहर भी आसानी से उत्पादित कर सकते हैं। उनके उत्पादन के लिए कई सस्ते अपशिष्ट पदार्थों का उपयोग होता है, जो उनकी लागत को कम कर देता है। सूक्ष्मजीवी मूल के सर्फेक्टेंट यानी जैविक सर्फेक्टेंट, पहली खोज में किण्वन जीवाणु द्वारा उत्पन्न बाह्य एम्फीफिलिक यौगिकों के रूप में हुई। पिछले कुछ दशकों में, जैवसर्फेक्टेंट (माइक्रोबियल मूल के सर्फेक्टेंट) ने अपनी और जैवविघटनशीलता, कम विषाक्तता, पारिस्थितिकी स्वीकार्यता, अक्षय और सस्ते आधार से उत्पन्न हो पाने के कारण ध्यान आकर्षित किया है। कई संरचनात्मक रूप से विविध सतह सक्रिय अणुओं को सूक्ष्मजीवों की एक व्यापक स्पेक्ट्रम (जीवाणु, कवक, और खमीर) द्वारा उत्पन्न किया जाता हैं। अब तक अध्ययन किये गए जैवसर्फेक्टेंट उत्पादकों में जीवाणु और खमीर प्रमुख निकाय होते हैं। कुछ कवक निकाय भी इसी श्रेणी में आते हैं।

जैवसर्फेक्टेंट हाइड्रोकार्बन के जैवविघटन को 85–97% बढ़ाने के लिए सक्षम हैं। इसी प्रकार जैवसर्फेक्टेंट युक्त कोशिका मुक्त संवर्धन अवशेष सीधे दूषित स्थानों पर लगाये जा सकते हैं। इन जैविक यौगिकों का उपयोग विभिन्न क्षेत्रों में किया जाता है जैसे पेट्रोलियम उद्योगों में एनहांस्ड तेल वसूली में पायसीकरण (emulsification) के द्वारा खाद्य उद्योग में कार्यात्मक सामग्री के रूप में और सूक्ष्मजीवविज्ञानी, चिकित्सकीय घटक, कृषि अनुप्रयोगों, जैव–संसाधन अनुप्रयोगों के लिए डाउनस्ट्रीम प्रसंस्करण में और कॉस्मेटिक उद्योगों में सौंदर्य उत्पादों में उपयोग किया जाता है। अच्छे भौतिक गुणों, कम विषाक्तता और अच्छे से जैवविघटित होने वाले जैवसर्फेक्टेंट पर्यावरण संरक्षण तकनीकों में व्यापक रूप से प्रयुक्त किये जाते हैं जैसे पानी और मिट्टी का उपचार, फैले तेल को हटाने इत्यादि में। जैव–पहुंच और जैव–संचय जीनोबायोटिक यौगिकों के सूक्ष्मजीवी निम्नीकरण में प्रमुख बाधा रहे हैं। जैवसर्फेक्टेंट इसी समस्या के समाधान में मुख्य भूमिका निभाते हैं। ये जीनोबायोटिक यौगिकों की सूक्ष्मजीव तक पहुँच बढ़ा कर वातावरण में पहले से ही उपस्थित निम्नीकारक की क्षमता बढ़ा कर इन समस्याओं को दूर करने के लिए एक प्रमुख भूमिका निभाते हैं। सूक्ष्मजीवों के शारीरिक क्रिया विज्ञान, प्रदूषक और सर्फेक्टेंट की रसायनिक प्रकृति पर निर्भर करते हुए जैवसर्फेक्टेंट दोनों उत्तेजक अथवा बायोरेमेडियल प्रभाव को कम करने वाले हो सकते हैं। जैवसर्फेक्टेंट उत्पादन और उपज बढ़ाने के लिए अनुकूलन अध्ययन का एक सक्रिय क्षेत्र है।

tolQDVV dh ç–fr

सर्फेक्टेंट कैटआयनिक, एनआयनिक, उभयधर्मी या नान–आयनिक प्रकृति के हो सकते हैं। ये पोलोरिटी के आधार पर वर्गीकृत किये जाते हैं। आयोनिक सर्फेक्टेंट के प्रभारी ग्रुप पर कुल चार्ज होता है, यदि पॉजिटिव चार्ज हो तो सर्फेक्टेंट विशेष रूप से कैटआयनिक कहा जाता है, और यदि चार्ज नेगेटिव हो तो एनआयनिक कहा जाता है। यदि दोनों ही चार्ज प्रभारी ग्रुप पर मोजूद हो तो उसे ज़्विटरआयन कहते हैं, यदि किसी सर्फेक्टेंट के प्रभारी ग्रुप पर कोई भी चार्ज उपलब्ध न हो तो उसे नान–आयनिक कहा जाता है। पी एच, तापमान, और खारापन के अधिकतम स्थितियों में, जैवसर्फेक्टेंट सिंथेटिक सर्फेक्टेंट की तुलना में बहुत अच्छी गतिविधि दर्ज करते हैं। जैवसर्फेक्टेंटे के गुणों एवं अनुप्रयोगों में– उत्कृष्ट अपकर्षण, झाग बनाना, पायसीकरण (emulsification) करना, फैलाविकरण करने जैसे लक्षण शामिल हैं जैवसर्फेक्टेंट मिस्ल्स का निर्माण करते है यह इंटरफेसियल और सतह तनाव को कम करते है और साथ–साथ जैव उपलब्धता और हाइड्रोफोबिक कार्बनिक यौगिकों की विलेयता में वृद्धि करने के लिए सक्षम है। जब जैवसर्फेक्टेंट की सघनता किसी घोल में एक निर्धारित सीमा को पार करता है तो मिस्ल्स का निर्माण होता है, यही सघनता समीक्षात्मक मिस्ल्स सघनता (सीएमसी) कही जाती है। सर्फेक्टेंट की क्षमता उसके सीएमसी मान द्वारा मापी जा सकती है। कम सीएमसी मान जैवसर्फेक्टेंट की कार्य कुशलता से संबंधित है।

tolQDVV dk oxhdj.k

जैवसर्फेक्टेंट, अणुओं का समूह है जो संरचनात्मक रूप से विविध और विभिन्न सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पादित किये जाते हैं। वे उनकी माइक्रोबियल उत्पत्ति और रसायनिक संरचना द्वारा वर्गीकृत किये गए हैं। संरचनात्मक रूप

से वे एम्फिपैथिक हैं जिनमे हाइड्रोफिलिक मोईएटी होती है जिसमे एक अम्ल, पेप्टाइड कैटआयन अथवा एनआयन एकल, द्वि, अथवा पॉलीसाकरोईड और संतृप्त या असंतृप्त हाइड्रोकार्बन की अथवा वसा अम्ल की चेन की हाइड्रोफोबिक मोईएटी होती है। आण्विक वजन के आधार पर इन्हें मुख्य रूप से दो वर्गों जैवसर्फेक्टेंट और जैवएमल्सीफायर के रूप में बाटा गया है है और वे मुख्य रूप से स्थिर रखने का काम करते हैं। जीवसर्फेक्टेंट कम आणविक भार वाले सतह सक्रिय यौगिक हैं जैसे कि ग्लाइकोलिपिड और लिपोपेप्टाइड, जैवएमल्सीफायर उच्च आण्विक वजन वाले सतह सक्रियहैं।

रसायनिक एवं संरचना के आधार पर इन्हें निम्नलिखित छह वर्गों में बाटा गया हैं :

I- ग्लाइकोलिपिड

II- फॉस्फोलिपिड

III- लिपोप्रोटीन

IV- वसायुक्त अम्ल

V- पॉलीमरिक सर्फेक्टेंट

VI- पार्टिकुलेट सर्फेक्टेंट

जलस्नेही जैव पृष्ठसक्रियकारकों का पोलर क्षेत्र कार्बोहाइड्रेट, फॉस्फेट समूह, अल्कोहल, एमिनो अम्ल, पेप्टाइड, कार्बोस्लिक अम्ल या कुछ अन्य यौगिक हो सकता है। जलरोधी जैव पृष्ठसक्रियकारकों का नोनपोलर क्षेत्र ज्यादातर एक संतृप्त लम्बी कार्बन चेन या असंतृप्त वसीय अम्ल मे घुलनशील है। एक एकल अणु में दोनों जलस्नेही और जलरोधी मोइटी की उपस्थिति विलेयता में लाभ प्रदान करती है जिससे कि वह कार्बनिक और जलीय चरण दोनों में ही घुलनशील होता है।

उपरोक्त छह वर्गों के बीच एक प्रमुख वर्ग यानी ग्लाइकोलिपिड जैवसर्फेक्टेंट विस्तार में यहाँ वर्णित है।

Xykbdksfyfi M tSolQSDVsV dk foHkktu

ग्लाइकोलिपिड जैवसर्फेक्टेंट के सबसे आम प्रकार हैं। घटक मोनो–, डाई–, ट्राई– और टेट्रासेक्राइड्स में ग्लूकोज, मेनोज, गेलेक्टोस, ग्लूक्योरोनिक अम्ल, रैहमनोज और गैलेक्टोज सल्फेट शामिल हैं। वसा अम्ल घटक की आमतौर पर उसी सूक्ष्मजीव के फॉस्फोलिपिड के समान संरचना होती है। ग्लाइकोलिपिड सर्फेक्टेंट एक कार्बोहाइड्रेट सिर, जलस्नेही हिस्से के रूप में तथा लिपिड पूँछ जलरोधी का बना होता हैं। अन्य रासायनिक सर्फेक्टेंट की तुलना में ग्लाइकोलिपिड सर्फेक्टेंट कि संभावित उपयोगिताएं तथा कार्यात्मक गुण अधिक हैं।

ग्लाइकोलिपिड को निम्म्लिखित रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है :

jgeuks&fyfiM l

रैहमनो–लिपिड्स जैवसर्फेक्टेंट जो सबसे बड़े पैमाने पर अध्ययन किया गया है और व्यावसायिक रूप से उपलब्ध है, परंतु रहमनो–लिपिड का नुकसान यह है कि वह अवसरवादी मानव रोगजनक *सूडोमोनास एरुगुनोसा* (*Pseudomonas aeruginosa*) द्वारा निर्मित है। रहमनो–लिपिड, ग्लाइकोलिपिड वर्ग के अंतर्गत आता है जिसमे शर्करा भाग में रैहमनोज तथा वसा अम्ल श्रृंखला के रूप में बीटा हाईड्राक्सीडेकोनोईक अम्ल होता है। कुछ सूडोमोनास प्रजातियों से ज्यादा मात्रा में ग्लाइकोलिपिड उत्पादन होता है जो कि रैहमनोज तथा बीटा हाईड्राक्सीडेकोनोईक अम्ल की दो अणुओं से मिलकर बना होता है। अम्ल का एक OH समूह रैहमनोज डाईसैकेराइड (disaccharide) के अपचायक अंत के साथ ग्लाईकोसिडिक बांड में शामिल है तथा दूसरी अम्ल का OH समूह एस्टर बांड में शामिल है। यह एक और दो रैहमनोज मोएटीज के साथ मोनो या डाई फार्म के रूप में उपस्थित हो सकते हैं। आर एच एल ओपेरोन, रैहमनो–लिपिड के जैवसृजन में शामिल पांच जीन अर्थात् आरएचएलएल (तीस I), आरएचएलआर (तीस R), आरएचएलए (तीस A), आरएचएलबी (तीस B) और आरएचएलसी (तीस C) होते हैं। आरएचएल (RHL) प्रोटीन द्वारा 3–(3 हाइड्रोक्सी एल्केन) बनता है जो कि र–रैहमनोज के साथ सब्सट्रेट के रूप में आरएचएलबी (तीस B) तथा आरएचएलसी (तीस C) द्वारा मोनो और डाई रैहमनो–लिपिड के निर्माण के लिए प्रयोग किया जाता है। रैहमनो–लिपिड का संश्लेषण ग्लूकोज–1–फॉस्फेट से होता है जो कि रैहमनोज एल्जिनेट सिन्थितेज सी के माध्यम से बनता है।

lksQksjksfyfiM

सोफोरोलिपिड एक सतह सक्रिय ग्लाइकोलिपिड यौगिक है जो कि गैर रोगजनक खमीर प्रजातियों में से एक चयनित संख्या से संश्लेषित किया जा सकता है। सोफोरोलिपिड पर पहली रिपोर्ट 1961 में प्रकाशित की गई

थी किन्तु पिछले दो दशकों में, क्योंकि पर्यावरण के प्रति जागरूकता बढ़ रही है, वे अपनी जैवविघटन शक्ति और कम ईकोटोक्सिसिटी के कारण संभावित जैवसर्फेक्टेंट के रूप में मुख्य आकर्षण है। आज सोफोरोलिपिड को सक्षम जैवसर्फेक्टेंट माना जाता है। सोफोरोलिपिड उत्पादन की प्रक्रिया में, सर्फेक्टेंट के संश्लेषण में (वृद्धि) हासिल तभी की जा सकती है जब ग्लूकोज और सुक्रोज के रूप में दो इकाईयों को अलग–अलग उपयोग करने के बजाय एक साथ इस्तेमाल किया जाता है। *सी. बोम्बिकोला* (*C-bombicola*) का संवर्धन लैक्टोज और जैतून के तेल की उपस्थिति में किया जाता है, जबकि अगर केवल लैक्टोज को प्रयोग किया जाये तो उत्पादन नहीं होता है। जब अकेले सुक्रोज एकमात्र कार्बन स्रोत के रूप में प्रतिस्थापित किया गया था तब यह कम विकास दर दर्शाता है। हेक्साडेकेन और आक्टाडेकेन कार्बन स्रोत को प्रयोग करने से उत्पादन में कई गुना वृद्धि होती है क्योंकि हाइड्रोक्सी वसा अम्ल में परिवर्तित होने के बाद से वे सीधे सोफोरोलिपिड आणविक में शामिल किया जा सकता है और इस तरह से वो सोफोरोलिपिड वसा अम्ल के मिश्रण की अधिकतम मात्रा में आ जाता है। वनस्पति तेल जो कि आमतौर पर उपलब्ध होते हैं, वे भी इस्तेमाल किये जा सकते हैं, क्योंकि वे वसा अम्ल श्रृंखला से बने होते हैं जो कि 16–18 कार्बन परमाणुओं की होती है। इसी कारण वश यह एक आदर्श स्रोत है जो सीधे सोफोरोलिपिड में शामिल किया जा सकता है। हाइड्रोफोबिक सब्सट्रेट के उपयोग से उत्पादन और बढ़ता है।

Vgykt

ट्रेहलोज लिपिड ज्यादातर रहोडोकोकस पीढ़ी के जीवाणु से मिलता है। वियोजन लंबी श्रृंखला डी–हाइड्रोकार्बन जैसे डी–हेक्साडेकेन की उपस्थिति में उच्च उपज दिखाता है। अन्य हालात जैसे कि फॉस्फेट बफर की ज्यादा मात्रा और तटस्थ पी एच हालत, स्क्स्नायल ट्रीहालोज लिपिड का उत्पादन बढ़ा देती हैं। आनुवंशिक घटक में इंजीनियरिंग से ट्रेहलोज लिपिड का उत्पादन बढ़ाया जा सकता है। ट्रेहलोज लिपिड की विभिन्न संरचना रहोडोकोकस जाति में विशेष रूप से स्पष्ट कर दिया गया है। इस ग्लाइकोलिपिड कि विशेषता यह है कि ये हाइड्रोकार्बन्स की घुलन शीलता बढ़ाता है तथा दो परतो के बीच के तनाव को कम करता है, इन विशेषताओं के फलस्वरूप इस तरह के ग्लाइकोलिपिड जैव सर्फेक्टेंट में रुचि बढ़ती जा रही है। अन्य सूक्ष्मजीवी ग्लाइकोंलिपिड्स की तुलना में, ट्रेहलोज लिपिड में आम तौर पर विषम परिणाम पाये गए है। निषेध और बायोडीग्रेडेशन दरों में वृद्धि के दोनों मामलों में परिणाम अन्य सक्ष्जीवी ग्लाइकोंलिपिड्स के समान ही हैं।

tolQDVV dh igpku vkj fo’k"krk

,efYlQhdlu xfrfof/k

एमल्सिफीकेसन गतिविधि को ई 24 सूचकांक के रूप में वर्णित किया गया इसमे एमल्सिफाइड़ परत की ऊंचाई को तरल स्तंभ की कुल ऊंचाई से विभाजित करके तरल की कुल ऊंचाई के प्रतिशत के रूप में परिभाषित किया गया है (चित्र1)।

E24 = (एमल्सिफाइड परत की ऊंचाई / हाइड्रोकार्बन की कुल ऊंचाई)*100

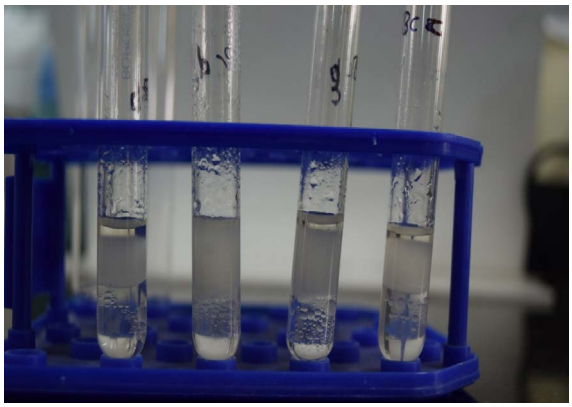

चित्र 1: चित्र में पानी के साथ अरंडी (कैस्टर) के तेल के मिलाये जाने पर (emulsification) पायसिकरण को दर्शाया गया है। कंट्रोल (बाएं) और जीवसर्फेक्टेंट को (दाएं) मिलाने के बाद पानी और बीच में बढ़ती हुई एमल्सिफीकेसन गतिविधि।

tholQDVV d vk;fud x.k

कोशिका बाध्य जीवसर्फेक्टेंट के आयनिक गुणों को अगार छिद्र प्रसार विधि में मामूली संशोधन करके निर्धारित किया गया है और मेथिलीन ब्लू का ऊपयोग फोटोग्राफिक उद्देश्य के लिए किया गया है। संक्षेप में, 1% अगार की एक प्लेट बनाई जाती है जिनमे समान दूरी पर 3 छिद्र बनाये जाते हैं। बीच वाले छिद्र में 10 μl जीवसर्फेक्टेंट भरा जाता है। दोनों स्थित वाले छिद्र में से एक में एनआयनिक यौगिको (सोडियम डोडेसिल सल्फेट) और दूसरे में कैटआयनिक यौगिक (सिट्यलट्रीमेथिल अमोनियम ब्रोमाइड (सीटेब) भरा जाता है। उन प्लेट्स को 25°C पर 24 घंटो के लिए वर्षण लाइन आने तक इनक्यूबेट किये

जाते है।

M",i&iru ij[k

नमूनों को जीवसर्फेक्टेंट की उपस्थिति के लिए परखा जाता है। संक्षेप में,पैराफिल्म पर पानी की एक बूंद को रखा जाता है और इनके केंद्र में कोशिका मुक्त तरल पदार्थ मिलाये जाते है। यदि दोनों बूँद मिल जाती हैं तो वह जीवसर्फेक्टेंट की उपस्थिति के लिए एक सकारात्मक परीक्षण का संकेत देती हैं (चित्र 2)। गैर–आयनीकृत पानी को एक नकारात्मक नियंत्रक और सकारात्मक नियंत्रक के रूप में रमनोंवसा जे बी आर – 425 का इस्तेमाल किया जाता है।

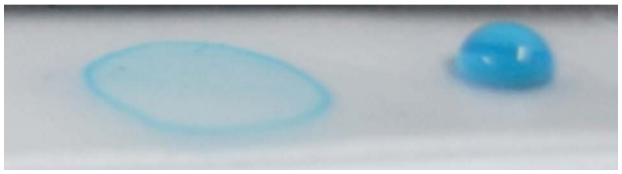

चित्र 2: चित्र में पानी की बूंदों का फैलना दर्शाया गया है। कंट्रोल(दाएं) और जैव पृष्ठसक्रियकारक(बाएं) को मिलाने के बाद पानी की बूंद में बदलाव प्रदर्शित है।

i"B ruko ¼**Surface tension**½ eki

इस प्रक्रिया में कोशिका मुक्त सतह पर तैरने वाले तरलों का पृष्ठ तनाव निर्धारित किया जाता है। पृष्ठ तनाव में कमी होना सतह पर तैरने वाले यौगिकों जैसे सर्फेक्टेंट की उपस्थिति की पुष्टि करता है। कोशिका मुक्त सतह पर तैरने वाले तरलों का सतह तनाव स्तलोगमोंमेट्रिक विधि द्वारा निर्धारित किया जाता है। पृष्ठ तनाव माप नियंत्रण (बिना जीवाणु कोशिका के) कमरे के तापमान पर नियंत्रक के विपरीत किया जाता है। स्तलोगमोंमेट्रिक विधि को पृष्ठ तनाव को मापने के लिए निर्धारित करते हैं। तरल पदार्थ की मात्रा की जांच एक छिद्र से गिरी बूंदों की गिनती द्वारा की जाती है जिसके लिए निम्न सूत्र परिकलित किया जाता है।

Σविलये = σजल× घोल की छ बूंदों का वजन / पानी की छ बूंदों का वजन

jä lıyk;h ij[k

इसमें 5% भेड़ रक्त से अगार प्लेट तैयार किए जाते है और जीवाणु कोशिकाओं को उन प्लेट्स पर चिन्हित किया जाता है। 25°C पर इन प्लेटों के दो दिनों के लिए रखते हैं। जैव पृष्ठसक्रियकारकों के उत्पादन के लिए सकारात्मक जीवाणु कोशिका रक्त कोशिकाओं को तोड़ देती हैं और प्लेट पर एक स्पष्ट जोन का निर्माण करती हैं। इस सिद्धांत को अपनाते हुए जैव पृष्ठसक्रियकारकों के उत्पादन के लिए सकारात्मक कोशिकाओ की जांच की जाती है।

tSo i"BlfØ;d dkjdk d vuç;kx

जैव पृष्ठसक्रियकारकों का उपयोग प्राकृतिक और पर्यावरण के अनुकूल होने के कारण किया जा रहा है। जैव पृष्ठसक्रियकारक विभिन्न तरह से लाभ प्रदान करते हैं इन्हे तापमान, पीएच और लवणता की विस्तृत क्षेत्र में प्रभावी पाया गया है जिस वजह से इन्हे खाद्य उद्योगों, दवा, सौंदर्य प्रसाधनों, पर्यावरण प्रबंधन आदि में लाभपद्र माना जा रहा है। प्रयोगशालाओ में जांच किए जाने पर जैव पृष्ठसक्रियकारकों ने विभिन्न प्रकार के कैंसर के खिलाफ विरोधी गुण दर्शाये हैं।

i;kZoj.k mipkj

विभिन्न औद्योगिक इकाइयों द्वारा कार्बनिक या अकार्बनिक प्रकृति के प्रदूषक पर्यावरण में आते हैं। जब ये प्रदूषक तत्व मिट्टी के साथ मिल जाते हैं तो स्वास्थ्य के लिए गंभीर समस्या उत्त्पन्न करते हैं और इन्हें आसानी से नहीं हटाया जा सकता। जैव पृष्ठसक्रियकारक कार्बनिक और अकार्बनिक दोनों प्रकृति के प्रदूषकों को हटाने मे मददगार साबित होते हैं। कार्बनिक प्रकृति के प्रदूषको को हटाने के लिए ये उनकी जैव उपलब्धता को सूड़ो–सोलुबिलाइजेशन और पायसीकारण की क्षमता को बढ़ा देते हैं और अकार्बनिक यौगिकों जैसे कि भारी धातुओं आदि को चीलेटिंग और धुलाई के माध्यम से बाहर निकाल देते हैं।

e`nk mipkj

मिट्टी में सामान्यतः 6% चरणो में मृदाकण, जल, वायु, बैक्टीरिया, अघुलनशील तरल और ठोस हाइड्रोकार्बन होते हैं। जैविक प्रदूषक, हाइड्रोकार्बन मिट्टी के विभिन्न चरणो में विभाजित हो जाते हैं जैसे कि कोशिका सतहों पर चिपक जाना पानी में घुल जाना, मृदा कणों के साथ चिपक जाना अथवा अघुलनशील अणुओं की तरह पड़े रहते हैं। इस तरह की एक प्रणाली में जैव पृष्ठसक्रिय कारकों को इस्तेमाल करके घुलनशील और अघुलनशील दोनों प्रकार

के घटकों की मात्रा को व्यवस्थापित किया जा सकता है। जैव पृष्ठसक्रियकारक प्रदूषक तत्वों की विलयता को बढ़ा कर उनकी जैव उपलब्धता को बढ़ा देते हैं जिससे कि उनके जैव विघटन की उपलब्धता में तेजी आती है।

m|kxk e mi;kx

पारंपरिक तेल पुनर्प्राप्ति विधियाँ द्वारा जलाशय में उपस्थित कुल तेल में से केवल 40–50% को ही पुनर्प्राप्त कर सकते हैं, कई एन्हांस्ड तेल रिकवरी (EOR) प्रौद्योगिकी विकसित की गई हैं जिससे की ज्यादा मात्रा में तेल को पुनर्प्राप्त किया जा सके। एन्हांस्ड तेल रिकवरी (EOR) तकनीकियों के बीच माइक्रोबियल एन्हांस्ड तेल रिकवरी (MEOR) एक सस्ती एवं अत्यधिक प्रभावी तकनीक है, जिसमे कि सूक्ष्मजीवों के द्वारा सतह सक्रियक यौगिकों का उत्पादन किया जाता है। कच्चे तेल के कम पुनप्राप्ति हो पाने के प्रमुख कारणो में से एक यह भी है कि कच्चे तेल का दलदलापन बहुत ज्यादा होता है, जैव पृष्ठसक्रिय कारक तेल/पानी इंटरफेसियल तनाव को कम कर देते हैं जिससे कि तेल पुनप्राप्ति की प्रक्रिया की दक्षता में वृद्धि होती है।

jkxk.kjk/kh x|.k

रोगजनक उपभेद मौजूदा सूक्ष्मजीवरोधी दवाओ के खिलाफ विरोधी प्रक्रिया दर्शाते हैं जिसके कारण नए रोगाणुरोधी एजेंटों की बढ़ती जा रही मांग ने ही जैवपृष्ठसक्रिय कारको की और ध्यान आकर्षित किया है। जैवपृष्ठसक्रिय कारकों में रोगाणुरोधी गुण सूचित किए गए हैं इसलिए इन्हें सिंथेटिक दवाओं के उपयुक्त विकल्प के तौर पर भी इस्तेमाल किया जा सकता है। इस प्रकार, वे प्रभावी रूप से एक सुरक्षित चिकित्सकीय घटक के रूप में इस्तेमाल किया जा सकते हैं।

प्लास्टिक के बारे में जानें

प्लास्टिक से बनी वस्तुओं को प्रयोग करने से पहले उनपर बने चिन्ह को पहचानें

PET

पालीइथाइलीन टेरथेलेट
Polyethylene Terephthalate:
शीतल पेय और पानी की बोतलें, ढक्कन, कंटेनर, मसाले के पारदर्शी डिब्बे इत्यादि बनाने में प्रयोग किया जाता है।
पुनः चक्रित (रिसाईकिल्ड)
तकिये और स्लीपिगं बैग फिलिंग, क्लोदिंग फाईबर, कार्पेट फाईबर, बिल्डिंग इनसुलेशन इत्यादि बनाने में प्रयोग किया जाता है।

PE-HD

उच्च घनत्व पॉलीइथाइलीन
Polyethylene-High Density:
शॉपिंग बैग, दूध, शैम्पू, रसायन, डिटर्जेंट तथा जूस की बोतलें, एक्रेलिक शीट, आइसक्रीम के डिब्बे, इत्यादि बनाने में प्रयोग किया जाता है।
पुनः चक्रित (रिसाईकिल्ड)
बडे कंटेनर, कृषि पाइप, कूड़े के डिब्बे, क्रेट्स, बगीचे की बाड़, तेल के डिब्बे इत्यादि बनाने में प्रयोग किया जाता है।

UPVC

अनप्लास्टिसाइज़्ड पॉलीविनाइल क्लोराइड:
Unplasticised Polyvinyl Chloride:
बिजली, पानी के पाइप और फिटिंग, नकली चमड़ा, विनायल साईन बैनर, इत्यादि बनाने में प्रयोग किया जाता है।
पुनः चक्रित (रिसाईकिल्ड)
फ़्लोरिंग शीट, जूते के सोल, बिजली की डक्टिंग इत्यादि बनाने में प्रयोग किया जाता है।।

PE-LD

कम घनत्व पॉलीइथाइलीन
Low Density-Polyethylene:
चिपकने वाला टेप, पारदर्शी मुलाएम शीट, सिंचाई की मुलाएम ट्यूब, लेमिनेशन फिल्म, कचरा बैग इत्यादि बनाने में प्रयोग किया जाता है।
पुनः चक्रित (रिसाईकिल्ड)
चप्पलें, रंगीन प्लासटिक शीट, फलैक्स बनाने में प्रयोग किया जाता है।

PP

पॉलीप्रोपाइलीन
Polypropylene:
कालीन व कपड़ों के फाइबर, मोटर वाहन के कवर, खिलौने, सामान की थैली, पैकेजिंग रोल इत्यादि बनाने में प्रयोग किया जाता है।
पुनः चक्रित (रिसाईकिल्ड)
क्रेट्स बक्से, गमले, डिब्बे, पैकिंग शीट, टेप्स, पैनल दरवाज़े इत्यादि बनाने में प्रयोग किया जाता है।

PS

पॉलीस्टाइरीन
Polystyrene:
रेफ्रिजरेटर डिब्बे कोट/कपड़े के हैंगर, चिकित्सा डिस्पोजेबल्स, थरमोकोल, मांस और पोल्ट्री ट्रे, डेयरी कंटेनर, वेंडिंग कप इत्यादि बनाने में प्रयोग किया जाता है।
पुनः चक्रित (रिसाईकिल्ड)
औद्योगिक पैकेजिंग, ऑफिस मोल्डेड चेयर, केसिट, प्रिंटर कार्टरिज इत्यादि बनाने में प्रयोग किया जाता है।

O

अन्य
Other:
रेजिन, गलू, ऑटोमोटिव, विमान और नौकायन, फोम शीट, विद्युत और चिकित्सा सामग्री इत्यादि बनाने में प्रयोग किया जाता है।
पुनः चक्रित (रिसाईकिल्ड)
फर्नीचर फिटिंग, प्लास्टिक रोल इत्यादि बनाने में प्रयोग किया जाता है।

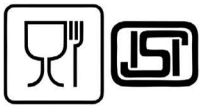

फूड ग्रेड प्लास्टिक
Food Grade Plastic
आई एस आई मार्क के डिब्बों अथवा बर्तनों में खाने का सामान रखने के लिए प्रयोग किया जाता है

fgeky; dk ikfjfLFkfrdh ra= ij tyok;q ifjorZu dk nq"çHkko

eukst dqekj

उच्च तुंगता जीवविज्ञान प्रभाग, सीएसआईआर – हिमालय जैवसंपदा एवं प्रौद्योगिकी संस्थान
पालमपुर – 176061, हिमांचल प्रदेश, भारत

वैश्विक जलवायु परिवर्तन हमारे ग्रह और मानवता के लिए बहुत बड़ा खतरा है और इस समय पूरे विश्व के लिए एक महत्वपूर्ण चिंतनीय मुद्दा बना हुआ है। इसके प्रभाव से विश्व के सभी पारिस्थितिकी तंत्र या पारितंत्र प्रभावित हो रहे हैं। हिमालय पारितंत्र जो एक पर्वतीय पारिस्थितिक तंत्र का उदाहरण है, भारत और विश्व के कुछ विशिष्ट पारितंत्रों में से एक है। हिमालय की भौगोलिक विशेषताएँ, ऊंचाई, विभिन्न पारितंत्र, विविध स्थलाकृतियाँ एवं जलवायु परिस्थितियाँ हिमालय क्षेत्र को जैव–विविधता से संपन्न एवं परिपूर्ण करने में अहम भूमिका निभाती हैं। हिमालय विश्व के छः देश भारत, नेपाल, भूटान, चीन, म्यांमार और पाकिस्तान में फैला हुआ हैं, जिसका कुल क्षेत्रफल 43 लाख वर्ग कि.मी. है। दुनिया की प्रमुख नदियों में से कुछ, जैसे कि सिंधु, गंगा और त्सांगपो–ब्रह्मपुत्र, हिमालय से ही निकलती हैं, जो कि एक बड़े जनमानस को प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती हैं। अगर भारतीय हिमालय क्षेत्र की बात की जाए तो यह भारत के 12 राज्यों में लगभग 2400 किलोमीटर की लंबाई में फैला हुआ है, जो कि सामाजिक, आर्थिक एवं जैव विविधता की दृष्टि से काफी महत्वपूर्ण है। यह क्षेत्र विभिन्न प्रकार के महत्वपूर्ण वनस्पति एवं जीव–जन्तुओं से परिपूर्ण है। इसमें 21 प्रकार के वन और 3471 स्थानिक (Endemic) प्रजातियाँ विद्यमान है, जो कि कहीं और नहीं पाई जाती। इसके अलावा, विभिन्न तरह के पादप प्रजातियों की संख्या इस प्रकार हैः पौधों की 18,440, वृक्षो की 816 औषधीय पौधों की 1748, जंगली भक्षणीय पौधों की 675, चारा की 279, पवित्र पौधे की 155 तथा आवश्यक तैलीय पौधों की 118 प्रजातियाँ शामिल हैं। परंतु, वर्तमान समय में तेजी से हो रहे जलवायु परिवर्तन के कारण हिमालय के विभिन्न पारितंत्र एवं प्रजातियों के अस्तित्व पर खतरा मंडराने लगा है, इसमे से कुछ पारितंत्र एवं प्रजातियाँ भेद्य (Vulnerable) तथा कुछ विलुप्त प्रायः हो चुकी हैं।

वर्तमान समय में जलवायु परिवर्तन पूरे विश्व के लिए चुनौतीपूर्ण एवं चिंता का विषय बना हुआ है, इसके दुष्प्रभाव से निपटने लिए विश्व के सभी देश अपने स्तर पर प्रयासरत हैं। जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभावों को समझने से पहले ये जानना महत्वपूर्ण है कि जलवायु परिवर्तन होता क्या है और इसके कारण क्या हैं। सामान्यतः, दीर्घकालिक औसत मौसमी दशाओं के स्वरूप में आने वाले बदलाव को जलवायु परिवर्तन कहा जाता है। जलवायु की दशाओं में यह बदलाव प्राकृतिक और मानवीय क्रियाकलापों के परिणाम स्वरूप उत्पन्न होता है। प्राकृतिक कारणों में मुख्यतः ज्वालामुखी विस्फोट, सौर विकरण एवं कक्षीय परिवर्तन शामिल हैं। यद्यपि, प्राकृतिक कारणों से उत्पन्न वाले समस्याओं पर हमारा कोई वश नहीं है और प्रकृति स्वयं ही इसका निवारण करती है या कर सकती है। सबसे महत्वपूर्ण दूसरा कारण है, जो मानव के क्रियाकलापों से संबन्धित है, यही जलवायु परिवर्तन का मुख्य कारक भी है। अठारहवीं शताब्दी में आए औद्योगिक क्रांति के बाद उद्योगों से कार्बन डाई आक्साइड (CO_2) एवं अन्य हरित गैसों (जैसे कि मिथेन, नाइट्रास आक्साइड, जलवाष्प आदि) के उत्सर्जन में वृद्धि के कारण हरित गृह प्रभाव या ग्रीनहाउस प्रभाव बढ़ता जा रहा है, जिससे पृथ्वी का वायुमण्डलीय तापमान मे उत्तरोत्तर बढ़ोत्तरी हो रही है, जिसे ग्लोबल वार्मिंग कहते हैं। जलवायु परिवर्तन का सर्वाधिक दुष्प्रभाव हिमालय पर पड़ रहा है क्योंकि पर्वतीय पारितंत्र किसी अन्य पारितंत्र के अपेक्षा काफी संवेदनशील एवं भंगुर (Fragile) होता है। हिमालय क्षेत्र के पारिस्थितिकी तंत्र और यहां की वनस्पतियों पर होने वाले दुष्प्रभाव का पता लगाने के लिए देश एवं विदेश के शोधकर्ता सतत प्रयासरत हैं। जलवायु परिवर्तन के गंभीर खतरों को देखते हुए हिमालय क्षेत्र के अंतर्गत आने वाले देश के अलावा दूसरे देश भी संयुक्त कार्ययोजना तैयार करने में जुटे हैं। हिमालय पारिस्थितिकी एवं वहाँ वास करने वाले वन्यजीवन के बीच अन्योन्याश्रय संबंध है, जिसपर मानवीय क्रियाकलापों का सीधा दुष्प्रभाव वहाँ के पारितंत्र एवं जैविक प्रणाली पर पड़ रहा है। एक रिपोर्ट के मुताबिक हिमालयी पारितंत्र एशिया के 1.3 अरब लोगों की आजीविका पर प्रभाव डालता है।

पिछले 100 वर्षों के जलवायु आंकड़ों के प्रमाण से पता चला है कि वैश्विक या ग्लोबल औसत सतह का तापमान लगभग 0.6 डिग्री सेल्सियस बढ़ गया है। इसके अलावा, 21 वीं सदी के अंत तक पृथ्वी का तापमान 1.5

डिग्री सेल्सियस अधिक होने की संभावना है, जो पिछले 1,000 वर्षों के दौरान किसी अन्य समय से अधिक है। वातावरण में CO_2 की सांद्रता 1832 में 284 पीपीएम थी जो 2016 में बढ़कर 407 पीपीएम हो गई है। ग्रीनहाउस गैसों में, मुख्यत: CO_2 के स्तर में बढ़ोतरी, वायुमंडलीय तापमान वृद्धि का प्रमुख कारण है जो कि वर्षा के पैटर्न के साथ–साथ मौसम के अन्य घटक में बदलाव के लिए जिम्मेदार है। पारिस्थितिकी तंत्र पैटर्न और प्रक्रियाएं, जैसे कि प्राथमिक उत्पादकता की दर या रासायनिक तत्वों के इनपुट–आउटपुट का संतुलन, कई नियंत्रक कारकों के कारण जलवायु परिवर्तन के कारण उत्पन्न जटिल प्रश्नों का सही जवाब देने में सक्षम हैं। जैसे कि कोई जंगल एक कार्बन का स्रोत है या सिंक, यह उस पारिस्थितिकी तंत्र के प्राथमिक उत्पादन एवं श्वसन दर पर निर्भर करता हैं, अगर प्राथमिक उत्पादन ज्यादा होगा तो वह पारितंत्र कार्बन सिंक होगा अन्यथा कार्बन स्रोत। हालांकि जलवायु परिवर्तन हिमालय के पारिस्थितिकी प्रणालियों को कई तरीकों से प्रभावित कर रहा है, पिछले कुछ वर्षो के प्रकाशित अध्ययन आधार पर निम्नलिखित प्रभाव देखे जा रहे हैं :

1- ou ikfjfLFkfrd r=a ,oa fofHkUu çtkfr;ksa ij çHkko

आईपीसीसी (2001) की तीसरी आंकलन रिपोर्ट के अनुसार, भविष्य में होने वाले जलवायु परिवर्तन से वन पारिस्थितिकी तंत्र पर गंभीर रूप से असर होगा। एक पूर्वानुमान के अनुसार, आगामी कुछ वर्षों के पृथ्वी के औसत तापमान में वृद्धि से अधिकांश पारिस्थितिकी तंत्र के प्रजातियों की संरचना, उत्पादकता एवं जैव विविधता आने वाले बदलाव के कारण विभिन्न पारितंत्र काफी प्रभावित होंगें। यह भी देखा जा रहा है कि ग्लोबल वार्मिंग कि वजह से पौधों की कई प्रजातियाँ और समुदाय हिमालय के ऊपरी इलाकों की तरफ अग्रसर हो रही हैं और जो प्रजातियाँ ऐसा नहीं कर पा रहीं हैं वो विलुप्त हो गयी या होने के कगार पर हैं। इसके अलावा कई अन्य प्रभाव भी विभिन्न प्रजातियों के संरचनात्मक एवं कार्यात्मक कार्य–पद्धति में बदलाव देखे जा रहे हैं, कुछ महत्वपूर्ण परिवर्तन निम्नलिखित हैं :

¼d½ fofHkUu çtkfr;ksa d fQu,y,th e cnyko

ग्लोबल वार्मिंग के प्रभाव से कई प्रजातियों के फिनॉलॉजी में बदलाव देखे जा रहे हैं, उदाहरण के तौर पर कुछ प्रजातियों में नियत समय से पहले फूल एवं फल आ रहे हैं। पिछले दशकों में फिनॉलॉजी–मौसमी गतिविधियों के अध्ययन से पर्याप्त प्रमाण मिले हैं कि कई पौधों और पशु प्रजातियों के फूलों या प्रजनन का समय बढ़ गया है और ये बदलाव जलवायु परिवर्तन से संबंधित हैं। फिनॉलॉजी में आए परिवर्तन एक सकारात्मक संकेत हो सकते हैं क्योंकि ये प्रजातियाँ जलवायु परिवर्तन की परिस्थितियों के साथ अपने आप को बदलने में सक्षम है, परंतु नकारात्मक संकेत ये हैं कि ये जलवायु परिवर्तन के प्रति काफी संवेदनशील हैं। हालांकि, सभी प्रकार की प्रजातियाँ फिनॉलॉजी में बदलाव नहीं दिखाती इसका ये मतलब नहीं है इन पर जलवायु परिवर्तन का कोई प्रभाव नहीं पर रहा है, ये भी संभव है कि इनकी जनसंख्या ज्यादा खतरे में हो। फिनोलॉजी में आये परिवर्तनों को पारिस्थितिकी संदर्भ में बिना किसी प्रजाति के जीवन पर ध्यान दिए बिना व्याख्या नहीं की जा सकती है और विशेष रूप से जलवायु परिवर्तन से पारिस्थितिकी तंत्र के अन्य घटक भी प्रभावित होते हैं। अगर किसी प्रजाति की फिनॉलॉजी अपनी पारिस्थितिकीय स्थितियों को बनाने वाली प्रजातियों से अलग दर पर बदल रही है, तो इससे इसके मौसमी गतिविधियों का समय बेमेल हो जाएगा और फिनोलॉजी में यह बेमेल खाद्य श्रृंखला/खाद्य वेब में ट्रापिकल डिकॉप्लिंग (Trophical decoupling) उत्पन्न करता है जिसका परिणाम गंभीर हो सकता है, जिसमें जैव विविधता के नुकसान का भारी खतरा हैं।

¼[k½ vkØe.kdkjh çtkfr;ksa dk [krjk

प्राकृतिक जंगलों में पौधों की कुछ आक्रमणकारी प्रजातियाँ (Invasive species) जैसे कि लैंटाना, यूपेटोरियम और पार्थेनियम अतिक्रमण काफी तेजी से बढ़ा है, जिसका संबंध भी जलवायु परिवर्तन से जुड़ा हुआ है। जिसका प्रतिकूल प्रतिस्पर्धात्मक प्रभाव वहाँ मूल प्रजातियों पर रहा है। शोधकर्ताओं ने पाया कि कई गैर देशी प्रजातियाँ बदलते मौसम के साथ अपना समायोजन करने में ज्यादा सफल हैं। इसके विपरीत, स्वदेशी प्रजातियों की नई परिस्थितियों पर समायोजन करने की गति काफी धीमी है। इसके अलावा, इनवेसिव प्रजातियों में व्यापक जलवायु सहनशीलता और बड़ी भौगोलिक सीमाएं हैं, इनके इन्हीं गुणों के कारण इन पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव कम पड़ता है। इसके विपरीत मूल या स्थानिक प्रजातियों का दायरा काफी सीमित होता है, जिसके कारण कई मूल

प्रजातियाँ विलुप्त हो रही है और कई विलुप्त होने के कगार पर हैं।

¼x½ ç tkfr Hk| rk ¼species vulnerability½ dk [krjk

हिमालय कई महत्वपूर्ण औषधीय एवं दुर्लभ वनस्पतियों का स्थानिक निवास है एवं ग्लोबल जैवविविधता का हॉटस्पॉट है। वर्तमान समय में, जलवायु परिवर्तन तथा अति उपभोग के कारण कई प्रजातीय दुर्लभ तथा विलुप्त प्राय हो चुकी है। हिमालय क्षेत्र में पाई जाने वाली कई प्रजातियाँ अपने सीमित तथा स्थानिक वितरण के कारण जलवायु परिवर्तन से पारिस्थितिकी तंत्र होने वाले प्रतिकूल परिवर्तन के प्रति काफी संवेदन शील है, इस वजह से इनके उत्तरजीविता पर संकट आ गया है। जलवायु में बदलाव और अनिश्चित मौसम की स्थिति परागण की प्रक्रिया को भी काफी प्रभावित किया है। पारिस्थितिकी तंत्र में आए परिवर्तन की वजहों से कई पराग कीट (Pollinators) जैसे कि मधुमक्खियों, बिमल–मधुमक्खियों, मक्खियों, तितिलियों, बीटलों, पक्षियों और कई स्तनधारियों ने अपने मूल निवास से प्रवासन कर लिया है। वैज्ञानिकों द्वारा इस बात की पुष्टि की जा चुकी है कि हिमालय क्षेत्र के विभिन्न प्रजातियों के विलुप्त होने का एक मुख्य कारण पराग कीटो का पलायन भी है।

2- –f"k&ikfjfLFkfrdh r= ij çHkko

वर्तमान समय में जलवायु परिवर्तन के कारण मौसम चक्र में होने वाले परिवर्तन, हिमालय क्षेत्र के सभी पारिस्थितिकी तंत्रों को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से काफी प्रभावित कर रहे हैं। मानसून की अनियमितता की वजह कहीं बिल्कुल न नाममात्र बारिश तो कहीं अत्यधिक बारिश, जिसके चलते फसलों के उत्पादन पर नकारात्मक प्रभाव पर रहा है। एक रिपोर्ट के मुताबिक, हिमाचल प्रदेश के कुल्लू घाटी में 1880 के तुलना में 1990 मे कुल बारिश में लगभग 7 सेंटीमीटर की कमी तथा न्यूनतम और अधिकतम तापमान में 0.25 – 1 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि दर्ज की गई थी। विभिन्न अध्ययनों से पता चला है की कुल्लू घाटी में सेब के उत्पादन दर में 1981–2000 कि अवधि के दौरान काफी गिरावट आई है। शोधकर्ताओं का मानना है कि तापमान में बढ़ोत्तरी के कारण कम ऊंचाई पर सेब की पैदावार में कमी आई है जिसके वजह से सेब उत्पादक इसकी खेती उचाई वाले क्षेत्रों में करने लगे हैं। सेब के अच्छे उत्पादन के लिए चिल्लिंग आवर (chilling hours) की महत्वपूर्ण भूमिका होती है, 5 डिग्री सेल्सियस से कम तापमान 10 हफ्तों तक की चिल्लिंग अवधि, इसके पैदावार के लिए काफी अनुकूल होता है।

3- ty lalk/kuksa ij çHkko

हिमालय क्षेत्र के पहाड़ काफी गतिशील (Dynamic) और जटिल (Complicated) हैं जो ग्लोबल वार्मिंग के प्रति अत्यंत ही संवेदनशील है। हिमालय पर्वत के ग्लेशियर या हिमनद भारत में गंगा के मैदानी क्षेत्रों में बहने वाली कई नदियों के जल का महत्वपूर्ण स्रोत हैं और साल भर इनसे जल की आपूर्ति होती है। आईपीसीसी के अनुसार 19वीं शताब्दी के बाद दुनिया के कई हिस्सों के ग्लेशियरों की मोटाई या आयतन में स्पष्ट और व्यापक रूप से कमी आई है। विशेष रूप से पर्वतीय ग्लेशियरों में आई कमी को जलवायु परिवर्तन के प्रमाण के रूप में देखा जा रहा है और शोध में इसके ठोस साक्ष्य भी मिले हैं। भारतीय हिमालय के चयनित ग्लेशियरों के अध्ययन से पता चलता है कि अधिकांश ग्लेशियर अप्रत्याशित रूप से अपने मूल स्थान से खिसक रहे हैं। एक अध्ययन के अनुसार, हिमालय के प्रमुख और महत्वपूर्ण ग्लेशियरों में से एक गंगोत्री ग्लेशियर, जो 1930 के दशक में 25 किलोमीटर मापा गया था, वह 1999 में सिकुड़ कर लगभग 20 किलोमीटर रह गया था। जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप, हिमालय ग्लेशियर प्रति वर्ष 10 से 60 मीटर की दर से खिसक रहे हैं और कई छोटे ग्लेशियर (<0.2 वर्ग किमी) पहले ही गायब हो गए हैं। पिछले पचास वर्षों में ग्लेशियरों की ऊर्ध्वाधर बदलाव 100 मीटर तक दर्ज किया गया है। ग्लेशियरों के खिसकने या पिघलने के परिणामस्वरूप, झीलों की संख्या और आकार में बढ़ोतरी हो रही है। इस तरह के झीलों का तेजी से विकास बाढ़ के खतरे को बढ़ा रहा है, जो पिछले कई वर्षो में काफी विनाशकारी साबित हुआ है।

वैश्विक औसत तापमान अगले सौ वर्षों में 1.4 से 5.8 डिग्री सेल्सियस के बीच बढ़ने की संभावना है। वैश्विक जलवायु में इस बदलाव के परिणाम हिमालय में पहले से ही देखे जा रहे हैं जहां ग्लेशियर और हिमनदीय (Glacial) झील खतरनाक दर से बदल रहे हैं। गंगोत्री ग्लेशियर प्रति वर्ष 18 मीटर की औसत दर से पीछे हट रहा है। शुक्ला और सिद्दीकी (1999) ने कुमाऊं हिमालय में मिलाम ग्लेशियर के लगातार अनुसंधान के बाद अनुमान लगाया कि 1901 और 1997 के बीच प्रति वर्ष 9.1 मीटर की

औसत दर से बर्फ खिसक रही है। डोभल एवं सहकर्मियों (1999) ने अध्ययन के दौरान पाया कि गढ़वाल हिमालय में दोक्रियानी बामक ग्लेशियर की चोटी 1962 से 1997 की अवधि के दौरान 586 मीटर पीछे खिसक गई है, और ग्लेशियर का औसत प्रतिस्थापन 16.5 मीटर प्रति वर्ष था। इसके अतिरिक्त, मैनती (2000) ने पाया कि दोक्रियानी बामक ग्लेशियर ने 1998 में 20 मीटर पीछे खिसक गया, जो पिछले 35 वर्षो का औसत 16.5 मीटर था। तापमान वृद्धि से ग्लेशियर पिघलने की दर में 10 और 30% की वृद्धि क्रमशः पश्चिमी और पूर्वी हिमालय में हुआ है, जिसके परिणामस्वरूप नदियों में अतिरिक्त जल का बहाव 3–4 % तक बढ़ गया है। नदियों में अतिरिक्त जल बढ़ जाने की वजह से मैदानी क्षेत्रों में बाढ़ की समस्या का अनुपात दिन–प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है और हर साल काफी जान–माल का नुकसान हो रहा है। इसके विपरीत, जलवायु परिवर्तन से हाल के दशकों में अनियमित वर्षा का आंकड़ा भी काफी बढ़ गया जिसके वजह से पहाड़ी झरने या स्प्रिंग्स से उत्पन्न होने वाले जल की मात्रा में काफी गिरावट आई है। इसी प्रकार, शीतकालीन बारिश भी अप्रत्याशित और मात्रा में कम हो गई है। एक सर्वेक्षण से पता चला है कि मध्य हिमालय के गौला नदी का जलग्रहण क्षेत्र के 45% झरने या तो शुष्क हो गए हैं अथवा मौसमी बन गए हैं। नतीजतन, बाढ़ और सूखा दोनों लोगों की आजीविका और बुनियादी ढांचे को प्रभावित कर रहे हैं।

जलवायु परिवर्तन का तापमान और वर्षा के पैटर्न पर पड़ने वाले प्रतिकूल प्रभाव को कई शोधकर्ताओं ने विभिन्न प्रतिष्ठित जर्नलों में कई शोधपत्र प्रकाशित किये है। उदाहरण के तौर पर, भूटियानी एवं सहकर्मियों (2010) ने उत्तरी–पश्चिमी भारतीय हिमालय के तीन मौसम स्टेशनों के डाटा (अवधि 1866–2006) के सांख्यिकीय विश्लेषण के आधार पर पाया कि औसत मानसून वर्षा में गिरावट आई है। इसके अलावा, अन्य प्रकाशित शोधपत्रों में पश्चिमी भारतीय हिमालय शीतकालीन वर्षा के रुझानों में असमानता का जिक्र मिलता है। जैसे कि, दीम्री और डैश (2012) ने 1975–2006 की अवधि के दौरान इस क्षेत्र में दिसम्बर और फरवरी के बीच सर्दियों में काफी हद तक गिरावट का उल्लेख किया है। इसी क्रम में, गुहाठकूर्ता और राजीव (2008) के अनुसार, 1901–2003 की अवधि के दौरान पश्चिमी भारतीय हिमालय में पूर्व–मॉनसून (मार्च–मई) में वृद्धि देखी गई है। पश्चिमी भारतीय हिमालय 1975–2006 की अवधि के दौरान गर्म दिनों मे बढ़ोतरी एवं ठंडे दिनों में कमी दर्ज की गई है। भारतीय मौसम विज्ञान द्वारा 2004–2012 के मौसमी डाटा के अवलोकन से पता चलता है कि 2005 के सर्दियों के अलावा, अन्य सभी वर्षों और मौसमों में औसत वर्षा और मौसमी वर्षा अन्य वर्ष की तुलना में बहुत कम था।

4- vkthfodk vkj LokLF; ij çHkko

जलवायु परिवर्तन से हिमालय क्षेत्र में रहने वाले लोगों की सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्था अस्तव्यस्त हो गई है। इससे वहाँ रहने वाले लोगों की अर्थव्यवस्था जैसे कृषि, पशुधन, वाणिकी, पर्यटन, मत्स्य पालन आदि के साथ–साथ मानव स्वास्थ्य और प्राकृतिक संसाधनों पर प्रतिकूल प्रभाव देखा जा रहा है। जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप, जैव–विविधता में हुये नुकसान का खामियाजा गरीब और वंचित लोगों को ज्यादा भुगतना पड़ रहा है, क्योंकि उनका जीवन–बसर मूलतः प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर करता है। जलवायु परिवर्तन का बुरा प्रभाव कृषि क्षेत्र पर पड़ रहा है, जिससे मुख्य फसल (चावल, मक्का और बाजरा) के साथ–साथ नकदी फसलों के उत्पादन में लगातार कमी आ रही है। खेतों में विभिन्न आक्रामक प्रजातियाँ एवं कीड़े बढ़ रहे हैं, जो फसल के पैदावार को प्रभावित कर रहे हैं। जलवायु परिवर्तन से चारा के अंकुरण में आई कमी के परिणामस्वरूप पशुधन और संबंधित गतिविधियों से आय कम हो रही है। दूसरी तरफ, साल, आमला, मक्का आदि सहित विभिन्न प्रजातियों के फूलों का समय बदल जाने से विभिन्न फसलों के अंकुरण, कटाई और परिपक्वता का समय बदल गया है। इसलिए लोगों को अपने पारंपरिक कृषि कार्य छोड़कर, आजीवका के वैकल्पिक साधन ढूंढ़ना पड़ रहा हैं।

जलवायु परिवर्तन के कारण पैदावार में आई कमी से स्थानीय लोगों के भोजन की आपूर्ति की एक बहुत बड़ी समस्या उत्पन्न हो गई है, जिससे लोग बीमारी तथा कुपोषण का शिकार हो रहे हैं। इसके अलावा, हिमालय में जलवायु के परिवर्तन से होने वाले स्वास्थ्य प्रभावों की एक विस्तृत श्रृंखला है। कई वेक्टर–जनित रोग जैसे कि मलेरिया, बार्टोनेलोसिस, टिक–जनित बीमारियों का खतरा बढ़ गया है। कुछ वैज्ञानिकों ने सांख्यिकीय मॉडल का उपयोग करते हुए कई अध्ययनों से निष्कर्ष निकाला है कि जलवायु परिवर्तन के प्रभाव में वेक्टर–जनित रोग अत्यधिक प्रभावित हो रहा है। सतह के तापमान में वृद्धि और वर्षा पैटर्न में परिवर्तन के साथ, वेक्टर मच्छर प्रजातियों

के वितरण में बदलाव हो गया है। अब ऊंचाई वाले क्षेत्रों में भी मच्छरों का प्रकोप बढ़ने लगा है। ऊंचाई वाले क्षेत्रों में तापमान की वृद्धि, मलेरिया प्रोटोजोआ प्रजनन के लिए अनुकूल वातावरण, उनकी आबादी को तेजी से बढ़ा रहा है। इसके अलावा, विशेष रूप से महिलाओं और बच्चों को खुजली समस्या, त्वचा रोग, मासिक धर्म चक्र, गर्भाशय संक्रमण (बीमारी) और नेत्र संक्रमण की समस्या भी रिपोर्ट की जा रही है।

Hkfo"; d fy, vu l/kku ,o j.kuhfr;k

वर्तमान परिपेक्ष्य में हो रहे जलवायु परिवर्तन को ध्यान में रखते हुये हिमालयी पारिस्थितिकी तंत्र से संबन्धित शोध–कर्ताओं और नीति निर्माताओं को इस दिशा में कार्य करने की काफी आवश्यकता है। इस दिशा में शोध की अपार संभावनाएं हैं, अभी भी हिमालय का आधारभूत डाटा उपलब्ध नहीं है, जैसे कि, मौसम संबंधी आंकड़ों के संग्रह के लिए औटोमैटिक वेदर स्टेशन की संख्या बहुत ही सीमित है, जिनका डाटा भविष्य में होने वाली अप्रत्याशित घटनाओं के पूर्वानुमान हेतु काफी महत्वपूर्ण होता है। सूखा और बाढ़ की समस्या के निदान हेतु हाइड्रोलोजिकल मॉडलिंग के क्षेत्र में विस्तृत शोध की आवश्यकता है। बढ़ते तापमान और अप्रत्याशित वर्षा एवं हिमपात से खाद्य सुरक्षा हेतु नए किस्म के बीज विकसित करने की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त, आवास विखंडन और गलियारों के निर्माण के कारण स्थानिक प्रजातियों का पलायन हो रहा है, जो पारिस्थितिकी तंत्र के लिए बड़ा खतरा है, इसके लिए सरकार और नीति निर्माताओं को ठोस नीति बनाने की आवश्यकता है। इसके वावजूद, हिमालय क्षेत्र के लोगों ने काल और समय के अनुसार कृषि के पैटर्न में कई बदलाव किए हैं। जैसे कि चंपावत जिले के कई गांवों में, लोगों ने धान के स्थान पर सोयाबीन की खेती शुरू कर दी है। उसी तरह ऊंचे इलाकों में किचेन गार्डेन के तहत मटर, फूलगोभी और गोभी जैसी सब्जियों की खेती शुरू कर दी है। लोगों की सशक्त इच्छा शक्ति, पर्यावरण के प्रति आम लोगों की संवेदनशीलता, सरकार एवं नीति–निर्माताओं द्वारा निर्मित एवं कार्यान्वित ठोस कानून, जलवायु परिवर्तन से उपजे हुए हिमालय पारिस्थितिकी तंत्र की समस्याओं के निदान के लिए महत्वपूर्ण है तथा इसमें सामूहिक भूमिका की आवश्यकता है।

Xykcy okÉex dk n"ifj.kke g nfu;k d lkeuA
i;koj.k dh j{kk l= gkx lcdk viukuA
Xykcy okÉex l g [krj e tkuA
i;koj.k dh j{kk djuk lcdh 'kkuA
gfj;kyh l g ftldk ukrkA
l[k lef) og gh ikrkAA

cpsa ruko ls

KkusUæ feJ

सीएसआईआर–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, विषविज्ञान भवन, 31, महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ–226001, उत्तर प्रदेश, भारत

तनाव जीवन में हवा एवं पानी की तरह परिव्याप्त है। कहते हैं कि तनाव जीवन में मसालों की तरह है जो इसे चटपटा एवं स्वादिष्ट बना देता है। तनाव मूलतः हमारी सुरक्षा प्रणाली का महत्वपूर्ण हिस्सा है, जो हमें आसन्न खतरों के लिये तैयार करता है। थोड़े समय के लिये तनाव शरीर के लिए लाभदायक है। पर आधुनिक जीवन शैली में तनाव का कारण समाप्त नहीं होता, अपितु लगातार बना रहता है और अक्सर हमारे पास उसे दूर करने का कोई अवसर भी नहीं होता। यही स्थायी तनाव भिन्न–भिन्न प्रकार से हमारे स्वास्थ्य, निर्णय, स्मरण शक्ति, उम्र एवं सुरक्षा प्रणाली को प्रभावित करता है। तनाव का असर गर्भ से पहले ही आरम्भ हो जाता है और कई पीढ़ियों तक जाता है। इसी तरह हमारा तनाव सिर्फ हमें ही नहीं प्रभावित करता, वह हमारे बच्चों को भी प्रभावित करता है। इसलिए यह भयावह है, विषाक्त है और इसे अनदेखा नहीं किया जा सकता। हम तनाव से, इसकी परिव्याप्तता को देखते हुए बच नहीं सकते, पर इसे नियंत्रित कर सकते हैं।

जुलाई, 2018 में आए एक सर्वेक्षण के अनुसार लगभग 10 में से 9 भारतीय तनाव से ग्रसित हैं। यह ऑकड़े दुनिया के कई देशों में पाए जाने वाले तनाव से अधिक हैं। 18 से 34 आयु वर्ग में 95 प्रतिशत भारतीय तनाव से ग्रसित हैं। जब कि विश्व औसत 86 प्रतिशत है। सर्वेक्षण के अनुसार भारत में तनाव कार्य स्थल जनित एवं आर्थिक कारणों से है।

2017 में फोर्टिस हेल्थ केयर एवं अन्य सहयोगियों द्वारा किए गए सर्वेक्षण में 79 प्रतिशत सहभागियों ने माना कि तनाव का कारण उनका स्वभाव, व्यक्तित्व और खराब तनाव प्रबंधन है। 48 प्रतिशत लोग बहुत अधिक तनाव में थे और उन्हें मनोरोग विशेषज्ञों की आवश्यकता थी। 22 प्रतिशत लोग मध्यम श्रेणी के तनाव में थे, जिन्हें उचित तनाव प्रबंधन से लाभ हो सकता था। इस सर्वेक्षण में यह बात उभरकर आई कि भारत में घरेलू परिस्थितियां उतनी महत्वपूर्ण नहीं हैं, जितनी कि व्यक्ति विशेष का स्वभाव एवं व्यक्तित्व।

तनाव कई तरह से शरीर को प्रभावित करता है। जो लोग तनाव में होते हैं, वो आत्म नियंत्रण नहीं रख पाते। अपने स्वास्थ्य के अनुकूल खान–पान पर अक्सर विचार नहीं कर पाते। इससे खान–पान या रहन–सहन जनित बीमारियॉ जैसे हृदय रोग, मोटापा, मधुमेह एवं उच्च रक्तचाप की संभावना बढ़ जाती है। तनाव में चूंकि शरीर को अधिक ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है, तो सांस तेजी से चलती है, जिससे अस्थमा या घबराहट हो सकती है। तनाव वाले हार्मोन से यकृत ग्लूकोज का उत्पादन बढ़ा देता है, जिसमें मधुमेह–2 की संभावना बढ़ जाती है। लगातार तनाव में मांसपेशियां अकड़ जाती हैं। ऐसे में कंधे एवं गर्दन में दर्द होने लगता है। सिर दर्द तो सामान्य बात है। अधिक तनाव में उल्टियां हो सकती हैं और पेट में अल्सर हो जाते हैं। भयानक दर्द होने लगता है। इसके अतिरिक्त तनाव से निर्णय करने की क्षमता एवं हानि–लाभ के ऑकलन की क्षमता भी प्रभावित होती है। तनाव में उचित निर्णय लेना मुश्किल होता है। आत्म नियंत्रण रखना कठिन होता है। ऐसे प्रमाण मिल रहे हैं कि तनाव आपकी उम्र को भी कम करता है। इसमें कैंसर आदि जैसी कई गंभीर बीमारियों का उपचार प्रभावी नहीं हो पाता।

स्थायी तनाव मानसिक बीमारियां बढ़ा देता है। पूरी दुनिया 30 प्रतिशत उत्पादन का नुकसान मानसिक बीमारियों जैसे, अवसाद, चिंता और साइजोफ्रेनिया से होता है। विकसित देशों में ये ऑकड़ा 40 प्रतिशत है।

शरीर मूलतः एक बहुत बड़ी रासायनिक इकाई है, जिसमें अरबों अणु एक दूसरे से मिलकर सहयोगी की तरह कार्य करते हैं। सदियों पुरानी अवधारणा है कि शरीर एवं मन को अलग–अलग करके नहीं देखा जा सकता, जिसकी बहुत सशक्त रूप से पुष्टि हो रही है। मन (मूलतः मस्तिष्क एवं उसकी जटिल कार्य प्रणाली) एवं शरीर का बाकी हिस्सा एक बड़े समूह के हिस्से हैं, जिसे एक संपूर्ण इकाई के रूप में ही समझा जा सकता है। शरीर की क्रिया प्रणाली परिवेशगत संकेतों को समझती है और उसके अनुसार कार्य करती है। आप यूं समझिए कि शरीर को पर्यावरण एवं परिवेश की भाषा समझने के लिए

एक आपरेटिंग सिस्टम का विकास हुआ है। शरीर मूलतः उसी भाषा के माध्यम से परिवेशगत उद्दीपनों को समझता है। विकास के दौरान भिन्न–भिन्न प्रकार की समस्याएं आयी होंगी। हमारी प्रजाति होमो सैपियन्स निरीह प्राणी से सशक्त मानव में परिवर्तित होने की विशाल यात्रा में कई तरह के अनुभवों से गुजरी है। यदि वो अनुभव उसी पीढ़ी के साथ समाप्त हो जाएं तो अगली पीढ़ी को उससे कोई लाभ नहीं होगा। ऐसा माना जा रहा है कि उन अनुभवों को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक ले जाने की एक प्रक्रिया विकसित हुई है। आनुवांशिक क्रिया प्रणाली मूलतः डीएनए के एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक जाने पर आधारित है। पर यह इस दूसरी प्रणाली को इपिजेनेटिक्स कहा जा रहा है। जो डीएनए से अलग हटकर अन्य तरीके से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक सूचनाएं स्थानांतरित करती है।

यह प्रक्रिया भयावह तथ्यों को रेखांकित करती है कि आपके सुख–दुःख, अवसाद चिन्ता एवं रहन–सहन आप तक सीमित नहीं है। यह आपके आने वाली पीढ़ियों को भी प्रभावित करेंगें। यदि आप तनाव में है या अवसाद ग्रसित हैं तो आपके न चाहने के बावजूद भी आपकी संताने इससे प्रभावित होंगी। इसी तरह यदि आप स्वस्थ हैं, तो आपकी भावी पीढ़ियां भी स्वस्थ होंगी। इसका सीधा सा अर्थ है कि आपका स्वास्थ्य, मन एवं रहन–सहन के प्रति अतिरिक्त सावधानी, आपकी संतानों की बीमा की किश्ते हैं।

तनाव की क्रिया प्रणाली का विकास हमारी सुरक्षा के लिए हुआ है। मूलतः यह प्रणाली किसी आसन्न खतरे के लिए शरीर को तैयार करती है। आसान उदाहरण के लिए यदि हमारे सामने शेर आ जाए तो हमारे पास दो ही रास्ते हैं या तो हम शेर से लड़ें या फिर भाग जाएं। शरीर जैसे ही इस खतरे को महसूस करता है, वैसे ही उसकी हारमोन प्रणाली शरीर को खतरे से लड़ने के लिए तैयारी करने लगती है।

जैसे ही मस्तिष्क को किसी खतरे का आभास होता है, इसके कई अंग सक्रिय एवं सतर्क हो जाते हैं और हारमोन्स की काकटेल शरीर को इसके लिये तैयार करना आरम्भ करती है। एड्रीनल ग्रंथि इपिनेफ्रीन (एड्रनलीन) का स्राव करना आरम्भ कर देती है। हृदय तेजी से रक्त को पम्प करने लगता है, फेफड़े भी अधिक ऑक्सीजन शरीर में प्रवाहित करने लगते हैं। कॉर्टिसाल एवं अन्य हार्मोनो से शरीर ग्लूकोज को अधिक तेजी से ऊर्जा में बदलने लगता है। तंत्रिका कोशिकाएं नारइपिनेफ्रीन का स्राव आरम्भ कर देती है। मांसपेशियां सख्त हो जाती हैं और खतरे के प्रति एकाग्रता बढ़ जाती है। चूंकि मांस पेशियों को अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है तो पाचन क्रिया ठप्प कर दी जाती है। इस तरह पूरा शरीर खतरे से लड़ने के लिए तैयार हो जाता है।

सामाजिक तनाव में भी ठीक ऐसा ही होता है। मस्तिष्क खतरे को भांप कर तनाव के हारमोन इपिनेफ्रीन एवं कॉर्टिसाल का स्राव आरंभ कर देता है। तंत्रिका कोशिकाएं रक्त में नारइपिनेफ्रीन को भेजने लगती हैं। थोड़े समय के लिए सामाजिक तनाव भी शरीर के लिये फायदेमन्द है। पर आधुनिक जीवन शैली में सामाजिक तनाव के कारण समाप्त नहीं होते, बने रहते हैं। ऊपर शेर का उदाहरण ले तो शेर कुछ समय बाद भाग जाता है या हम भाग खड़े होते हैं, पर गरीबी असंतुष्टि एवं अन्य परिस्थितिजन्य तनाव के कारण आधुनिक जीवन शैली में समाप्त नहीं होते, लगातार बने रहते हैं। शरीर इस तनाव से उभर नहीं पाता। असली समस्या की जड़ यही है।

इपिनेफ्रीन एवं नारइपिनेफ्रीन दोनों सफेद रक्त कोशिकाओं के बीटा एड्रीनर्जिक रिसेप्टर से जुड़ जाते हैं, जिससे शरीर में उत्तेजना बढ़ जाती है, पर शरीर की सुरक्षा प्रणाली कमजोर हो जाती है। लगातार तनाव की अवस्था में बीटा एड्रीनर्जिन बन्धन एक विशिष्ट प्रकार की सफेद रक्त कोशिकाओं (इम्मेच्योर प्रोइनफ्लेमेटरी मोनोसाईट) का उत्पादन बढ़ा देता है जो शरीर की उत्तेजना बढ़ाती है।

इसी प्रकार मस्तिष्क की पिट्यूटरी एवं हाइपोथैलमस तथा एडरीनल तंत्र से संचालित कार्टिसोल हारमोन संकट काल में तो शरीर को तत्पर रखता है, पर संकट काल समाप्त होते ही सफेद रक्त कोशिकाओं के ग्लूकोकर्टिकोस्वाड रिसेप्टर से जुड़ जाता है और एक तरह के ट्रान्सकृप्सन फैक्टर NF-kß की सक्रियता को समाप्त कर देता है। यह फैक्टर उत्तेजना बढ़ाने वाले जीनों को सक्रिय करता है। पर यदि तनाव लगातार बना रहे तो इस रिसेप्टर की संवेदनशीलता कम हो जाती है एवं उत्तेजनाकारी जीनों की सक्रियता बनी रहती है। आप यूं समझे कि लगातार तनाव से शरीर अपनी पुरानी अवस्था में वापस आ ही नहीं पाता और हमेशा संकटकालीन अवस्था में ही रहता है। इससे धीरे–धीरे शरीर को साधारण अवस्था में लाने वाली प्रक्रिया संवेदनहीन हो जाती है।

साइंस (9 जून, 2000) में रिचर्ड स्टोन पूर्वी एवं पश्चिमी यूरोप के तुलनात्मक स्वास्थ्य समस्यायों की चर्चा करते हैं। यह वह समय था जब कम्युनिस्ट समाज धीरे–धीरे

पूंजीवादी समाज की ओर बदल रहा था। सोवियत यूनियन विघटित होकर छोटे–छोटे राज्यों में विभक्त हो गया था। पूर्वी यूरोप में हृदय रोग से मृत्यु की संख्या अधिक थी। यदि धूम्रपान, शराब इत्यादि तथ्यों को भी ध्यान से रखा जाए तब भी बढ़ी हुई मृत्यु दर की व्याख्या नहीं की जा सकती थी। कारण मूलतः तनाव एवं अवसाद था। आर्थिक बदलाव ने लोगों की आशाएं प्रज्वलित कर दी थीं, पर धीरे–धीरे मोह भंग होने लगा था। पूँजीवादी व्यवस्था सभी समस्याओं का त्वरित समाधान नहीं थी। इस मोहभंग से तनाव एवं अवसाद बढ़ने लगा था। इस अध्ययन से मानसिक तनाव की भूमिका रेखांकित होने लगी। वे व्हाइट हाल–II अध्ययन की भी चर्चा करते हैं, जिसमें निचले स्तर के सिविल सेवा के अधिकारियों में हृदय रोग की दर अधिक थी, क्योंकि उन्हें अपने कार्य से उतनी संतुष्टि नहीं मिलती थी, जितनी कि उच्च स्तरीय अधिकारियों को मिलती थी। दोनों के खान–पान एवं रहन–सहन का स्तर लगभग समान था। पहली बार यह दिखने लगा था कि कम से कम खान–पान बढ़े हुए हृदय रोग की दर का कारण नहीं था। इस तरह अस्सी एवं नब्बे के दशकों में यह बात उभरकर सामने आने लगी कि स्वास्थ्य के लिए मानसिक संतुष्टि, आर्थिक संपन्नता एवं तनाव व अवसाद भी महत्वपूर्ण हैं।

तनाव एवं बीमारियों का गहरा नाता है। ऐसा माना जा रहा है कि सुरक्षा नियंत्रण प्रणाली–इम्यून सिस्टम एवं शरीर को उत्तेजित करने वाले जीन एक ही बटन से नियंत्रित होते हैं। एक तरफ उत्तेजित करने वाली प्रणाली आरम्भ होती है तो दूसरी तरफ शरीर की रक्षा प्रणाली कमजोर होने लगती है। सामाजिक तनाव जैसे गंभीर अकेलापन, सामाजिक दुराव, किसी प्रिय के आकस्मिक निधन का दुःख इत्यादि में शरीर के उत्तेजना वाले जीन कार्य करना आरंभ करते हैं, वहीं सुरक्षा प्रणाली कमजोर हो जाती है। वैज्ञानिकों का मानना है कि विकास के दौरान ऐसी शरीर को उत्तेजित करने वाली प्रणाली शारीरिक घाव भरने में सहायता करती होगी। पर आज के युग में जब घाव के इंफेक्शन की संभावना कम है या सामाजिक तनाव में व्यवधान होता ही नहीं तो शरीर का उत्तेजित अवस्था में रहना बेमानी है। यह प्रणाली बजाय शरीर को ठीक करने के उसकी परेशानियां और बढ़ा देती है।

विकास के दौरान अर्जित अनुभवों को दूसरी पीढ़ी तक ले जाने की प्रक्रिया निश्चित रूप से जीवित रहने की संभावनाओं को बढ़ा देती है। ऐसा पाया गया कि जो लोग बचपन में सामाजिक तनाव से गुजरते हैं, उनके व्यवहार एवं मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव स्वस्थ लोगों की तुलना में अधिक पड़ता है। अक्सर उनके निर्णय लेने की क्षमता एवं मानसिक स्वास्थ्य प्रभावित होता है, पर क्या यह असर कई पीढ़ियों तक जाता है, इसको लेकर कुछ विवाद रहा है। हालांकि कुछ वैज्ञानिक इसका समर्थन नहीं करते, पर चूहों, बंदरों एवं मानव के कुछ अध्ययनों जीन में एपिजेनेटिक परिवर्तन के प्रमाण मिल रहे हैं। तनावग्रस्त बंदरों के डीएनए में स्वस्थ बंदरों की तुलना में अलग तरह का मेथाइलेशन पाया गया है। मेथाइलेशन की प्रक्रिया में डीएनए के अणुओं में मेथाइल ग्रुप लग जाता है, जिससे उसकी क्रियाविधि बदल जाती है। अक्सर ये जीन स्विच ऑफ हो जाते हैं।

आजकल कई सारे ऐसे अध्ययन किए जा रहे हैं, जिसमें पीढ़ियों का लेखा–जोखा रखा जाता है। ये आंकड़े स्वास्थ्य संबंधित कारणों के अनुसंधान के लिए बड़े उपयोगी साबित हो रहे हैं। ऐसा देखा जा रहा है कि जो लोग बचपन में सामाजिक तनाव से गुजरे हैं, उनकी संतानों में भी मानसिक बीमारी या व्यवहारिक समस्याओं की संभावना बढ़ जाती है। यह एक भयावह तथ्य की ओर संकेत कर रहा है कि तनाव के कारण जो एपीजेनेटिक परिवर्तन होते हैं, वो अगली पीढ़ियों तक जाते हैं। अर्थात ये परिवर्तन आनुवांशिक होते हैं।

मस्तिष्क में कार्टिसाल के लिए दो तरह के रिसेप्टर होते हैं। जिसमें से पहले तरह के रिसेप्टर 6 से 10 गुना अधिक संवेदनशील होते हैं। इसलिए ये बहुत कम कार्टिसाल की मात्रा से भी सक्रिय हो जाते हैं। मस्तिष्क की स्मरण शक्ति से संबंधित हिप्पो कैंपस तथा भावनाओं से संबंधित एमाइग्डाला दोनों में अधिक संवेदनशील रिसेप्टर होते हैं वही नियंत्रण एवं योजना से संबंधित फ्रान्टललोब में कम सक्रिय रिसेप्टर होते हैं। फ्रॉन्टललोब बहुत अधिक कार्टिसाल की मात्रा पर ही सक्रिय होता है। थोड़ा सा तनाव बढ़ने पर स्मरण शक्ति तीव्र हो जाती है, पर एक सीमा के बाद तनाव बढ़ने पर यह कमजोर हो जाती हैं। इसी तरह कम अवधि के तनाव से तंत्रिका स्तंभ कोशिकाएं फैलती हैं और नई तंत्रिका कोशिकाएं बनने लगती हैं। इस प्रकार मस्तिष्क अपने आपको अगले तनाव के लिए तैयार करता है। जबकि लगातार तनाव में रहने से नई कोशिकाएं बननी कम हो जाती हैं। पुरानी कोशिकाएं सिकुड़ने लगती हैं। यदि यह स्थिति महीनों एवं वर्षों तक चलती है तो मस्तिष्क की संरचना में बदलाव आने लगते

हैं। हिप्पोकैम्पस सिकुड़ने लगता है और एमाईग्डाला बढ़ने लगता है। कार्टिसाल का स्राव अनियंत्रित हो जाता है। यह स्थिति चिंता या अवसाद की होती है।

स्थायी या जीर्ण तनाव हृदय आघात की संभावनाएं बढ़ा देता है। इससे धमनियों में जमाव होने लगता है। इस जमाव में वसा एवं कोलेस्ट्राल के अतिरिक्त मोनोसाइट एवं न्यूट्रोफिल कोशिकाएं भी पायी गई हैं। तनाव के समय निकलने वाले हार्मोन नारएड्रीनलीन बोनमैरो की स्तंभ कोशिकाओं की सतह पर पाये जाने वाले एक प्रकार के प्रोटीन बीटा–3 (β–3) से जुड़ जाता है। इससे सफेद रक्त कोशिकाएं अधिक बनने लगती है। वैज्ञानिक मानते हैं कि तनाव के कारण अधिक सफेद रक्त कोशिकाएं शरीर को संभावित चोट के घाव को जल्दी भरने की प्रणाली का हिस्सा है, पर स्थायी तनाव में तो ऐसा कोई घाव होता ही नहीं, फिर भी ये कोशिकाएं बनती रहती हैं, जिससे धमनियों में जमाव शुरू हो जाता है।

ऐसे ही कई सारे अध्ययनों में यह बात सामने आयी है कि तनाव से कैंसर के बढ़ने की संभावना बढ़ जाती है और कैंसर के मरीजों का बच पाना मुश्किल हो जाता है। कुछ प्रयोगों में स्थायी तनाव में लिम्फ की संरचना में अंतर देखा गया। ऐसा लगता है कि कैंसर कोशिकाएं लिम्फ की नई संरचना से तेजी से फैलती हैं। यद्यपि इस पर और अधिक शोध हो रहे हैं, पर वैज्ञानिकों का मानना है कि कैंसर के यह निदान की नई दिशा हो सकती है।

तनाव निर्णय लेने की क्षमता एवं उसकी गुणवत्ता को प्रभावित करता है। बचपन के तनाव का प्रभाव वयस्क होने पर भी बना रहता है। ऐसे लोग कठिन निर्णय लेने में हिचकते हैं और अपने गलत निर्णय के परिणामों से कोई सीख भी नहीं लेते। मई, 2017 में प्रोसीडिंग्स ऑफ नेशनल एकाडमी ऑफ साइन्सेज़ में प्रकाशित एक शोध पत्र में विस्कान्सिन मेडिसिन विश्वविद्यालय के वैज्ञानिक कहते हैं कि तनावपूर्ण बचपन वयस्क होने पर हानि–लाभ के ऑकलन की प्रक्रिया को प्रभावित करता है। ऐसे लोग परिवेश के हानि एवं लाभ के अवसरों को प्रभावी ढंग से नहीं समझ पाते। तुलनात्मक रूप में अवसरों का इंतजार नहीं करते एवं शीघ्र धैर्य खो देते हैं।

वैज्ञानिकों ने 15 महीनों के आयु के बच्चों के व्यवहार का अध्ययन किया। ऐसा पाया गया कि जो बच्चे तनाव में थे, वे अपनी पुरानी आदत के अनुसार हरकतें करते रहे। यदि तनाव के कारण हटा दिए जाएं, तब भी वे अपनी आदत बदल नहीं पाते। जबकि तनावमुक्त बच्चे नई परिस्थितियों के अनुसार अपनी आदतें ढाल लेते हैं। ऐसा लगता है कि तनाव बच्चों की परिस्थितियों से सामंजस्य बैठाने की क्षमता को प्रभावित करता है।

ruko ,oa ekbØkck;ke

माइक्रोबायोम अर्थात शरीर में उपस्थित जीवाणु कई तरह से स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं। ऐसा माना जा रहा है कि हमारी शारीरिक जीवन प्रणाली वृहत्तर जीनोम से चलती हैं। हमारे शरीर में लगभग एक अरब कोशिकाएं होती हैं और उनके चार गुना जीवाणु। इनका सम्मिलित आनुवांशिक पदार्थ या डीएनए शरीर की क्रियाविधि को संचालित करता है। हमारे शरीर में इन जीवाणुओं की बस्ती बहुत सावधानी पूर्वक बसाई जाती है। गर्भ से लेकर जन्म के उपरांत तक ये जीवाणु आंतों, मुंह, त्वचा एवं जननांगों में अपनी कालोनी बसा लेते हैं। मां के दूध में कुछ ओलिगोसेक्राईड पाए जाते हैं, जिनको शिशु पचा नहीं सकता। वास्तव में ये पदार्थ आंत के लाभदायक बैक्टीरिया के लिए होते हैं। जो उनको खाकर तेजी से बढ़ते हैं और हानिकारक बैक्टीरिया को पनपने नहीं देते।

प्रोसेडिग ऑफ नेशनल एकेडमी ऑफ साइंस ने 12 मार्च, 2018 के एक शोध पत्र में वैज्ञानिक इस क्रियाविधि की चर्चा करते हैं, जिसमें लगातार बने रहने वाले तनाव से आंत की गंभीर बीमारी आई.बी.डी. बढ़ जाती है। उनके निष्कर्ष बताते हैं कि तनाव से आंत की बैक्टीरिया का प्रकार बदल जाता है अर्थात् हानिकारक बैक्टीरिया अधिक पनपने लगते हैं। ये हमारी सुरक्षा प्रणाली इम्यूनसिस्टम को प्रभावित करता है और कोलाइटिस को बढ़ाता है।

चूहों पर किये गये अनुसंधान में यह पाया गया कि यदि गर्भ के दौरान मॉ तनाव में है तो बच्चों के आंत में लाभदायक वैक्टीरिया लैक्टोवैसिलस की संख्या कम हो जाती है एवं एनरोविक बैक्टीरिया क्लोस्ट्रीडियम इत्यादि की संख्या बढ़ जाती है। इस बदले हुए माईक्रोबायोम से मस्तिष्क भी प्रभावित होता है। उन्होंने बच्चों के मस्तिष्क में फ्री एमीनो अम्लों का भी मापन किया। इनमें भी कमी देखी गई। इस तरह तनाव का असर बहुआयामी होता है।

ruko ls 'kh?kz o`) gksrk gS 'kjhj

एलिजाबेथ एस ब्लैकवर्न, जिन्हें 2009 में शरीर क्रिया विज्ञान में नोबेल पुरस्कार मिला था एवं एलीसा एस इपेल

नेचर 2012 के तनाव एवं तन्यता के संग्रह में लिखती है कि तनाव इतना विषैला है कि इसे अनदेखा नहीं किया जा सकता। जैसे जूते के फीते के अंत में धातु का एक टुकड़ा लगाया जाता है जो उसे उधड़ने से बचाता है, वैसे ही डी.एन.ए. के अंत टीलोमीयर होते हैं जो उसको खुलने से बचाते हैं। सामान्यतया जैसे–जैसे कोशिकाएं विभाजित होती रहती है, वैसे–वैसे टीलोमीयर छोटे होते जाते हैं। तनाव एवं अन्य बीमारियों में टीलोमीयर छोटे होते जाते हैं। सीधे शब्दों में यह कहें तो टीलोमीयरकी लम्बाई और उम्र का उल्टा संबंध है। उम्र बढ़ेगी तो टीलोमीयर छोटे होते जाते हैं। 2004 वे अपने एक शोध की चर्चा करती है, जिससे उन्होंने उन माताओं के सफेद रक्त कोशिकाओं के टीलोमीयर का अध्ययन किया था जो अपने गम्भीर रूप से बीमार बच्चों की देखभाल कर रही थीं। जो माताएं जितने अधिक दिन से अपने बीमार बच्चों की देखभाल कर रही थीं, उनके टीलोमीयर स्वस्थ बच्चों की माताओं की तुलना में उतने ही छोटे पाये गये। अगर उम्र की भाषा में कहें तो कुछ ऐसा था, जैसे इस तनाव से वो लगभग 10 वर्ष अधिक बूढ़ी हो गयी हों।

बहुत सारे अध्ययनों से लगातार ये बात सामने आ रही है कि तनाव से टीलोमीयर की लम्बाई कम हो जा रही है तथा टीलोमीयर की लम्बाई एवं बीमारियों का गहरा संबंध है। इन्हें टीलोमीयर सिन्ड्रोम कहते हैं। ये ऐसी बीमारियॉ हैं, जिन्हें बुढ़ापे की बीमारियां कहा जा सकता है, जैसे एपलास्टिक एनीमियां (शरीर में नई कोशिकाएं बनाना बंद हो जाती हैं) मधुमेह, कुछ तरह के हृदय रोग एवं कुछ कैंसर। इन सबसे यही निष्कर्ष निकलता है कि तनाव से बहुत सारी गंभीर बीमारियां हो रही हैं, शायद टीलोमीयर के छोटे होने के कारण।

ऐसे भी प्रमाण हैं कि टीलोमीयर पर तनाव का असर बचपन से या जन्म से पहले आरम्भ हो जाता है। गर्भ के दौरान तनाव, अनाथ आश्रम का बचपन या बचपन में शोषण सब टीलोमीयर की लम्बाई कम कर देते हैं। इससे भी भयावह सच है कि बचपन के तनाव का असर वयस्क होने पर भी बना रहता है।

ruko çcUèku

तनाव से जीनों की कार्य प्रणाली बदल जाती है, पर जीन में ये परिवर्तन बदले जा सकते। इनको पुनः उनकी सही अवस्था में लाया जा सकता है। छोटे–छोटे कई सारे प्रयोगों में पाया गया है कि यदि आप तनाव का उचित प्रबंधन करें तो उत्तेजनाकारी जीनों को शांत किया जा सकता है। इसमें दवाएं और व्यवहारिक प्रबंधन दोनों ही प्रभावी हैं। दवाएं तनाव के हार्नोमोन जनित क्रियाविधि को बंद करने का काम करती है। उपासना, शारीरिक व्यायाम, समाजिक सहयोग एवं विशेषज्ञ की सलाह भी तनाव प्रबंधन के महत्वपूर्ण आयाम हैं।

मिशिगन विश्वविद्यालय के मनोरोग विभाग के प्रोफेसर डैनियल किटिंग इसी विषय पर अपने एक पुस्तक में कहते हैं कि तनाव के दो मूल कारण हैं–सामाजिक एवं व्यक्तिगत। जैसे–जैसे समाज में असमानता बढ़ती है, वैसे ही हम डरने लगते हैं कि हम अपनी मूलभूत आवश्यकता पूरी कर पायेंगे या नहीं? यदि हम ठीक–ठाक स्थिति में हैं तो भी डरते हैं कि समाज में अपनी स्थिति बरकरार रख पाएंगे या नहीं? हमारे बच्चों या हमारी आर्थिक सुरक्षा बनी रहेगी या नहीं? कम होते आर्थिक संसाधन, रोजगार की कमी और कम होते सामाजिक सहयोग जैसे, सामाजिक संबल का कम होना, मित्रों की कमी एवं अनियंत्रित परिस्थितियां, सब मिलकर असहायता की स्थिति ला देती हैं। यही असहायता एवं लाचारी तनाव को जन्म देती हैं। व्यक्तिगत कारण है तनाव के हार्मोन–अधिक कर्टिसाल, जो हमें तनाव के बाद शांत नहीं होने देता और हम बिना किसी कारण के भी उत्तेजित रहते हैं।

तनाव कम करने के जो वैज्ञानिक तरीके हैं, उन्हें हम सदियों से जानते हैं। वैज्ञानिक नए शोध पत्रों से प्रायोगिक साक्ष्यों के आधार पर उन्हें पुनः परिभाषित कर रहे हैं। आवश्यकता सिर्फ इतनी है कि जो हम जानते हैं, उन्हें अमल में लाएं। उनका पालन करें। जैसे–जैसे हम विकसित होते गए, वैसे–वैसे हमारा सामाजिक ताना–बाना टूटता चला गया। हम और अकेले और डरे–सहमे रहने लगे। अनिश्चितताएं बढ़ने लगीं। प्रोफेसर कीटिंग कहते हैं कि तनाव की महामारी आ गई है। हम सब लोग सुबह से शाम तक तनाव में ही रहते हैं। बच्चों का स्कूल हो या हमारा कार्यालय, सोशल मीडिया हो या हमारे राष्ट्रीय राजमार्ग, माल हो या अन्य बाजार, हर जगह से तनाव हमारी जिंदगी में घुस जाता है। भावनात्मक संबंध समाप्त होता जा रहा और अकेलापन बढ़ता जा रहा है। ऐसे में तनाव कम हो तो कैसे? ऐसे में सबसे महत्वपूर्ण है कि आप अपना सामाजिक तानाबाना दुरूस्त करें, अपना सामाजिक दायरा बढांए।

अमेरिकी मनोरोग वैज्ञानिक एसोसियेशन का कहना है कि अपने सामाजिक सहयोग का दायरा बढ़ाएं, जिससे आपको भावनात्मक सहारा मिल सकें। यह ऐसा संसाधन है जिससे आप निरोग रहेंगे। दूसरे–अपनी तरफ से पहल करें। इस बात की प्रतीक्षा मत करें कि दूसरे लोग आपसे संपर्क बनायेंगे। पर इसका अवश्य ध्यान रखें कि वे लोग ऐसे होने चाहिए जो विश्वासपात्र हों, जिन पर आप निर्भर रह सकें। परिवार एवं मित्रों के लिए समय निकालें। वैज्ञानिकों का कहना है कि सहयोग लेने की अपेक्षा सहयोग देना स्वास्थ्य और लंबी उम्र के लिए अधिक लाभदायक है, इसलिए अपना हाथ बढ़ायें, तकनीकी का भी सहारा लें। पर शोध बताते हैं कि आमने–सामने बैठकर बात करना अधिक लाभदायक होता है। यदि आपकी रूचि गाने सुनने, घूमने इत्यादि में है तो आसपास की राजनीति में शामिल हो जाएं। आपको अपने समान रूचि वाले लोगों से मिलने का अवसर मिल सकता है।

तनाव जानी–पहचानी समस्या है। यदि आवश्यक हो तो मनोरोग चिकित्सक से सलाह लेने में संकोच न करें। तनाव की दवा लेना, अब सामाजिक वर्जना नहीं रहा। यह एक रोग है, निसंकोच दवा लें।

नियमित व्यायाम मानसिक स्वास्थ्य को सुधारता है। एड्रीनलीन एवं कार्टिसाल की मात्रा कम करता है। इसमें एन्डार्फिन हारमोन निकलता है, जो प्राकृतिक दर्द निवारक है और आपका मूड और मिज़ाज अच्छा कर देता है। जैसे ही नियमित व्यायाम से आपकी तोंद थोड़ी सी अन्दर जाती है, शरीर में कुछ शक्ति मससूस होती है, आप सुडौल एवं सुन्दर दिखते हैं। आपको अच्छा लगने लगता है। आपके खुद की नजरों में आपकी इज्जत बढ़ने लगती है। पर हमेशा ध्यान दें तनाव भावनात्मक होता है। उसका निदान आंतरिक समझ एवं व्यवहार के परिवर्तन में ही है।

उपासना मन को शांत करने की सदियों पुरानी आजमायी हुई विधि है। सांसों का अभ्यास, प्राणायाम और योग तनाव को कम करते हैं। समस्याओं को निर्पेक्ष भाव से देखने का प्रयास करें ये तनाव कम करता है। इनके अभ्यास करने से इसके निश्चित फायदे हैं।

वर्तमान में जीने की कला सीखें। भविष्य एवं भूत की अधिक चिंता न करें। प्रसिद्ध दार्शनिक जे. कृष्णमूर्ति कहते हैं कि भारतीय संस्कृति अधिकांश समय क्या होना चाहिए, पर विचार करती है, जैसे भाई भरत जैसा होना चाहिए, पुत्र श्रवण जैसा होना चाहिए। यह आदर्श स्थितियां हैं, जो हो सकता है कि आपके समयकाल एवं जीवन में बहुत प्रासंगिक न हो। हो सकता है कि लाख चाहने के बाद भी आप ''होना चाहिए'' की स्थिति में न पहुँच पाएं। इसलिये 'क्या है' इस पर विचार करे, यह अधिक महत्वपूर्ण है।

परिस्थितियों पर नियंत्रण का प्रयास करें। यद्यपि वैज्ञानिक कहते हैं कि यह मिथ्या प्रयास है, आभासी स्थिति है, पर इसके लाभ हैं। छोटी–छोटी उपलब्धियां भी गिनें। इससे आपको लगेगा कि परिस्थितियां नियंत्रण में आ रही हैं। इससे आपका आत्मविश्वास बढ़ेगा। लाचारगी एवं असहाय होने की भावना कम होगी।

आधुनिक परिवेश में आप तनाव से नहीं बच सकते। जब तकनीकी विकास सामाजिक विकास से अधिक तेज होता है तो समाज की मान्यताए बदलती हैं, ताना–बाना टूटता है और परिस्थितियां हाथ से निकलती महसूस होती हैं। पर तनाव का कुशल प्रबंधन हो सकता है। याद रखें कि आप तनाव को कम करने में स्वयं समर्थ हैं, और अपनी क्षमताओं पर विश्वास रखें। प्रयास करने से आप तनाव कम कर सकते हैं और स्थाई तनाव से बच सकते हैं।

;|fi eu ykxks ea l; g] tk pkgrs gS vkj ftudk fopkj gS fd fgUnh gh Hkkjr dh jk"VHkk"kk gks ldrh g---

&ykdekU; ckyxaxk/kj frykd

i;koj.k e c<r xhu gkml xlk dk mRltu de dju e ck;k&bFkku,y bèku dk ç;kx % ,d ldkjkRed lkp

o#pk feJk] vk'krk"k dekj eYy] vfÜouh nÙk ikBd o vfHk"kd Çlg

भाकृअनुप– भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, रायबरेली रोड
लखनऊ–226002, उत्तर प्रदेश, भारत

पिछले दस वर्षों में, जिस प्रकार से जलवायु परिवर्तन हो रहा है तथा ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन बढ़ रहा है उसी प्रकार से हमारे स्वस्थ्य पर्यावरण पर तेज़ी से असर पड़ रहा है जो एक चिंता का विषय बन चुका है। ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन एक मुख्य कारण ईंधन का अधिक उपयोग भी है। ईंधन के उत्सर्जन को कम करने पर कई सरकारों ने जोर दिया है। अपने सामूहिक कार्बन पदचिह्न को कम करने के लिए कई लोगों ने पर्यावरण पर उनके प्रभाव को नियंत्रित करने के लिए एक रास्ता तलाशना शुरू कर दिया है। इसी के कारण कई देशों में इथेनॉल ईंधन के उपयोग में वृद्धि हुई है। बायो–इथेनॉल को दुनिया भर में अधिकतर जैव ईंधन के रूप में पहचाना गया है क्योंकि यह कच्चे तेल की खपत और पर्यावरण प्रदूषण को कम करने के लिए महत्वपूर्ण योगदान देता है। यह सूक्ष्मजीवों द्वारा किण्वन प्रक्रिया के माध्यम से विभिन्न प्रकार के फीडस्टॉक्स जैसे सूक्रोज, स्टार्च, लिगोनोसेल्यूलोजिक और एल्गल बायोमास से उत्पादित किया जा सकता है। अन्य प्रकार के सूक्ष्मजीवाणों के अपेक्षा में, विशेष रूप से सैकोरोमायसीज़ सरवीसी एक आम सूक्ष्मजीव जो इथेनॉल के उत्पादन में प्रयोग किया जाता है क्योंकि इसमें उच्च इथेनॉल उत्पादकता, उच्च इथेनॉल सहिष्णुता और शर्करा की विस्तृत श्रृंखला को उबालने की क्षमता होती है। हालांकि, खमीर किण्वन में कुछ चुनौतियां हैं जो इथेनॉल उत्पादन को रोकती हैं जैसे उच्च तापमान, उच्च इथेनॉल एकाग्रता और पेंटोस शर्करा की उबालने की क्षमता।

बायो–इथेनॉल को एथिल अल्कोहल या रासायनिक रूप से C_2H_5OH या EtOH भी कहा जाता है। यह ईंधन का एक स्रोत है जिसको गैसोलीन के साथ मिश्रित किया जाता है। बायो–इथेनॉल ईंधन का प्रयोग बिजली वाहनों पर भी किया जा सकता है। इसे सीधे "शुद्ध" या "गैसोहोल" के उत्पादन के लिए गैसोलीन के साथ मिश्रित किया जा सकता है। यह गैसोलिन सुधारक या ऑक्टेन बढ़ाने के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है और बायो–इथेनॉल–डीजल मिश्रणों में से गैसों के उत्सर्जन को कम करने के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। बायो–इथेनॉल गैसोलीन से अधिक लाभ प्रदान करता है जैसे कि ऊंचे ऑक्टेन संख्या (108), व्यापक ज्वलनशीलता की सीमाएं, उच्च लौ की गति और वाष्पीकरण की बढ़ी दर, इत्यादि। पेट्रोलियम ईंधन के विपरीत, बायो–एथेनॉल कम विषाक्त, आसानी से बायोडिग्रेडबल है और कम हवा से उत्पन्न प्रदूषक पैदा करता है। बायो–इथेनॉल के उत्पादन में पहले, दूसरे और तीसरी पीढ़ी में कई तरह के फीडस्टॉक्स का उपयोग किया जाता है (चित्र 1)। पहली पीढ़ी के बायो–इथेनॉल में सूक्रोज (गन्ने से, चीनी चुकंदर

चित्र 1: बायो–इथेनॉल का उत्पादन में पहली, दूसरी और तीसरी पीढ़ी में प्रयोग होने वाले फीडस्टाक

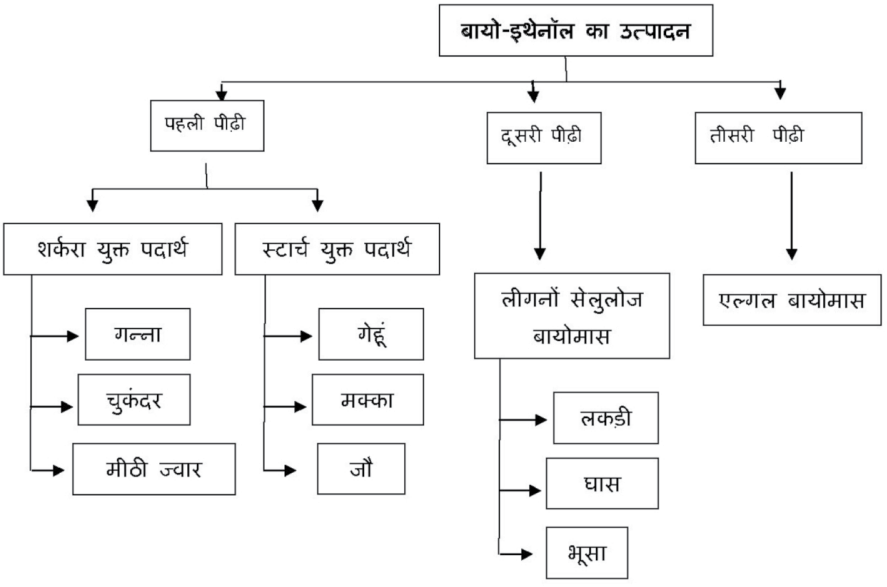

से, मीठे ज्वार से और फलों से) और स्टार्च (मक्का, गेहूं, चावल, आलू, कसावा, मीठे आलू और जौ से) से युक्त फीडस्टॉक्स शामिल होते हैं। दूसरी पीढ़ी के बायो–इथेनॉल के उत्पादन में लैगोनोसेल्यूलोजीक बायोमास से मिलता है जैसे कि लकड़ी, पुआल और घास से प्राप्त होता है। तीसरी पीढ़ी के बायो–इथेनॉल को एल्गल बायोमास और मायक्रोएलगी सहित मैक्रोएलगी से प्राप्त किया जाता है। विभिन्न फसलों में अलग अलग सुक्रोज़ या स्टार्च की मात्रा पायी जाती है जिस पर इथेनॉल का उत्पादन की मात्रा भी निर्भर करती है। विभिन्न फसलों में सुक्रोज़ या स्टार्च तथा इथेनॉल उत्पादन की मात्रा निम्नलिखित तालिका में उल्लेख की गयी है (तालिका 1)। इसके उत्पादन की प्रक्रिया की शुरुआत फसलों या पौधों को पीसकर होती है। इसके बाद, पीसे गए पदार्थ को शर्करा, सेलूलोज या स्टार्च प्राप्त करने के लिए परिष्कृत किया जाता है। वनस्पति सामग्री से चीनी को किण्वन द्वारा बायो–इथेनॉल और कार्बन डाइऑक्साइड में परिवर्तित किया जाता है। आम तौर पर किण्वन प्रक्रिया को गति देने के लिए खमीर का प्रयोग किया जाता है। यह प्रक्रिया मादक पेय पदार्थों के उत्पादन के तरीके जैसे ही होती है। एक बार बायो–इथेनॉल का आसवन (डिस्टीलेशन) और शुद्धिकरण आरंभ हो जाता है तब यह उपयोग के लिए तैयार हो जाता है। क्योंकि इसके उत्पादन में केवल चार चरण होते हैं इसलिए इसकी प्रक्रिया लागत प्रभावी मानी जा सकती है, जो हमारे वर्तमान अर्थव्यवस्था में बायो–इथेनॉल ईंधन के उपयोग के लिए एक बड़ा कारण माना जा सकता है।

rkfydk& 1% fofHkUu Qlyksa esa lqØkst ;k LVkpZ rFkk bFksu,y mRiknu dh ek=k

फसलें / उत–उत्पादन	सुक्रोज़ की मात्रा	इथेनॉल की मात्रा (गैलन अल्कोहल प्रति टन)
मक्का	7–15% शर्करा	8–18 गैलन
चुकंदर	15 % शर्करा	20–25 गैलन
मोलासिस	52–55 % किण्वित शर्करा	70–80 गैलन
गन्ने के चारे में	14 % किण्वित शर्करा	13–14 गैलन
पृथ्वी सेब	16–18%	25 गैलन
आलू	15–18% किण्वित शर्करा	20–25 गैलन
शकरकंद	27–28% किण्वित शर्करा	40 गैलन

ck;ks&bFksu,y mRiknu dh çfØ;k

कई तरह से बायो–इथेनॉल का उत्पादन किया जाता है। इसकी प्रक्रिया निम्नलिखित है –

- केंद्रित अम्लीय हाइड्रोलिसिसः करीबन 77 प्रतिशत सल्फ्यूरिक अम्ल को सूखे बायोमास में डाला जाता है जिससे 10% नमी की मात्रा बनी रहे। इस अम्ल की मात्रा का अनुपात 1/25 अम्ल : 1 बायोमास होता है जब तापमान 50 डिग्री सेल्सियस के नीचे का होता है। इस अम्लीय मिश्रण को करीबन 30 प्रतिशत पानी से पतला किया जाता है तथा मिश्रण को फिर से 100 डिग्री सेल्सियस तापमान पर एक घंटे के लिए गर्म किया जाता है। इसके पश्चात एक जैली नुमा पदार्थ का उत्पादन होता है। अम्ल शर्करा के मिश्रण को निकालने के लिए जैली को दबाया जाता है। एक क्रोमैटोग्राफिक कालम का उपयोग करके अम्ल व शर्करा के मिश्रण को अलग किया जाता है।
- डाइल्यूट अम्ल हाइड्रोलिसः सबसे पुराना, सरलतम, अभी तक का कुशल तरीका जिससे बायोमास को सूक्रोज़ हेमी–सेल्यूलोज में हाइड्रोलाइज किया जाता है। इस प्रक्रिया में 7 प्रतिशत सल्फ्यूरिक अम्ल को बायोमास में डाला जाता है जब तापमान 190 डिग्री सेल्सियस के नीचे का होता है। अधिक प्रतिरोधी सेलूलोज उत्पन्न करने के लिए, 4 प्रतिशत अधिक सल्फ्यूरिक अम्ल को 215 डिग्री सेल्सियस के तापमान पर डाला जाता है।
- सूखी मिलिंग प्रक्रियाः इस प्रक्रिया में मकई कार्न को साफ व छोटे कणों में तोड़ा जाता है। अम्ल व एंजाइम की उपास्थिती में मकई के पाउडर मिश्रण (मकई, स्टार्च व फाइबर) को सुक्रोज़ में रूपांत्रित किया जाता है जिससे शर्करा का एक घोल उत्पादित होता है। ठंडे मिश्रण में खमीर को किण्वन के लिए डाला जाता है जिससे इथेनॉल का उत्पादन हो सके।
- गीली मिलिंग प्रक्रियाः मकई कार्न को गर्म पानी में भिगोया जाता है जिससे उसके प्रोटीन को तोड़ा जा सके। इस प्रक्रिया से मकई में उपस्थित स्टार्च को निकाला जाता है। इस तरह से मिलिंग प्रक्रिया के लिए कर्नेल को नरम किया जाता है। इस प्रक्रिया में फाइबर और स्टार्च उत्पादों का उत्पादन होता है। आसवन प्रक्रिया के द्वारा इथेनॉल का उत्पादन किया जाता है।
- शर्करा किण्वनः हाइड्रोलिसिस प्रक्रिया में बायोमास सेल्युलोसिक भाग को शर्करा में रूपांत्रित किया जाता

है जिसको बाद में इथेनॉल में किण्वित किया जाता है। इस प्रक्रिया में खमीर को किण्वन के लिए डाला जाता है और इससे डालने के बाद मिश्रण को गर्म किया जाता है। इस प्रक्रिया में इनवर्सेज एक उत्प्रेरक के रूप में कार्य करता है और सुक्रोज़ शर्करा को ग्लूकोज़ और फ्रुक्टोज़ में परिवर्तित करता है। रासायनिक प्रतिक्रिया निम्नलिखित दी गयी है–

ck;k&bFku,y mRiknu d fy, mÙkjnk;h Qly

$C_{12}H_{22}O_{11}$ (सुक्रोज़) + H_2O (पानी) —इनवर्सेज→ $C_6H_{12}O_6$ (फ्रूक्टोज़) + $C_6H_{12}O_6$ (ग्लूकोज़)

$C_6H_{12}O_6$ (फ्रूक्टोज़/ग्लूकोज़) —ज़ाइमेज→ $2C_2H_5OH$ (इथेनॉल) + $2CO_2$

बायो–इथेनॉल उत्पादन के लिए कई फसलें उत्तरदायी होती हैं जिनका वर्णन निम्न है–

- xUuk % गन्ने से इथेनॉल उत्पादन की प्रक्रिया निम्नलिखित वर्णित है–

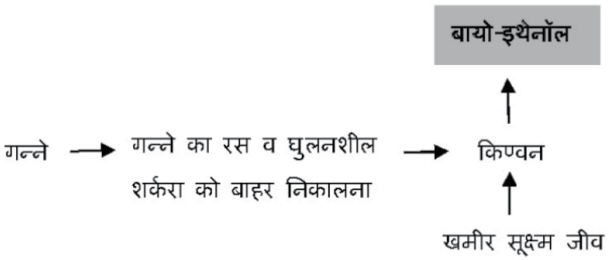

चित्र 2 : गन्ने से इथेनॉल उत्पादन की प्रक्रिया

- p|dnj % चुकंदर में पाया जाने वाला सैक्ररोज़ (डाईसैक्राइड) फ्रक्टोज़ व ग्लूकोज (मोनोसैक्राइड) में परिवर्तित हो जाता है जो अंततः इथेनॉल में परिवर्तित होता है। यह रसायनिक प्रक्रिया निम्नलिखित है–

$C_{12}H_{22}O_{11}$ (सैकरोज) (डाईसैक्राइड) + H_2O (पानी) → $C_{12}H_{12}O_6$ (फ्रूक्टोज़) (मोनोसैक्राइड) + $C_{12}H_{12}O_6$ (ग्लूकोज़) (मोनोसैक्राइड) → C_2H_5OH (इथेनॉल)

इस प्रक्रिया द्वारा 3 से 3.5 किलोग्राम मोलासिस से एक लीटर इथेनॉल का उत्पादन किया जाता है।

- eôk % मकई से इथेनॉल किण्वन, रासायनिक प्रसंस्करण और आसवन के माध्यम से तैयार किया जाता है। संयुक्त राज्य अमेरिका में मकई इथेनॉल उत्पादन के लिए मुख्य फीडस्टॉक है। दो प्रकार से मकई से इथेनॉल का उत्पादन किया जा सकता है–

क) सूखी मिलिंग प्रक्रियाः सूखी मिलिंग प्रक्रिया में पूरे मकई के कर्नेल को पाउडर बनाया जाता है। सुखी मिलिंग प्रक्रिया से उत्पादित बायो–इथेनॉल की प्रक्रिया निम्नलिखित है (चित्र 3)–

ख) गीले मिलिंग प्रक्रियाः गीली मिलिंग प्रक्रिया में मकई के दाने को मकई से अलग करने के लिए सल्फ्यूरिक अम्ल और पानी का पतला संयोजन किया जाता है। इस प्रक्रिया का उप–उत्पाद मकई का तेल है।

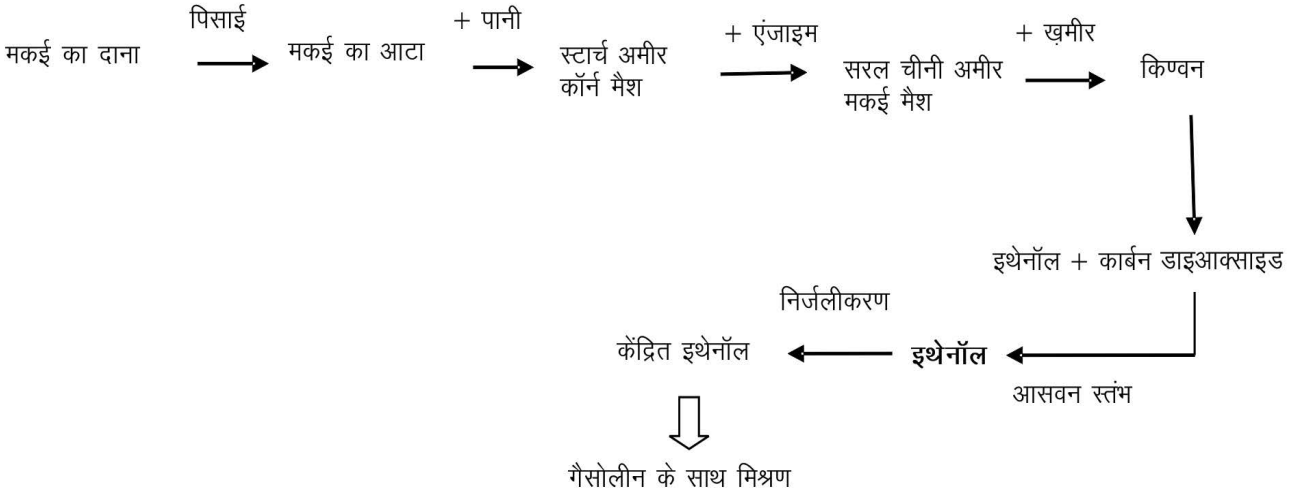

चित्र 3: सूखी मिलिंग प्रक्रिया

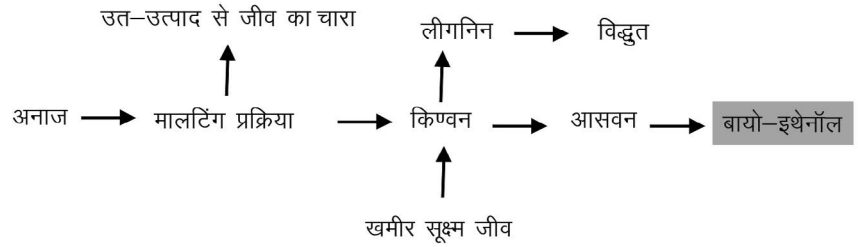

चित्र 4: अनाज से इथेनॉल उत्पादन की प्रक्रिया

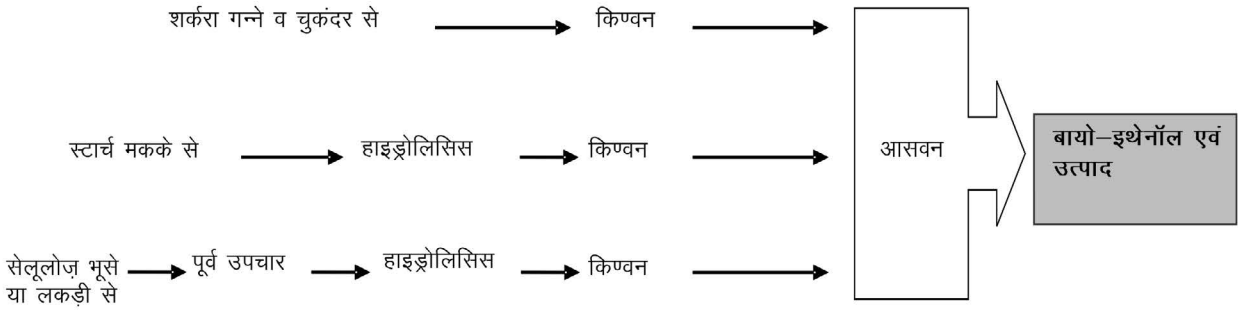

चित्र 5: स्टार्च, शर्करा व सेलुलोज़ से बायो–एथेनाल के उत्पादन की प्रक्रिया का तुलनात्माक

- vukt % अनाज से इथेनॉल उत्पादन की प्रक्रिया निम्नलिखित वर्णित है (चित्र 4 एवं 5)। इस प्रक्रिया में किण्वन चरण के लिए 32 से 35 डिग्री सेल्सियस की अवाश्यकता पड़ती है तथा पी.एच. 5.2। इस प्रक्रिया से इथेनॉल का उत्पादन 10–15 प्रतिशत की साद्रता की मिलती है।

bFku,y mRiknu ds Qk;ns

इथेनॉल का ईंधन के रूप में उपयोग करने से कई तरह से पर्यावरण को लाभ होता है।

- bFku,y bèku vU; tho bèku dh rqyuk esa ykxr çHkkoh gksrk gS

इथेनॉल ईंधन कम से बहुत सस्ता ऊर्जा स्रोत है क्योंकि लगभग हर देश में इसे उत्पादन करने की क्षमता है। लगभग हर देश में मक्का, गन्ना या अनाज की पैदावर में वृद्धि हुई है जो कि जीवाश्म ईंधन की तुलना में उत्पादन को आर्थिक बनाता है। जीवाश्म ईंधन अधिकांश देशों की अर्थव्यवस्था, विशेषकर विकासशील देशों को विपरीत स्थिति में ला सकता है। इस कारण से, इन बढ़ती अर्थव्यवस्थाओं के लिए राजस्व को बचाने के लिए जीवाश्म ईंधन पर निर्भरता को खत्म किया जा रहा है। इथेनॉल ईंधन को इसके विकल्प के रूप में प्रयोग किया जा रहा है

D;k bFku,y&fefJr bèku iVªksy vkèkkfjr bèku ds :i esa bèku n{krk ds leku Lrj çkIr djrs gSa

1 लीटर की शुद्ध पेट्रोल को जलाने में ऊर्जा की मात्रा 1.4 लीटर इथेनॉल को जलाने के समान होती है। ई–85 मिश्रित ईंधन में पेट्रोल के अपेक्षा लगभग 33 प्रतिशत कम ऊर्जा प्राप्त होती है। इथेनॉल मिश्रित ईंधन में पेट्रोल के अपेक्षा में कम ईंधन दक्षता प्राप्त होती है जिसके फलस्वरूप ईंधन की खपत में वृद्धि होती है जिससे की ऊर्जा उत्पादन में कमी हो सके।

- ikfjfLFkfrd :i ls çHkkoh

अन्य ईंधन स्रोतों के अपेक्षा इथेनॉल का एक हद तक लाभ यह है कि यह पर्यावरण को प्रदूषित नही करता है। इथेनॉल ईंधन की एक विशेषता यह है कि इसका प्रयोग विद्युत ऑटोमोबाइल में करने से पर्यावरण में विषाक्त पदार्थों का काफी कम स्तर पर उत्सर्जन होता है। कई अवसरों पर, पेट्रोल के साथ भी इसको मिश्रण कर के इथेनॉल को ईंधन में परिवर्तित किया जाता है। विशेष रूप से, गैसोलिन के साथ इसका मिश्रण का अनुपात 85:15 का होता है। यह अनुपात ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को पर्यावरण में कम करती है क्योंकि यह गैसोलिन के अपेक्षा साफ तरह से जलती है।

- **Xykcy okÉex dk de djrk g**

ग्लोबल वार्मिंग जीवाश्म ईंधन (तेल, प्राकृतिक गैस और कोयले) के उपयोग से उत्सर्जित खतरनाक ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन के कारण से होता है। कुछ ग्लोबल वार्मिंग के प्रभाव इस प्रकरा है– मौसम के बदलते पैटर्न, बढ़ता समुद्री स्तर और अत्यधिक गर्मी, इत्यादि। इथेनॉल ईंधन का दहन केवल कार्बन डाइऑक्साइड और पानी को उत्सर्जित करता है। यह उत्सर्जित कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा पर्याप्त होती है जो फसल पर्यावरण से वापिस अपनी प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया में उपयोग कर लेती है जिसके फलस्वरूप पर्यावरण साफ बना रह सकता है।

- **iVªky dk vi{kk bFkuky i;koj.k dk fy, vfèkd vuqdy gkrk gA**

साधारणतः लीटर प्रति लीटर के आधार पर, इथेनॉल 1.5 किलोग्राम कार्बन डाईआक्साइड का उत्पादन करता है, जो कि पेट्रोल द्वारा उत्पादित 2.2 किलोग्राम कि अपेक्षा में कम होता है। हालांकि इथेनॉल पेट्रोल की अपेक्षा कम ऊर्जा प्रदान करता है इसलिए 1.4 लीटर (जो कि 2.15 किलोग्राम CO_2 का उत्पादन करता है) में ऊर्जा की समान 1 लीटर पेट्रोल के रूप में होती है। इससे यह ज्ञात होता है की CO_2 का पर्यावरण में उत्सर्जन तथा CO_2 का प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया में उपयोग होने की मात्रा (जिससे इथेनॉल का उत्पादन हो सके) में कम अंतर होता है।

bFkuky dh ldkjkRed fo'k"krk,¡

- यह ग्रीनहाउस गैसों को कम कर देता है।
- यह उच्च–ऑक्टाइन योजक की मात्रा को भी कम कर देता है।
- इथनोल–मिश्रित ईंधन ई–10 (10 प्रतिशत इथेनॉल और 90 प्रतिशत गैसोलीन) के रूप में 3.9 प्रतिशत तक ग्रीनहाउस गैसों को कम कर देता है।
- यह कार्बन तटस्थ है अर्थात प्रकाश संश्लेषण के दौरान अवशोषित कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा व बायोइथेनॉल के उत्पादन में निकली कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा समान होती है।
- ई–85 (85 प्रतिशत इथेनॉल और 15 प्रतिशत गैसोलीन) जैसे ईथेनॉल–मिश्रित ईंधन का उपयोग ग्रीनहाउस गैसों के शुद्ध उत्सर्जन को 37.1 प्रतिशत तक कम कर सकता है, जो एक महत्वपूर्ण राशि है।
- इथेनॉल की गैसों का निकास बहुत अधिक साफ तारीखे से होता है तथा यह अधिक साफ़ रूप से जलता है (अधिक पूर्ण दहन)।
- ईंधन का गिराव बहुत आसानी से जैव वर्गीकृत होता है या इसे आसानी से गैर विषैले सांद्रता के लिए पतला किया जा सकता है।

IykfLVd i;koj.k dk fy, ?kkrd

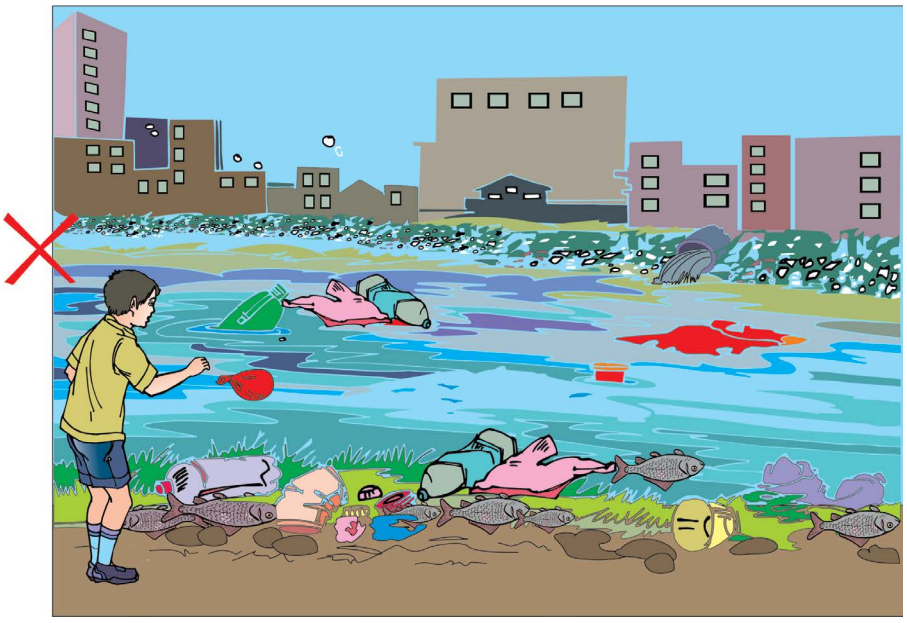

iitr
CSIR-INDIAN INSTITUTE OF TOXICOLOGY RESEARCH
COUNCIL OF SCIENTIFIC & INDUSTRIAL RESEARCH
राजभाषा कार्यान्वयन समिति की
तिमाही बैठक संख्या-1
(वर्ष 2018-19)
(अवधि - 01 अप्रैल - 30 जून, 2018)
दिनांक – 21.08.2018

fnukad 26 tqu] 2018 dks uxj jktHkk"kk dk;kZUo;u lfefr ¼dk;kZy;&3½ dh cSBd esa dk;kZ'kkyk ds vk;kstu gsrq çek.ki= çkIr djrs gq, ¼cka, ls nk,a½ Jh vfuy dqekj] ç'kklu fu;a=d] Jh pUæ ekgu frokjh] Çgnh vfèkdkjh vkSj M,- ¼Jherh½ iwue dDdM] eq[; oKkfud] lh, lvkÃvkj&vkÃvkÃVhvkj

fnukad 26 tqu] 2018 dks uxj jktHkk"kk dk;kZUo;u lfefr ¼dk;kZy;&3½ dh cSBd esa jktHkk"kk ds ç;ksx esa mRd`"V dk;Z gsrq f}rh; iqjLdkj dh 'khYM vkSj çek.ki= çkIr djrs gq, ¼cka, ls nk,a½ Jh pUæ ekgu frokjh] Çgnh vfèkdkjh] Jh vfuy dqekj] ç'kklu fu;a=d vkSj M,- ¼Jherh½ iwue dDdM] eq[; oKkfud] lh, lvkÃvkj&vkÃvkÃVhvkj

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति
(कार्यालय-3), लखनऊ
राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार
वर्ष : 2018-19
प्रथम बैठक : 26 जून, 2018
राजभाषा के प्रयोग में उत्कृष्ट कार्य
हेतु
द्वितीय पुरस्कार
सीएसआईआर-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान
लखनऊ
को प्रदत्त
भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान

भारत सरकार, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय
नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (कार्यालय-3), लखनऊ
भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ
क्रमांक : 02
दिनांक : 26 जून, 2018
प्रमाण पत्र
प्रमाणित किया जाता है कि सीएसआईआर-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ ने अक्टूबर-मार्च छमाही अवधि (2017–18) में कार्यालयी कार्यों में उत्कृष्ट प्रदर्शन कर द्वितीय स्थान प्राप्त किया।
राजभाषा कार्यान्वयन में इस कार्यालय के अधिकारियों/कर्मचारियों का यह प्रयास अत्यंत सराहनीय है।
(अश्विनी दत्त पाठक)

भारत सरकार, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय
नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (कार्यालय-3), लखनऊ
भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ
क्रमांक : 25
दिनांक : 26 जून, 2018
प्रमाण पत्र
प्रमाणित किया जाता है कि सीएसआईआर-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ ने अक्टूबर-मार्च छमाही (2017-18) की अवधि में हिंदी कार्यशाला का सफलतापूर्वक आयोजन किया।
(अश्विनी दत्त पाठक)

अमर उजाला लखनऊ MY City

दिसम्बर 8, 2017 P-IV

सीएम ने किया पत्रिका का विमोचन

लखनऊ। मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने बृहस्पतिवार को इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ टॉक्सिकोलॉजी रिसर्च की छमाही राजभाषा पत्रिका का विमोचन किया। आईआईटीआर की पत्रिका विषविज्ञान संदेश का यह पर्यावरण प्रदूषण विशेषांक है। निदेशक डॉ. आलोक धवन ने बताया कि सीएम का कहना है कि संस्थान के शोध कार्यों का हिंदी में प्रकाशन उल्लेखनीय प्रयास है।

दैनिक जागरण

दिसम्बर 8, 2017 P-III

आइआइटीआर की राजभाषा पत्रिका का विमोचन

भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ की छह माही राजभाषा पत्रिका विषविज्ञान संदेश एवं पर्यावरण प्रदूषण विशेषांक का गुरुवार को मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने इसका विमोचन किया। विशेषांक के 28वें अंक का विमोचन किया गया। मुख्यमंत्री ने कहा कि संस्थान के शोध कार्यों का हिंदी में प्रकाशन करना एक उल्लेखनीय प्रयास है। इस अवसर पर संस्थान के निदेशक प्रो. आलोक धवन ने संस्थान में राजभाषा कार्यान्वयन की प्रगति के बारे में भी अवगत कराया।

अमर उजाला MY City

12 मई 2018 IV

योजना

प्रौद्योगिकी दिवस पर आंध्रप्रदेश की कंपनी से बनी सहमति

आईआईटीआर पहुंचाएगा लोगों तक साफ पानी

अमर उजाला ब्यूरो

लखनऊ। इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ टॉक्सिकोलॉजी रिसर्च (आईआईटीआर) अपनी साफ पानी किफायती तकनीक 'ओ नीर' को लोगों तक निजी कंपनी की मदद से पहुंचाएगा। इसके लिए आंध्रप्रदेश की एक कंपनी से सहमति बनी है।

निदेशक डॉ. आलोक धवन ने बताया कि विज्ञान को बढ़ावा देने छात्रों को नई-नई तकनीक और नवाचार की संभावनाओं से एक कार्यक्रम में रूबरू कराया गया। इस बीच ही संस्थान की नवाचार के लिए सुविधा सितार में सूर्या पब्लिक स्कूल सुल्तानपुर रोड, केन्द्रीय विद्यालय अलीगंज और सीआरपीएफ स्कूल में छात्रों ने जानकारी ली। कार्यक्रम में शामिल होने आए आंध्रप्रदेश की कंपनी के एमडी जितेंद्र शर्मा ने कहा कि ओ नीर तकनीक पर जल्दी ही उनकी कंपनी एमओयू करेगी।

आईआईटीआर में प्रौद्योगिकी दिवस कार्यक्रम में मौजूद वैज्ञानिक।

आज

12 मई 2018 05

राष्ट्रीय प्रोद्योगिकी दिवस कार्यक्रम आयोजित

[illegible]

दैनिक जागरण
03 मई 2018 6

नौ डेंजर जोन बढ़ा रहे शहर में प्रदूषण

आइआइटीआर की रिपोर्ट में इन इलाकों को लेकर किया गया आगाह, कोशिशों के बाद भी प्रदूषण का स्तर बरकरार

गोमती नगर स्थित जुगौली क्रॉसिंग के निकट सड़क निर्माण के लिए तारकोल गर्म करने के दौरान निकलता धुआं • जागरण

जासं, लखनऊ : लगातार आधुनिकीकरण और वाहनों का बढ़ता दबाव, सिमटती हरियाली तथा कंक्रीट में बदल रहे शहर की आबो-हवा दिनोंदिन जहरीली होती जा रही है। डब्ल्यूएचओ द्वारा जारी की गई ताजा रिपोर्ट में प्रदूषित शहरों की सूची में लखनऊ टॉप टेन में है। राजधानी में नौ ऐसे इलाके हैं, जिनको प्रदूषण के लिहाज से डेंजर जोन में रखा गया है। वहीं अब शासन-प्रशासन में इससे निपटने को लेकर मंथन शुरू हो गया है।

भारतीय विष विज्ञान अनुसंधान संस्थान (आइआइटीआर) ने नवंबर 2017 में वायु एवं ध्वनि प्रदूषण पर रिपोर्ट जारी की थी। उस रिपोर्ट के अनुसार आवासीय क्षेत्र में इंदिरा नगर व अलीगंज सबसे अधिक प्रदूषित निकले थे। यहां की हवा में निलंबित कणकीय पदार्थों का औसत तीन-चार गुना अधिक पाया गया था। कमोबेश ऐसा ही आलम ध्वनि प्रदूषण का भी रहा। वैज्ञानिकों का कहना है कि इसका प्रमुख कारण शहर में रेंगता व अव्यवस्थित ट्रैफिक, बढ़ती वाहनों की संख्या, लगातार कम हो रही हरियाली और कंस्ट्रक्शन कार्य में बेतहाशा वृद्धि है। वहीं ध्वनि प्रदूषण में अनफिट वाहन, प्रेशर हॉर्न, डीजे सेट, वाहनों का बढ़ता दबाव व मोहल्लों में चल रहे कारखाने हैं।

यह है मानक

नेशनल एम्बिएंट एयर क्वालिटी स्टैंडर्स (एनएएक्यूएस) के अनुसार शहर में रेस्पीरेबल सस्पेंडेड पर्टीकुलेट मैटर (आरएसपीएम या पीएम 10) की मात्रा 100 माइक्रो ग्राम प्रति मीटर क्यूब होनी चाहिए। वहीं डब्ल्यूएचओ के मानक 50 हैं।

पूरे शहर में बढ़ा प्रदूषण ग्राफ

आइआइटीआर ने गत वर्ष अप्रैल और मई में वायु और सितंबर व अक्टूबर में ध्वनि प्रदूषण के विभिन्न इलाकों का औसत मापा। इसमें इंदिरा नगर का प्रदूषण टॉप पर रहा। यही नहीं चौक, इंदिरा नगर, अलीगंज जैसे इलाकों में भी हवा जहरीली पाई गई है। ऐसा ही हाल वर्ष 2016 की रिपोर्ट में भी रहा। यह क्षेत्र प्रदूषण के लिहाज से डेंजर जोन में है। वहीं वर्ष 2019 में भी यही स्थिति रहने के आसार हैं।

रिपोर्ट का अध्ययन करेगी सरकार

राज्य ब्यूरो, लखनऊ : प्रदेश सरकार प्रदूषित शहरों को लेकर विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) की ताजा रिपोर्ट का अध्ययन करेगी। इसमें विश्व के टॉप 20 प्रदूषित शहरों में यूपी के चार शहर शामिल हैं। वर्ष 2016 की रिपोर्ट के आधार पर इसमें कानपुर को सबसे प्रदूषित शहर बताया गया है।
वन एवं पर्यावरण विभाग की प्रमुख सचिव रेणुका कुमार ने कहा कि अभी डब्ल्यूएचओ की रिपोर्ट मंगाई गई है। उसका विस्तृत अध्ययन करने के बाद ही इसके बारे में कुछ कहा जा सकता है।

उन्होंने कहा कि रिपोर्ट में यह देखा जाएगा कि किन आधार पर कानपुर, वाराणसी, लखनऊ व आगरा को प्रदूषित शहरों में रखा गया है। इन शहरों में साफ व स्वच्छ हवा के लिए हर संभव उपाय किए जाएंगे। उन्होंने कहा कि प्रदूषण के लिए सिर्फ एक विभाग जिम्मेदार नहीं होता है। इसमें कई विभागों की सामूहिक जिम्मेदारी होती है। उन्होंने कहा कि डब्ल्यूएचओ की रिपोर्ट वर्ष 2016 के आंकड़ों पर तैयार की गई है। इसके बावजूद रिपोर्ट का अध्ययन करने के बाद जरूरी उपाय पर्यावरण विभाग करेगा।

सेहत के लिए मुसीबत

प्रदूषित हवा से फेफड़ा, हृदय संबंधी दिक्कतें हो रही हैं। लोग अस्थमा, सीओपीडी के मरीज हो रहे हैं। ऐसे में गर्भवती महिला, बुजुर्ग व बच्चों की मुसीबत और बढ़ जाती है। पीएम 10 और पीएम 2.5 से नवजात शिशुओं के विकृति होने, प्रीमेच्योर डिलीवरी व मातृ-शिशु मृत्युदर का खतरा बढ़ जाता है।

हर तरफ शोर ही शोर

शहर में ध्वनि प्रदूषण भी तेजी से बढ़ रहा है। आवासीय क्षेत्र में मानक जहां दिन में 55 व 45 डेसीबल है। वहीं व्यावसायिक में 65 व 55, औद्योगिक में 75 व 70 डेसीबल है। रिहायशी इलाकों में दिन में 64.8 से लेकर 74.9 डेसिबल शोर रहता है, जबकि रात में 61.3 से 70.5 डेसिबल शोर रहता है। व्यावसायिक क्षेत्र में दिन में 71 से 76.6 और रात में 62.4 से 70 डेसिबल के आस-पास रहता है।

वायु प्रदूषण की स्थिति (माइक्रोग्राम प्रति घन मीटर में)

पीएम 10 : मानक 100

स्थान	2016	2017
रिहायशी		
इंदिरा नगर	216.8	212.3
विकास नगर	175.0	179.2
गोमती नगर	168.8	169.3
अलीगंज	162.8	207.3
व्यावसायिक		
चौक	264.8	187.6
चारबाग	207.4	211.4
आलमबाग	192.9	195.3
अमीनाबाद	179.7	203.9
औद्योगिक		
अमौसी	212.9	203.1

पीएम 2.5 मानक 60

स्थान	2016	2017
इंदिरा नगर	114.9	103.1
विकास नगर	87.5	93.8
गोमती नगर	82.1	89.9
अलीगंज	79.6	97.7
चौक	108.9	92.3
अमीनाबाद	78.4	113.4
आलमबाग	88.3	101.4
चारबाग	114.5	127.6
अमौसी	99.6	94.4

यह हैं सुझाव

- यातायात सुगम करने के लिए चौराहों की बनावट सही की जाए
- प्रमुख सड़कों व चौराहों को चौड़ा किया जाए
- सड़कें अतिक्रमण मुक्त की जाएं, फुटपाथ बनाए जाएं
- निजी भवनों में पार्किंग सुविधा हो
- पार्किंग शुल्क बढ़े ताकि वाहनों का प्रयोग कम हो
- सार्वजनिक परिवहन सुविधा शहर में बढ़ाई जाए
- यातायात व्यवस्था दुरुस्त हो
- समय-समय पर जागरूकता कार्यक्रम चलाए जाएं
- सड़क किनारे कूड़े की डंपिंग पर रोक लगे
- खाली जगहों पर पौधरोपण किया जाए
- सीएनजी स्टेशन बढ़ें ताकि पेट्रो उत्पादों की खपत कम हो
- बैट्री से संचालित वाहनों को बढ़ावा दिया जाए
- जेनरेटर की जगह सोलर एनर्जी को बढ़ावा दिया जाए
- टायर, सूखी पत्तियों, कूड़े को जलाने पर रोक लगे
- मेट्रो का विस्तार हो, लोग निजी वाहनों का प्रयोग कम करें।

2015 में नौवें स्थान पर था लखनऊ

2015 के प्रदूषित शहरों की सूची में दिल्ली का चौथा स्थान था। उस साल सूची में छह भारतीय शहर शामिल थे। इनमें दिल्ली से ऊपर पहले स्थान पर मुजफ्फरपुर, छठे स्थान पर आगरा, 7वें पर वाराणसी, 8वें स्थान पर कानपुर, 9वें पर लखनऊ और 18वें स्थान पर नारायणगंज रहा। 2015 में दिल्ली में पीएम 2.5 का सालाना स्तर 123 रहा।

2014 में सूची में शामिल नहीं था लखनऊ

2014 में चार भारतीय सबसे प्रदूषित शहरों में थे। इनमें दिल्ली का 7वां स्थान था। उस साल सबसे अधिक प्रदूषित शहर वाराणसी था। दिल्ली के बाद 11वें स्थान पर नारायणगंज, 15वें स्थान पर आगरा और 17वें स्थान पर गाजीपुर को जगह मिली थी। 2013 में इस सूची में सिर्फ चार भारतीय शहर थे। इनमें पहले पायदान पर वाराणसी, सातवें पर दिल्ली, 16वें पर आगरा और 19वें स्थान पायदान पर नारायणगंज रहा। 2012 में 12 भारतीय शहर सबसे प्रदूषित 20 शहरों में थे। खास बात यह थी कि इनमें दिल्ली का नाम नहीं था। यह अकेला ऐसा साल है जब दिल्ली प्रदूषित शहरों की सूची में शामिल नहीं हुआ। इस साल ग्वालियर, आगरा, रायपुर शीर्ष तीन स्थान पर थे। वहीं, 2011 में दो भारतीय शहर इसमें शामिल रहे। इनमें दूसरे स्थान पर दिल्ली जबकि आगरा तीसरे पायदान पर था। 2010 में दिल्ली का पहला स्थान था। इस साल भी प्रदूषित शहरों की इस सूची में दो ही भारतीय शहर दिल्ली और आगरा (पांचवां स्थान) थे।

ऐसे मापते हैं प्रदूषण

पार्टिकुलेट मैटर (पीएम) यानी प्रदूषण मापने का पैमाना, के मुताबिक जहां हवा का पीएम 2.5 (माइक्रोन) 60 होना चाहिए, वहीं दिल्ली में इसका स्तर 153 माइक्रोग्राम प्रति क्यूबिक मीटर था। इस लिहाज से दिल्ली में सांस लेना भी मुश्किल साबित हो सकता है। विशेष रूप से हार्ट, फेफड़े की बीमारी या अस्थमा से पीड़ित लोगों के लिए। वहीं, एक्यूआइ 0 से 50 के बीच होना चाहिए लेकिन दिल्ली में यह 400 से भी ऊपर पहुंच जाता है।

दैनिक जागरण जागरण सिटी
13 अप्रैल 2018 P-II

'पेटेंट कराकर सुरक्षित करें बौद्धिक संपदा'

जागरण संवाददाता, लखनऊ : सीएसआइआर-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान (आइआइटीआर) के सीआर कृष्णमूर्ति सेमिनार हॉल में बौद्धिक संपदा अधिकार जागरूकता एवं इंटरैक्टिव सत्र पर एक दिवसीय कार्यशाला का आयोजन किया गया।

कार्यशाला में बौद्धिक संपदा के विभिन्न पहलुओं जैसे पेटेंट, कॉपीराइट, ट्रेडमार्क औद्योगिक डिजाइन, भौगोलिक संकेत और व्यापार व उत्पादों की सुरक्षा और उचित उद्यम पर चर्चा की गई। सीएसआइआर-आइआइटीआर के निदेशक प्रो. आलोक धावन ने कार्यशाला का उद्घाटन किया। सीएसआइआर मुख्यालय के नवाचार संरक्षण इकाई (आइपीयू) के मुख्य वैज्ञानिक विशेषज्ञ चेतन कुमार और वरिष्ठ वैज्ञानिक गौरव कृष्णन ने विभिन्न विषयों पर व्याख्यान दिए। इंटरैक्टिव सत्र भी आयोजित किया गया जिसमें प्रतिभागियों के प्रश्नों के विशेषज्ञों ने उत्तर दिए। अनुसंधान योजना एवं प्रबंध व्यापार विकास विभाग के प्रमुख डॉ.के सी खुल्बे और संस्थान के आइपी समन्वयक ने कार्यशाला का संचालन किया।

NBT नवभारत टाइम्स
12 मई 2018 P-10

आईआईटीआर ने मनाया ओपन डे

■ एनबीटी, लखनऊ : भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान में (आईआईटीआर) में शुक्रवार को राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी दिवस का आयोजन किया गया। इस मौके पर छात्रों को विज्ञान के प्रति प्रोत्साहित किया गया। छात्रों को बताया गया कि पोखरण परमाणु परीक्षण 11 मई, 1998 को किया गया था। इस दिन कई स्कूल और कॉलेज के विद्यार्थियों के लिए संस्थान में खुला दिवस (ओपन डे) रहा। संस्थान के निदेशक प्रोफेसर आलोक धवन ने अपने संबोधन में कहा कि युवा वैज्ञानिक एवं छात्र विज्ञान में नई तकनीक की खोज कर देश को आगे बढ़ाने में अपना योगदान दे सकते हैं।

राष्ट्रीय सहारा
12 मई 2018 02

ब्रह्माण्ड के रहस्यों को जानने के लिए प्रौद्योगिकी का सतत विकास जरूरी

विज्ञान नगरी सहित विभिन्न संस्थानों में मना 'राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी दिवस', पोस्टर प्रतियोगिता, फिल्म शो व प्रश्नोत्तरी के माध्यम से बताये गये तकनीकी रहस्य

दैनिक जागरण जागरण सिटी
12 मई 2018 P-III

वैज्ञानिक संस्थानों ने मनाया राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी दिवस

भारतीय विष विज्ञान अनुसंधान संस्थान (आइआइटीआर) में जिज्ञासा कार्यक्रम के तहत युवा पीढ़ी को अनुसंधान एवं विकास की ओर आकर्षित करने हेतु 300 से अधिक छात्रों ने इनोवेशन एंड ट्रांसलेशनल रिसर्च केंद्र (सितार) का भ्रमण किया। सूर्या पब्लिक स्कूल, सुल्तानपुर, केंद्रीय विद्यालय अलीगंज व सीआरपीएफ स्कूल से आए इन विद्यार्थियों ने इनोवेशन सेंटर में आधुनिकतम अनुसंधान को देखा व वैज्ञानिकों से सवाल-जवाब किए। आंध्र प्रदेश मेडटेक जोन लिमिटेड के एमडी जितेंद्र शर्मा ने संस्थान द्वारा विकसित जल शोधन प्रौद्योगिकी 'ओ नीर' में रुचि दिखाई। वेंचर केटालिस्ट के प्रो.विनायक नाथ ने सतत विकास सुनिश्चित करने के लिए सफल स्टार्ट अप में प्रासंगिक प्रौद्योगिकियों की जानकारी दी। संस्थान के निदेशक प्रो. आलोक धावन ने कहा कि संस्थान के युवा वैज्ञानिक एवं छात्रों को इससे प्रेरणा मिलेगी।

भोपाल नवदुनिया 05
भोपाल, बुधवार 04 अप्रैल 2018

20 नई बस्तियों में जहरीले कचरे से पानी दूषित होने का खतरा, लिए नमूने

भोपाल। नवदुनिया प्रतिनिधि

यूनियन कार्बाइड के जहरीले कचरे से राजधानी की 20 नई रहवासी बस्तियों में भूमिगत पेयजल के दूषित होने की आशंका है। मंगलवार को भारतीय विष विज्ञान अनुसंधान संस्थान (आईआईटीआर) लखनऊ की तीन सदस्यीय टीम ने पानी की जांच के लिए नमूने लेना शुरू कर दिए। जांच रिपोर्ट 2 महीने बाद आएगी। सुप्रीम कोर्ट के निर्देश पर ये नमूने लिए जा रहे हैं। पूर्व में भी 20 बस्तियों के पानी की जांच की थी, वहां का पानी प्रभावित मिला था, इसके बाद वहां साफ पेयजल की व्यवस्था की थी।

आईआईटीआर की टीम डॉ. सत्यराम के नेतृत्व में भोपाल आई है। टीम के सदस्यों ने ग्रीन पार्क कॉलोनी से पहला नमूना लिया। इसके बाद संत

आईआईटीआर लखनऊ की तीन सदस्यीय टीम ने किया दौरा

नमूने लेते आईआईटीआर के सदस्य।

कंवरराम नगर, सीहोर नगर, रंभानगर, रिसालदार कॉलोनी और राजगढ़ कॉलोनी में पहुंचकर नमूने एकत्रित किए। बाकी की 15 बस्ती में द्वारका नगर, कृष्णा नगर, एकता नगर, फूटा मकबरा, धूलीचंद का बाग, न्यू कबाड़खाना, सुंदर नगर, शक्ति नगर, प्रताप नगर, लक्ष्मी नगर, चंदनगर, छोला मंदिर, निशातपुरा व एक अन्य बस्ती शामिल है। टीम इन बस्तियों से बुधवार को नमूने एकत्रित करेगी।

गैस पीड़ित संगठनों ने बताए, कोर्ट को प्रभावित बस्तियों के नाम

जिन बस्तियों से नमूने लिए जा रहे हैं उनके नाम भोपाल ग्रुप फॉर इंफरमेशन एंड एक्शन के पदाधिकारियों ने सुप्रीम कोर्ट को बताए हैं। पहले कभी भी इन बस्तियों के पानी की जांच लखनऊ की टीम ने नहीं की है। ग्रुप की संयोजिका रचना ढींगरा का कहना है कि नगर निगम व गैस राहत विभाग ने पानी की जांच नहीं की तो गैस पीड़ित संगठनों को सुप्रीम कोर्ट की शरण लेनी पड़ी।

राष्ट्रीय सहारा 6 जून 2018 02

विभिन्न सरकारी व गैरसरकारी संस्थाओं ने किया जागरूक, प्लास्टिक प्रदूषण के खिलाफ चलाया गया अभियान

जनमोर्चा
06 जून, 2018 03

संगीत पर्यावरणीय चेतना जगाने का माध्यम

पर्यावरण दिवस

» सीएसआईआर में मना विश्व पर्यावरण दिवस

स्वतंत्र भारत
6 जून, 2018 (7)

प्लास्टिक को करें अस्वीकार

दैनिक जागरण
05 जून, 2018 03

चारबाग व इंदिरा नगर सर्वाधिक प्रदूषित, शोर भी सबसे ज्यादा

सीएसआइआर- आइआइटीआर ने जारी की शहर के पर्यावरण की प्री मानसून रिपोर्ट

अमर उजाला
MY City
05 जून, 2018 III

इंदिरानगर और चारबाग इलाके की हवा सबसे ज्यादा जहरीली

प्रदूषण पर आईआईटीआर की मानसून पूर्व रिपोर्ट-2018 जारी

हवा साफ करने को चौराहों पर लगाए जाएं उपकरण

NBT
नवभारत टाइम्स
7 जून 2018 06

'संगीत और प्रकृति के मिलन से बचाया जा सकता है पर्यावरण'

आईआईटीआर में विश्व पर्यावरण दिवस पर हुई कार्यशाला।

■ एनबीटी, लखनऊ : 'संगीत और प्रकृति दोनों जीवन में पर्यावरणीय चेतना जगाने का काम करते हैं। संगीत सिर्फ एक संदेश संचार करने का जरिया ही नहीं बल्कि एक श्रोता की चेतना में गहराई तक किसी भी संदेश को बनाए रखने के लिए शक्तिशाली हथियार है। संगीत और प्रकृति के मिलन से पर्यावरण को बचाया जा सकता है।' यह कहना है ग्रैमी अवॉर्ड विजेता संगीतकार प्रोफेसर रिकी केज का। वह विश्व पर्यावरण दिवस पर भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान (आईआईटीआर) में प्लास्टिक प्रदूषण से निपटने के लिए 'म्यूजिक फॉर द प्लेनेट' कार्यक्रम में शामिल थे। उन्होंने संगीत से पर्यावरण को बचाने का संदेश दिया।

कार्यक्रम में संस्थान के निदेशक प्रोफेसर आलोक धावन, [illegible] मौजूद रहे। इस अवसर पर पिछले सप्ताह स्कूली बच्चों के लिए आयोजित 'प्लास्टिक प्रदूषण [illegible]' विषय पर [illegible] प्रतियोगिता के विजेताओं को पुरस्कृत भी किया गया।

म्यूजिक फॉर द प्लेनेट' व्याख्यान में बोले ग्रैमी अवॉर्ड विजेता संगीतकार प्रोफेसर रिकी केज

हिन्दुस्तान
लखनऊ LIVE
6 जून 2018 19

आईआईटीआर के सर्वेक्षण में वैज्ञानिकों को लेड और निकिल जैसी नुकसानदेह धातुएं मिली हैं

शहर की हवा में घुले जहरीले तत्व

हवा में घुला जहर

लेड की अधिक मात्रा से दिमाग संबंधी बीमारी का खतरा

दैनिक जागरण
6 जून 2018 06

विश्व पर्यावरण दिवस पर हुए विभिन्न कार्यक्रम

जासं, लखनऊ : शहर में विश्व पर्यावरण दिवस के अवसर पर मंगलवार को विविध कार्यक्रम हुए। कहीं रैली निकाली तो कहीं पेंटिंग के जरिए यह संदेश देने की कोशिश की गई कि पर्यावरण के लिए प्लास्टिक बेहद हानिकारक है। इसके लिए लोग आगे आएं। केवल सरकारी प्रयासों के भरोसे इस विकराल समस्या से पार पाना मुश्किल है।

आंचलिक विज्ञान नगरी एवं पर्यावरण निदेशालय द्वारा आयोजित दो दिवसीय कार्यक्रम के दूसरे दिन सुबह पद यात्रा निकाली गई। प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता में विभिन्न स्कूलों के लगभग 300 विद्यार्थियों ने भाग लिया। पर्यावरण पर आधारित चलचित्र के जरिए प्लास्टिक प्रदूषण के खतरों एवं उसके निदान पर एक नुक्कड़ नाटक आयोजित किया गया। विभिन्न प्रतियोगिताओं में विजयी विद्यार्थियों को पुरस्कृत किया गया।

राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान में पद्मश्री डॉ.अनिल प्रकाश जोशी ने व्याख्यान दिया। सीएसआइआर-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान में ग्रैमी अवॉर्ड विजेता, संगीतकार और एडजंक्ट प्रोफेसर, नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ एडवांस्ड स्टडीज, बेंगलुरु के प्रोफेसर रिकी केज ने व्याख्यान 'म्यूजिक फॉर द प्लैनेट' में कहा कि संगीत एक श्रोता की चेतना में गहराई तक उस संदेश को बनाए रखने के लिए शक्तिशाली भाषा है। संगीत और प्रकृति एक है।

प्रो0 पीयूषकान्तदीक्षित:
कुलपति:
आचार्य, पीएच.डी. (न्याय-न्याय), एम.ए. (संस्कृत)
Prof. Piyush Kant Dixit
Vice Chancellor
Acharya, Ph.D. (Navya-Nyaya), M.A. (Sanskrit)

उत्तराखण्ड-संस्कृत-विश्वविद्यालय:

पत्रांक: कुलपति-पत्रक
दिनांक: 10 मई 2018

सेवा में,
निदेशक
सी.एस.आई.आर.-भारतीय विष विज्ञान अनुसंधान संस्थान
विष विज्ञान भवन 31 महात्मा गाँधी मार्ग
पोस्ट बॉक्स सं0-80, लखनऊ-1

विषय :- पत्रिका की प्राप्ति।

महोदय,

आपके प्रतिष्ठित संस्थान की हिन्दी पत्रिका विष विज्ञान संदेश का अक्टूबर-मार्च, 2017-18 के अंक की प्रति प्राप्त हुई धन्यवाद। एक वैज्ञानिक संस्थान की पत्रिका होने के नाते इसमें वैज्ञानिक सामग्री का होना सहज स्वाभाविक है। बिना वैज्ञानिक चिन्तन, लेखन एवं मनन के कोई भी राष्ट्र उन्नति के सोपान नहीं चढ़ सकता।

आशा अपेक्षा है कि पत्रिका भविष्य में विज्ञान के उन दुरूहतम विषयों पर भी हिन्दी में विशेषांकों के प्रकाशन के माध्यम से सामग्री जुटायेगी जो वैज्ञानिक अनुसंधाताओं के साथ-साथ जन सामान्य की अभिरुचि ज्ञान एवं जीवन स्तर के उन्नयन में सहायक होकर वैज्ञानिक चेतना के प्रचार-प्रसार में उत्प्रेरक की भूमिका का निर्वहन करेगी।

इस कार्य हेतु मैं इससे जुड़े सम्पूर्ण सम्पादकीय मण्डल को हार्दिक बधाई एवं साधुवाद प्रेषित करता हूँ।

शुभकामनाओं सहित !

भवदीय
10.05.18
(प्रो. पीयूषकान्त दीक्षित)
कुलपति

केंद्रीय सड़क अनुसंधान संस्थान
(वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद)
Phones 26832173, 26831760, (EPBX) 26832325, 26832427, 26313007, 26918934
Fax: 91-11-26845943, 91-11-26830480
E Mail: rdresearch.crri@nic.in
CENTRAL ROAD RESEARCH INSTITUTE
COUNCIL OF SCIENTIFIC AND INDUSTRIAL RESEARCH
Delhi-Mathura Road, P.O. CRRI, New Delhi-110 025 (INDIA)

सं 20-6/13/18 -रा.भा.
दिनांक 16.05.2018

सेवा में,

श्री चन्द्र मोहन तिवारी,
हिंदी अधिकारी,
सीएसआईआर-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान,
विषविज्ञान भवन, 31, महात्मा गांधी मार्ग
पोस्ट बक्स न 80,
लखनऊ, उत्तर प्रदेश

विषय - 'विषविज्ञान संदेश' अंक 28 राजभाषा पत्रिका की प्राप्ति।

महोदय,

आपके संस्थान द्वारा प्रकाशित राजभाषा पत्रिका 'विषविज्ञान संदेश' की नवीनतम प्रति प्राप्त हुई। पत्रिका के अंक 28 की यह नवीनतम प्रति भेजने के लिए धन्यवाद।

यह हर्ष का विषय है कि आपके संस्थान में "पर्यावरण प्रदूषण" जैसे ज्वलंत विषय पर तीन दिवसीय वैज्ञानिक संगोष्ठी का सफल आयोजन किया गया। इसके उपलक्ष्य में "पर्यावरण प्रदूषण विशेषांक" के रूप में प्रकाशित पत्रिका का अंक 28 सराहनीय व आकर्षक प्रस्तुति है। पत्रिका में दिए गए लेख काफी रोचक तथा उपयोगी है। मृदा प्रदूषण एवं पर्यावरण प्रदूषण पर लिखे गए लेख जानकारी के स्तर पर बेहद ज्ञानवर्द्धक हैं। यह भी प्रसन्नता कि बात है कि आपके संस्थान द्वारा प्रकाशित छमाही राजभाषा पत्रिका 'विषविज्ञान संदेश' के विगत तीन अंकों को लगातार प्रथम पुरस्कार प्राप्त हुआ।

पत्रिका के प्रकाशन से जुड़े सभी अधिकारी एवं कर्मचारी बधाई के पात्र हैं। आशा है कि आप भविष्य में भी राजभाषा विषयक गतिविधियों से अवगत कराते रहेंगे।

भवदीय,
16-05-18
(संजय चौधरी)
हिंदी अधिकारी

सीएसआईआर - केन्द्रीय चर्म अनुसंधान संस्थान
CSIR - CENTRAL LEATHER RESEARCH INSTITUTE
(वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद् Council of Scientific & Industrial Research)
अडयार, चेन्नै, तमिलनाडु ADYAR, CHENNAI – 600 020, TAMIL NADU

पत्रांक: सीएलआरआई-हिंदी अनुभाग/पावती-पत्राचार/2018
दिनांक: 02/05/2018

To
Shri Chandra Mohan Tiwari
Hindi Officer
CSIR – Indian Institute of Toxicology Research
Vishvigyan Bhawan, 31, Mahatma Gandhi Marg, Post Box No. 80,
Lucknow – 226001
Uttar Pradesh

सेवा में
श्री चन्द्र मोहन तिवारी
हिंदी अधिकारी
सीएसआईआर – भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान
विषविज्ञान भवन, 31, महात्मा गाँधी मार्ग
पोस्ट बाक्स नं. 80, लखनऊ – 226001,
उत्तर प्रदेश

विषय : राजभाषा पत्रिका – **विषविज्ञान संदेश** अंक-28 की पावती देने के संबंध में।
संदर्भ : आपका पत्रांक आईआईटीआर/रा.भा पत्रिका/2/2018, दि.18/04/2018

महोदय,

आपके संस्थान की छमाही राजभाषा पत्रिका – **विषविज्ञान संदेश,** अंक-28, (अक्टूबर-मार्च, 2017-18) हमें प्राप्त हुई है। इस पर्यावरण प्रदूषण विशेषांक में प्रकाशित विभिन्न वैज्ञानिक, शोधपरक और चिंतनपरक आलेख बहुत ही रोचक और सराहनीय हैं। साथ ही, यह जानकर हमें अत्यंत प्रसन्नता हुई है कि **विषविज्ञान संदेश** के विगत तीन अंकों को नराकास, लखनऊ द्वारा लगातार प्रथम पुरस्कार मिला है। यह उपलब्धि आपकी निष्ठा एवं प्रयासों का फल है। आपके संपादक मंडल को हमारी शुभकामनाएँ। इसके अतिरिक्त, 11-13 अक्टूबर 2017 के दौरान **पर्यावरण प्रदूषण : चुनौतियाँ एवं रणनीतियाँ** विषय पर आयोजित अंतर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक संगोष्ठी हिंदी में वैज्ञानिक अभिव्यक्ति को प्रोत्साहन देने का एक सफल प्रयास है।

आशा है कि आप भविष्य में भी अपनी छमाही राजभाषा पत्रिका में विभिन्न वैज्ञानिक विषयों से संबंधित आलेखों से पाठकों को सदैव सूचना एवं प्रेरणा प्रदान करते रहेंगे।

सादर,

भवदीय
02/5/18
(दिनेश कल्याणम)
हिंदी अधिकारी

JAMIA MILLIA ISLAMIA
(A Central University by an act of Parliament)
Maulana Mohammad Ali Jauhar Marg, New Delhi-110025
Tel.: 26984650, 26985180, Fax: 00-91-11-26981232 Email: vc@jmi.ac.in | Web: jmi.ac.in
जामिया मिल्लिया इस्लामिया
Professor Talat Ahmad
FNA, FASc, FNASc, J.C. BOSE Fellow
Vice Chancellor
प्रोफेसर तलत अहमद
कुलपति
(ACCREDITED "A" GRADE BY NAAC)

फा.सं.10/पीसीओ/जामि/2018/1927
दिनांक: 01.06.2018

महोदय,

आपके पत्र सं. आईआईटीआर/रा.भा./2/2017 दिनांक 18.04.2018 के साथ राजभाषा पत्रिका '**विषविज्ञान संदेश**' का अंक-28 प्राप्त हुआ। पत्रिका के विगत अंकों (23-24, 25 एवं 26) के लिए लगातार प्रथम पुरस्कार मिलना सम्मानजनक है। पत्रिका का 'पर्यावरण प्रदूषण विशेषांक' पर्यावरण अध्ययन की दृष्टि से सराहनीय है। पत्रिका के इस अंक की प्रति भेजने के लिए आभार। पत्रिका नित नई ऊँचाईयाँ प्राप्त करे।

हार्दिक शुभकामनाएं।

(प्रो. तलत अहमद)

चन्द्र मोहन तिवारी
हिंदी अधिकारी
वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद
विषविज्ञान भवन, 31, महात्मा गांधी मार्ग
पोस्ट बाक्स न 80,
लखनऊ, उ.प्र., भारत

National Metallurgical Laboratory

सं०रा.धा.प्र./20/09/पत्राचार दिनांक : 01/05/2018

सेवा में,
श्री चन्द्र मोहन तिवारी
हिन्दी अधिकारी
सीएसआईआर-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान
वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद
विषविज्ञान भवन, 31, महात्मा गांधी मार्ग,
पोस्ट बाक्स न०-80,
लखनऊ-226001 (उत्तर प्रदेश)

विषय : राजभाषा पत्रिका "विषविज्ञान संदेश" अंक-28 (अक्टूबर-मार्च, 2017-18) की प्राप्ति।

महोदय,

सीएसआईआर-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ की राजभाषा पत्रिका "विषविज्ञान संदेश" अंक-28 (अक्टूबर-मार्च, 2017-18) की प्राप्ति हुई, धन्यवाद।

हमें यह जानकर अत्यंत प्रसन्नता की अनुभूति हो रही है कि नराकास, लखनऊ द्वारा आपकी राजभाषा पत्रिका "विषविज्ञान संदेश" के विगत तीन अंकों (23-24, 25 एवं 26) को लगातार 'प्रथम' पुरस्कार से सम्मानित किया गया। इसके लिये आप सभी को हार्दिक बधाई।

पत्रिका का कलेवर उच्चकोटि का है तथा इसकी पाठ्य-सामग्री आमलोगों के लिये सहज, सुगम एवं ज्ञानवर्धक है। प्रस्तुत पत्रिका राजभाषा हिन्दी में है तथा यह अंक पर्यावरण प्रदूषण विशेषांक पर आधारित है जो जनसंपर्क के लिये अत्यंत उपयोगी, सराहनीय एवं प्रेरक है। पत्रिका प्रकाशन से जुड़े सभी लोगों को मैं हार्दिक धन्यवाद सम्प्रेषित करता हूँ।

आशा है कि इसी तरह राजभाषा हिन्दी को आमजन तक पहुँचाने में आपका संस्थान सफलता के नये क्षितिज को छूएगा।

पत्रिका भेजने के लिये बहुत-बहुत धन्यवाद।

भवदीय,
(डॉ० पुरुषोत्तम कुमार)
वरिष्ठ हिन्दी अधिकारी

केन्द्रीय भवन अनुसंधान संस्थान, रुड़की
CENTRAL BUILDING RESEARCH INSTITUTE
(A CONSTITUENT ESTABLISHMENT OF CSIR)
ROORKEE 247 667, U.A. (INDIA)

संख्या: हिं०/प्रयोगशालाएं/2018 दिनांक 31 मई, 2018

श्री चन्द्र मोहन तिवारी,
हिन्दी अधिकारी,
भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान,
विषविज्ञान भवन, 31 महात्मा गांधी मार्ग,
लखनऊ-226001

विषय : छमाही राजभाषा पत्रिका 'विषविज्ञान संदेश' की प्राप्ति।

महोदय,

आपके पत्र संख्या, आईआईटीआर/ रा.भा.पत्रिका/2/2018, दिनांक 18 अप्रैल, 2018 के साथ प्रेषित छमाही राजभाषा पत्रिका 'विषविज्ञान संदेश' की प्रति प्राप्त हुई है, जिसके लिए आपका धन्यवाद। पत्रिका को आपने पर्यावरण प्रदूषण विशेषांक के रूप में प्रकाशित किया है तथा इसमें तकनीकी लेखों के साथ-साथ वैज्ञानिक शब्दावली भी प्रकाशित की है जो कि एक प्रशंसनीय कार्य है।

आशा है कि भविष्य में भी आप इसी प्रकार से राजभाषा संबंधी गतिविधियों से हमें समय-समय पर अवगत कराते रहेंगे।

भवदीय
(मेहर सिंह)
हिंदी अधिकारी

सीएसआईआर - राष्ट्रीय रासायनिक प्रयोगशाला
(वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद)
डॉ. होमी भाभा मार्ग, पुणे - 411 008, भारत
CSIR - NATIONAL CHEMICAL LABORATORY
(Council of Scientific & Industrial Research)
Dr. Homi Bhabha Road, Pune - 411 008, India

सं.3-हिन्दी(राजभा)2007 दि: 4/5/2018

सेवा में,

श्री चन्द्र मोहन तिवारी
हिन्दी अधिकारी
सीएसआईआर-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान (CSIR-IITR)
विषविज्ञान भवन, 31 महात्मा गाँधी मार्ग
पोस्ट बाक्स नं. 80,
लखनऊ-226 001 (उ. प्र.)

महोदय,

आपके संस्थान की राजभाषा पत्रिका "विषविज्ञान संदेश" के अंक 28 (अक्टूबर-मार्च, 2017-18) की प्राप्ति हुई, जिसके लिए धन्यवाद एवं पत्रिका को न. रा. का. स. लखनऊ द्वारा प्रथम पुरस्कार प्राप्त करने हेतु अनेकानेक बधाईयां।

उक्त पत्रिका का यह अंक आकर्षक साज-सज्जा तथा संस्थान से संबंधित वैविध्यपूर्ण जानकारियों से परिपूर्ण है। निश्चित रूप से यह पत्रिका राजभाषा हिन्दी के व्यापक स्तर पर प्रचार-प्रसार का सशक्त माध्यम है। वैज्ञानिक लेखों का हिन्दी में प्रकाशित करना निश्चित तौर पर एक सराहनीय कार्य है, जो विज्ञान के क्षेत्र में राजभाषा हिन्दी के विकास में सहायक होगा।

पत्रिका के सफल संपादन हेतु संपादक मंडल को बधाई एवं पत्रिका की उत्तरोत्तर प्रगति एवं उज्ज्वल भविष्य हेतु हार्दिक शुभकामनाएं।

भवदीय,
(डॉ. श्रीमती स्वाति चड्ढा)
हिन्दी अधिकारी

Communication Channels | NCL Level DID : 2588 | NCL Board No : +91-20-25902000, +91-20-25893300, +91-20-25893400 | EPABX | FAX: Director's Office : +91-20-25902601, COA's Office : +91-20-25902660, SPO's Office : +91-20-25902664 | WEBSITE www.ncl-india.org

---

सीएसआईआर-भारतीय रासायनिक प्रौद्योगिकी संस्थान
हैदराबाद - 500 007 भारत
CSIR - Indian Institute of Chemical Technology
Hyderabad - 500 007 INDIA
(वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद)
(COUNCIL OF SCIENTIFIC & INDUSTRIAL RESEARCH)

सं. भा.रा.प्रौ.सं./हिं.अ./पावती/2018 दिनांक / Dated 14.05.2018

सेवा में

श्री चन्द्र मोहन तिवारी
हिन्दी अधिकारी
सीएसआईआर- भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान
विषविज्ञान भवन, 31, महात्मा गांधी मार्ग
पोस्ट बाक्स नं. 80, लखनऊ - 226 001, उ.प्र., भारत

विषय: राजभाषा पत्रिका "विषविज्ञान संदेश" अंक-28वाँ की पावती के संबंध में।

महोदय/महोदया

आपके संस्थान द्वारा प्रकाशित राजभाषा पत्रिका "विषविज्ञान संदेश" का 28वाँ अंक की प्रति पत्र संख्या आईआईटीआर/रा.भा.पत्रिका/2/2018 दिनांक 18 अप्रैल, 2018 के साथ प्राप्त हुई, धन्यवाद। राजभाषा पत्रिका "विषविज्ञान संदेश" को विगत तीन अंकों (23-24, 25 एवं 26) को लगातार नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, (कार्यालय-3), लखनऊ द्वारा प्रथम पुरस्कार प्राप्त हुआ इसके लिए आपको बहुत-बहुत बधाई।

पत्रिका में प्रकाशित "पर्यावरण शिक्षा के बिना पर्यावरण संरक्षण असंभव, प्राकृतिक स्रोतों की जैव-विविधता एवं पारिस्थितिकी पर प्रदूषण का कुप्रभाव, वायु प्रदूषण एवं समाधान, कार्बोनेट युक्त जल: वरदान या अभिशाप एवं मृदा प्रदूषण : प्रमुख स्रोत, प्रभाव रोकथाम एवं निवारण" आदि वैज्ञानिक लेख अत्यंत रोचक व ज्ञानवर्धक है।

आशा करते हैं कि आप भविष्य में हमें संस्थान/पत्रिका की हिंदी संबंधी गतिविधियों से निरंतर अवगत कराते रहेंगे।

भवदीय
(डॉ. एम. नसीम)
वरिष्ठ हिन्दी अधिकारी

TARNAKA, UPPAL ROAD, HYDERABAD - 500 007, Telangana State, INDIA
दूरभाष / TELEPHONE: 27160123 (10 लाइनें / 10 Lines)
www.iictindia.org निदेशक / Director : Fax : 91-40-27160387 | COA : Fax : 91-40-27193198

राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान
national institute of oceanography

पत्र संख्या: 1/2/2010/रा.भा. दिनांक: 27/07/18

सेवा में,
श्री चन्द्र मोहन तिवारी, हिन्दी अधिकारी,
सीएसआईआर-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान,
विषविज्ञान भवन, 31, महात्मा गाँधी मार्ग,
पो.बॉ.नं. 80, लखनऊ-226001,

विषय: आपके द्वारा भेजी गई राजभाषा गृह पत्रिका "विषविज्ञान संदेश" की सधन्यवाद पावती।

आपके संस्थान की गृह पत्रिका "विषविज्ञान संदेश" का 27वां अंक पत्र संख्या आईआईटीआर/रा.भा.पत्रिका/2/2018 के साथ प्राप्त हुई। धन्यवाद। पत्रिका का मुख्य पृष्ठ, साज सज्जा बहुत आकर्षक है। संपादक मण्डल को हार्दिक शुभकामनाएं।

पत्रिका में प्रकाशित निम्नलिखित आलेख रोचक एवं सूचनापरक लगे।

1. पर्यावरण प्रदूषण एवं भौतिक स्वास्थ्य।
2. शहरी वायु प्रदूषण और लखनऊ में इसका स्तर।
3. चुंबकीय एवं विद्युत क्षेत्र एवं परिवेश।
4. विषविज्ञान में नवीनताएं।

आपके द्वारा "विषविज्ञान" का नियमित प्रकाशन हिंदी के प्रचार-प्रसार की दिशा में निश्चित ही एक सार्थक एवं सराहनीय प्रयास है। पत्रिका की ई-कॉपी या पी.डी.एफ. आपकी वेबसाइट पर उपलब्ध करा दिया जाए तो इसे अधिकाधिक पाठकों तक पहुंचा सकते हैं। पत्रिका के सफल प्रकाशन हेतु आपको शुभकामनाएं। हम इसके उज्ज्वल भविष्य की कामना करते हुए पत्रिका भेजने हेतु पुनः आपका आभार प्रकट करते हैं।

भवदीय,

(डॉ. राकेश शर्मा)
हिन्दी अधिकारी
ई-मेल: anakash@nio.org

राष्ट्रीय अंतर्विषयी विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी संस्थान
NATIONAL INSTITUTE FOR INTERDISCIPLINARY SCIENCE AND TECHNOLOGY
वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद | Council of Scientific and Industrial Research
इंडस्ट्रियल इस्टेट पी. ओ. पाप्पनंकोड, तिरुवनंतपुरम, भारत - 695 019 | Industrial Estate P.O. Pappanamcode Thiruvananthapuram, India-695 019

सं 105(26)/17-रा.भा. दिनांक - 23.05.2018

सेवा में

डॉ. चन्द्रमोहन तिवारी
हिंदी अधिकारी
सीएसआईआर- भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान
विषविज्ञान भवन, 31,महात्मा गाँधी मार्ग
पोस्ट बॉक्स सं. 80, लखनऊ -226001

विषय:- संस्थान की गृह पत्रिका "विषविज्ञान संदेश" के नए अंक की प्राप्ति।

महोदय,

पर्यावरण प्रदूषण विशेषांक के रूप में प्रकाशित संस्थान की गृह पत्रिका "विषविज्ञान संदेश" का नया अंक हमें प्राप्त है। यह अत्यंत खुशी की बात है कि "विषविज्ञान संदेश" के पिछले तीन अंकों को नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति,(कार्यालय-3) लखनऊ की तरफ से लगातार प्रथम पुरस्कार प्राप्त है। पर्यावरण प्रदूषण से समग्र देश की जनता के लिए इसमें प्रकाशित सभी लेख निःसंदेह उपयोगी होंगे और पाठक इससे प्राप्त जानकारी से स्वयं को प्रदूषण की विभीषिका से बचा सकेंगे। पत्रिका का वेबसाइट पर उपलब्ध कराना अत्यंत सराहनीय कार्य है, क्योंकि यह सब की पहुंच को आसान बनाता है। पत्रिका के निरंतर प्रकाशन के लिए हार्दिक शुभ कामनाएं।

आशा है भविष्य में भी आप इसी प्रकार अपने संस्थान की राजभाषा गतिविधियों से हमें अवगत कराते रहेंगे।

सादर,

(रश्मी देवी)
हिंदी अधिकारी

Tel: 91-471-2515 322/330/225/385/340/314/2535572 Fax: 91-471-2490839 (COA), 2491712 (Dir)
Email: ... Website: http://www.niist.res.in

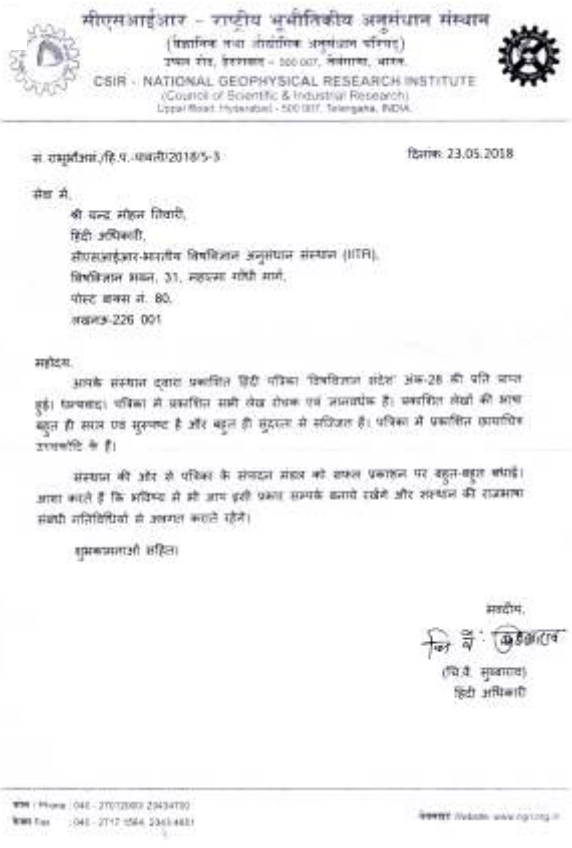

सीएसआईआर - राष्ट्रीय भूभौतिकीय अनुसंधान संस्थान
(वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद)
उप्पल रोड, हैदराबाद - 500 007, तेलंगाना, भारत
CSIR - NATIONAL GEOPHYSICAL RESEARCH INSTITUTE
(Council of Scientific & Industrial Research)
Uppal Road, Hyderabad - 500 007, Telangana, INDIA.

सं. राभूभौअसं./हि.प.-पावती/2018/5-3 दिनांक: 23.05.2018

सेवा में,
श्री चन्द्र मोहन तिवारी,
हिंदी अधिकारी,
सीएसआईआर-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान (IITR),
विषविज्ञान भवन, 31, महात्मा गाँधी मार्ग,
पोस्ट बाक्स नं. 80,
लखनऊ-226 001

महोदय,

आपके संस्थान द्वारा प्रकाशित हिंदी पत्रिका 'विषविज्ञान संदेश' अंक-28 की प्रति प्राप्त हुई। धन्यवाद। पत्रिका में प्रकाशित सभी लेख रोचक एवं ज्ञानवर्धक हैं। प्रकाशित लेखों की भाषा बहुत ही सरल एवं सुस्पष्ट है और बहुत ही सुंदरता से सज्जित है। पत्रिका में प्रकाशित छायाचित्र उत्कृष्ट हैं।

संस्थान की ओर से पत्रिका के संपादक मंडल को सफल प्रकाशन पर बहुत-बहुत बधाई। आशा करते हैं कि भविष्य में भी आप इसी प्रकार संपर्क बनाये रखेंगे और संस्थान की राजभाषा संबंधी गतिविधियों से अवगत कराते रहेंगे।

शुभकामनाओं सहित।

भवदीय,

(वि.वै. सुब्बाराव)
हिंदी अधिकारी

फोन : Phone : 040 - 27012000/ 23434700
फैक्स Fax : 040 - 2717 1564, 23434651
वेबसाइट Website: www.ngri.org.in

oKkfud 'kCnkoyh

Access	पहुँच, प्रवेश, पैठ, अभिगम
Acellular	अकोशिकीय
Adsorption	अधिशोषण
Agglomerate	एकत्रित, संकुलित
Analysis	विश्लेषण
Bacteriophage	जीवाणुभोजी
Biodegradation	जैव–निम्नीकरण
Biometry	जीव सांख्यिकी
Biotoxicology	जीव विषविज्ञान
Bye product/Byproduct	उपजात, उपोत्पाद
Carcinoma	नासूर, कर्करोग
Carpologist	फल विज्ञानी
Centrifugal force	अपकेंद्री बल
Centripetal force	अभिकेंद्री बल
Chemotherapy	रसायन चिकित्सा
Dorsal aorta	पृष्ठमहाधमनी
Drug interaction	औषध अन्योन्य क्रिया/पारस्परिक क्रिया
Dysorexia	अपच
Dyspnea	कष्टश्वास
Diffusion	विसरण, विसार
Edema	शोथ, त्वचा शोथ/सूजन
Electrochemical	विद्युत रसायनिक
Electrophoresis	विघुत कण संचलन
Endoparasite	अंतः परजीवी
Exoparasite	बाह्य परजीवी
Flagella	कशाभ, कशाभिका
Foetotoxicity	गर्भाविषालुता
Free Radical	मुक्त मूलक
Functional	कार्यात्मक, क्रियात्मक
Fungitoxic	कवकाविषी/कवक विषाक्त
Galvanometer	धारामापी
Gastrointestinal	जठरान्त्र
Glucose Tolerance Test	ग्लूकोज सह्यता परीक्षण
Glycosuria	शर्करामेह
Gravimetric analysis	भारात्मक विश्लेषण
Green house	पौधा घर
Haematology	रुधिर विज्ञान, रक्त विज्ञान
Halogen carrier	हैलोजेन वाहक
Heat Resistant	ऊष्मा प्रतिरोधक
Hemiplegia	पक्षाघात
High Emission	उच्च उत्सर्जन
High Precision	उच्च परिशुद्धता
Highly Toxic	अति विषैला
Histology	ऊतक विज्ञान
Histochemistry	ऊतक रसायन विज्ञान/शास्त्र
Ichthyology	मत्स्य विज्ञान
Identical	अभिन्न, समरूप
Image Interference	प्रतिबिंब व्यतिकरण
Immunity	रोधक्षमता, प्रतिरक्षा
Incurable	असाध्य
Joint	जोड़, संधि
Jugular canal	युज्ञनाल
Junction capacitance	संधि धारिता
Journal	दैनिकी, पत्रिका
Karyokinesis	सूत्री विभाजन
Katharometer	गैस ऊष्मा चालकतामापी
Kemp	दो युक्त उर्ण तन्तु
Kinetic genesis	गतिजविकास
Kryoscopy	निम्नतापिकी
Labine muscle	ओष्ठीय पेशी
Lacrimal duct	अश्रुवाहिनी
Lateral axis	पार्श्व अक्ष

Leguminous crop	फलीदार फसल
Leukaemia	अतिश्वेत कोशिका रक्तता
Macerate	भिगोकर नरम करना, गलाना
Magnetism	चुम्बकत्व
Malign	घातक
Mammal	स्तनधारी
Melanocyte	मेलेनिन कोशिका
National Park	राष्ट्रीय उद्यान
Navigation	संचालन, समुद्री परिवहन
Necrotic	ऊतकक्षयी
Negotiable	तय करना
Nephropathy	वृक्क विकृति
Obligatory parasite	अनिवार्य परजीवी
Observatory	वेधशाला
Oesophagus	ग्रासिकानली
Omnivorous	सर्वभक्षी
Opaque	अपारदर्शी
Paediatrics	बाल चिकित्सा
Palaeoentomology	पुराकीट विज्ञान
Parasitologist	परजीव विज्ञानी
Parthenogenesis	अनिकेषजनन
Pericarp	फलभित्ति, परिस्तर
Permeable	पारगम्य, प्रवेश्य
Quadrilateral	चतुर्भुज
Quadripedal	चतुष्पादी
Qualitative analysis	गुणात्मक विश्लेषण
Quantitative analysis	मात्रात्मक विश्लेषण
Questionnaire	प्रश्नावली, प्रश्नों का समूह
Radioactive decay	रेडियोसक्रिय क्षय
Rationale	मूलाधार, तर्काधार
Recombient cell	पुनर्योगज कोशिका
Refractive index	अपवर्तनांक
Regulator gene	नियामक जीन
Sanctuary	अभयारण्य, शरणस्थल
Saprotrophic	मृतपोषी, पूतिपोषी
Scatter	बिखेरना, प्रकीर्ण, प्रकीर्णन
Schizophrenia	खंडित मनस्कता
Sebaceous gland	वसाग्रन्थि, तैलग्रन्थि
Tackimeter	श्लेषितामापी
Taxonomic	वर्गीकरणात्मक, वर्गिकीय
Tentaculozooid	स्पर्शजीवक
Therapeutist	चिकित्सक, उपचारकर्ता
Toxicokinetics	विष–बलगतिकी
Unilocular	एककोष्ठी
Unimolecular	एकाणविक
Universal	सार्वभौमिक, विश्वव्यापी
Upwards	ऊर्ध्वगामी, उर्ध्वमुखी
Vascular	संवहनी
Vegetational	वानस्पतिक
Venomous	जीविषालु
Vermicide	कृमिनाशी
Vesicular	छालेदार, फफोलेदार, पुटिकामय,
Water-fall	जल–प्रपात
Weathering	अपक्षय, अपक्षयण
White ant	दीमक
Wicker	लचीला, टहनी, तीली, खपची
Wind-screen	वायुरोधी
Xanthophylls	पर्णपीत
Xerospore	शुष्क बीजाणु
Xylocarpous	काष्ठ फलीय
Yatch	क्रीड़ा नौका, पमोदत्तरी
Yeanling	मेमना
Yearly	वार्षिक, सालाना
Zodiac	राशिचक्र
Zoobiotic	प्राणिजीवी
Zoogeography	प्राणी–भूगोल
Zoophobia	प्राणि भीति, प्राणि विमुखता
Zygotic	युग्मनज

विषाक्तता परीक्षण:
जीएलपी अनुरुप सुविधा

सीएसआईआर–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान (सीएसआईआर–आईआईटीआर), वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद् की एक घटक प्रयोगशाला है। इसे विषाक्तता एवं उत्परिवर्तजनियता अध्ययन के लिए जून, 2014 में जीएलपी अनुपालन प्रमाणपत्र प्राप्त हुआ है। जलीय एवं स्थलीय जीवों पर पर्यावरण विषाक्तता अध्ययन तथा विश्लेषणात्मक एवं नैदानिक रसायन परीक्षण को सम्मिलित करने से कार्यक्षेत्र भी विस्तृत हो गया है। यह सीएसआईआर परिवार की एक मात्र प्रयोगशाला है, जिसे यह अंतरराष्ट्रीय मान्यता प्राप्त हुई है। जीएलपी प्रमाणीकरण दर्शाता है कि सीएसआईआर–आईआईटीआर में एस.ओ.पी. संचालित सक्षम एवं अच्छी तरह से अनुभवी कर्मी तथा व्यवस्थित प्रलेखन के माध्यम से उच्च गुणवत्तायुक्त परीक्षण होता है। सीएसआईआर–आईआईटीआर में जीएलपी प्रयोगशालाएं ओईसीडी के दिशा–निर्देशों के अनुसार डिज़ाइन की गई हैं, जो कि वैश्विक स्तर पर नियामक प्रस्तुतीकरण हेतु प्रयोगशाला के आंकड़ों को विश्वसनीयता और गुणवत्ता प्रदान करती हैं।

गुड लैबोरेटरी प्रैक्टिस (जीएलपी) संगठनात्मक प्रक्रिया के साथ संबद्ध अंतरराष्ट्रीय स्तर पर स्वीकृत एक गुणवत्ता प्रणाली है, जिसमें प्रीक्लीनिकल स्वास्थ्य और पर्यावरण सुरक्षा अध्ययन की योजना बनाई जाती है, पूर्ण की जाती है, अनुवीक्षण होता है, दर्ज की जाती हैं, संग्रहीत व रिपोर्ट तैयार की जाती हैं। उत्पाद बाजार में लांच करने से पहले राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय नियामक प्राधिकरण/एजेंसियों को सभी नए उत्पादों के सुरक्षा मूल्यांकन आंकड़े (डाटा) की आवश्यकता होती है। जीएलपी एक ऐसी प्रणाली है, जिसे आर्थिक सहयोग और विकास संगठन (ओईसीडी) द्वारा विकसित किया गया है तथा इस प्रकार के सुरक्षा लक्ष्यों को प्राप्त करने हेतु इसे उपयोग किया जाता है।

सीएसआईआर–आईआईटीआर जीएलपी सुविधा को फार्मा, बायोटेक और लाइफ साइंसेज के क्षेत्र में उत्पादों की सुरक्षा हेतु इन सिलिको, इन विवो तथा इन विट्रो मॉडल सक्षम बनाते हैं। विषविज्ञान के क्षेत्र में वृहत ज्ञान एवं जीएलपी परीक्षण सुविधा में उन्नत प्रौद्योगिकी से परिपूर्ण हमारी अनुभवी टीम विषाक्तता एवं जैवसुरक्षा के क्षेत्र में वैश्विक आवश्यकताओं के प्रति अपने मिशन को समझने तथा पूर्ण करने के लिए प्रतिबद्ध है। यह सुविधा इकोटॉक्सिकोलोजी के अध्ययन हेतु जीएलपी मान्यता प्राप्त एकमात्र सरकारी प्रयोगशाला है।

ओईसीडी के कार्यकारी समूह में भारत को, जीएलपी हेतु पूर्ण अनुपालन सदस्य का दर्जा प्राप्त है। अतः रसायन/फार्मूलेशन, कीटनाशकों, औषधि सौंदर्य प्रसाधन उत्पादों, खाद्य उत्पादों, और फूड एडिटिव्स हेतु आईआईटीआर में जीएलपी परीक्षण सुविधा के माध्यम से तैयार विषाक्तता/जैवसुरक्षा रिपोर्ट, 90 से अधिक देशों में मान्य है जिनमें 34 ओईसीडी सदस्य देश शामिल हैं।

जीएलपी प्रमाणित अध्ययन:

नियामक आवश्यकताओं को पूर्ण करने हेतु विभिन्न प्रायोजकों के लिए जीएलपी अनुपालन प्रमाणपत्र के अनुसार निम्नलिखित अध्ययन किए जाते हैं।

- एक्यूट ओरल विषाक्तता अध्ययन
- एक्यूट डर्मल विषाक्तता अध्ययन
- सब–एक्यूट ओरल विषाक्तता अध्ययन (14 या 28 दिन)
- सब–एक्यूट डर्मल विषाक्तता अध्ययन (14 या 28 दिन)
- सब–क्रोनिक ओरल विषाक्तता अध्ययन (90 दिन)
- सब–क्रोनिक डर्मल विषाक्तता अध्ययन (90 दिन)
- क्रोनिक ओरल विषाक्तता अध्ययन (180 दिन)
- माइक्रोन्यूक्लियस एसे (इन विट्रो तथा इन वीवो)
- गुणसूत्र विपथन अध्ययन (इन विट्रो तथा इन वीवो)
- प्राथमिक त्वचा जलन (इरीटेशन) परीक्षण
- त्वचा संवेदीकरण परीक्षण
- जलीय एवं स्थलीय जीवों में पर्यावरणीय विषाक्तता अध्ययन (केंचुआ तथा मछली)

विषाक्तता अध्ययन हेतु रसायनों के प्रकार

- औद्योगिक रसायन
- एग्रोकेमिकल
- कीटनाशक
- नए रासायनिक तत्व (एनसीई)
- फार्मास्यूटिकल्स (छोटे अणु, बायोसिमिलर्स, बायोथेरेप्यूटिक्स, वैक्सीन एवं रीकाम्बिनेंट डीएनए उत्पाद आदि)
- प्रसाधन सामग्री
- फीड एवं खाद्य ऐडिटिव
- नैनो मटीरीअल्स
- चिकित्सा उपकरण
- बायोमेडिकल इम्प्लान्ट्स
- जंतु चिकित्सा औषधि
- न्यूट्रास्यूटिकल्स
- आयुष उत्पाद

अध्ययन हेतु परीक्षण प्रणाली

- रैट (विस्टार)
- माउस (स्विस अलबिनो; सीडी–1; एस के एच–1; सी57 बीएल/6; बाल्ब/सी)
- रैबिट (न्यूज़ीलैंड व्हाइट)
- गिनी पिग (हर्टले)
- जलीय एवं स्थलीय जीव
- सेल लाईन्स (वी79, सीएचओ)

जीएलपी अनुपालन के अंतर्गत उपलब्ध अध्ययन

- एक्यूट अंतः श्वसनीय विषाक्तता परीक्षण
- श्लेष्मा झिल्ली इरीटेशन परीक्षण
- सामान्य प्रजनन क्षमता की जांच–परख परीक्षण
- टेराटोजेनीसिटी परीक्षण
- एक पीढ़ी की प्रजनन विषाक्तता
- दो पीढ़ी की प्रजनन विषाक्तता
- दो वर्ष की कैंसरजननशीलता का अध्ययन
- जलकनिया में पारिस्थितिक विषाक्तता अध्ययन

विषाक्तता परीक्षण: जीएलपी अनुरुप सुविधा

परीक्षण सुविधा प्रबंधक

सीएसआईआर-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान
गढ़ेरू परिसर, सरोजनी नगर औद्योगिक क्षेत्र
लखनऊ -226008, भारत

ईमेल: tfm.glp@iitr.res.in
फोन: +91-522-2476091

सीएसआईआर-भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान
CSIR-INDIAN INSTITUTE OF TOXICOLOGY RESEARCH

सीएसआईआर-आईआईटीआर, लखनऊ, दक्षिण पूर्व एशिया में विषविज्ञान के क्षेत्र में एकमात्र बहुउद्देशीय शोध संस्थान है, जिसका आदर्श वाक्य है

"पर्यावरण, स्वास्थ्य की सुरक्षा एवं उद्योग के लिए सेवा"

अनुसंधान और विकास के क्षेत्र

- भोजन, औषधि और रसायन विषविज्ञान
- पर्यावरण विषविज्ञान
- नियामक विषविज्ञान
- नैनो मैटीरियल विषविज्ञान
- प्रणाली विषविज्ञान एवं स्वास्थ्य जोखिम मूल्यांकन

उद्योगों और स्टार्टअप के साथ शोध एवं विकास में प्रतिभागिता

- सेंटर फार इनोवेशन एण्ड ट्रांसलेशनल रिसर्च (सितार)

प्रस्तावित सेवाएं

- जीएलपी प्रमाणित पूर्व-नैदानिक विषाक्तता अध्ययन
- एनएबीएल आईएसओ/आईईसी 17025/2005 द्वारा मान्यता प्राप्त
- नवीन रसायनों का सुरक्षा/विषाक्तता मूल्यांकन
- जल गुणवत्ता मूल्यांकन और अनुवीक्षण
- विश्लेषणात्मक सेवाएं
- पर्यावरण अनुवीक्षण एवं प्रभाव आंकलन
- रसायनों/उत्पादों के बारे में सूचना

मान्यता

- वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान संगठन एस.आई.आर.ओ.
- उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (जल और वायु)
- भारतीय फैक्ट्री अधिनियम (पेय जल)
- भारतीय मानक ब्यूरो (संश्लेषित डिटर्जेंट)
- भारतीय खाद्य संरक्षा एवं मानक प्राधिकरण (एफएसएसएआई)

उपलब्ध/विकसित प्रौद्योगिकी

- ओनीर–पेयजल हेतु एक अनोखा समाधान
- पोर्टेबल जल विश्लेषण किट
- पर्यावरण एवं मानव स्वास्थ्य हेतु सचल प्रयोगशाला
- सरसों के तेल में आर्जीमोन की शीघ्र जांच हेतु एओ किट
- खाद्य तेलों में अपमिश्रक बटर यलो की जांच हेतु एमओ चेक

विषविज्ञान भवन, 31, महात्मा गाँधी मार्ग
लखनऊ-226001, उ.प्र., भारत

VISHVIGYAN BHAWAN, 31, MAHATMA GANDHI MARG
LUCKNOW-226001, U.P., INDIA

Phone:+91-522-2627586, 2614118, 2628228 Fax:+91-522-2628227, 2611547
director@iitrindia.org www.iitrindia.org

एनएबीएल द्वारा रासायनिक एवं जैविक परीक्षण हेतु प्रत्यायित
Accredited by NABL for chemical and biological testing

विषाक्तता परीक्षण: जीएलपी अनुरुप सुविधा
Toxicity Testing: GLP Test Facility